क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों के सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का अध्ययन

(झाँसी एवं ललितपुर की खदानों पर आधारित)

एम.एस.डब्ल्यू में पी०एच०डी० उपाधि हेतु
प्रेषित शोध प्रबन्ध

अनुसंधित्सु

बुद्धप्रिय सिद्धार्थ

एम.एस.डब्ल्यू

शोध निर्देशक

डॉ. जसवन्त नाग

अध्यक्ष(समाजशास्त्र)
पं. जे. एल. नेहरू पी.जी. कालेज
बाँदा
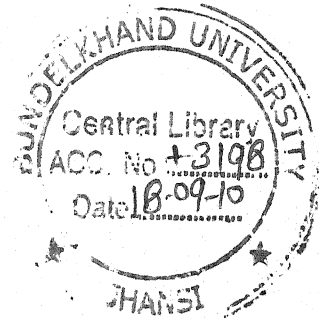
डॉ० बी०आर० अम्बेडकर समाज विज्ञान संस्थान
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी, उ०प्र०
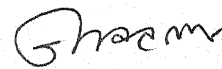
2007

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि शोधार्थी बुद्धप्रिय सिद्धार्थ शोध पंजीकरण संख्या : 2962 बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी ने अपना अनुसंधान कार्य "क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों के सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का अध्ययन (झाँसी एवं ललितपुर की खदानों पर आधारित) एक समाजशास्त्रीय अध्ययन" शोध शीर्षक पर मेरे मार्ग दर्शन में पूर्ण किया गया है। यह भी प्रमाणित किया जाता है कि मेरी पूर्ण जानकारी एवं विश्वास में यह मौलिक कार्य है आपने विभाग में 24 महीने से अधिक समय उपस्थिति होकर अपना अनुसंधान कार्य पूर्ण किया है आप पर बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी का कुछ देय अवशेष नहीं है मैंने यह शोध प्रबन्ध समिति के निर्देशानुसार तथा शोध संक्षिप्तिकी के अनुरूप ही पूर्ण कराया है।

अतः मैं इस शोध प्रबन्ध के मूल्यांकन की प्रवल संस्तुति एवं अनुशंसा करता हूँ।

दिनांक :-...6/10/2007.

(डॉ० जसवन्त नाग)
अध्यक्ष (समाजशास्त्र)
पं. जवाहर लाल पी.जी. कालेज, बाँदा
शोध पर्यवेक्षक

उपोद्घात

प्रस्तुत शोध कार्य करने की प्रेरणा शोधार्थी को उस समय प्राप्त हुई जब मै समाज कार्य में स्नाकोत्तर की फाइनल वर्ष का छात्र था तथा मेरा क्षेत्रीय कार्य के लिए ग्राम-गोरा मछिया में चलने वाले क्रेशर उद्योग में श्रमिकों के मदद करने का अवसर मिला था। सप्ताह के प्रत्येक बृहस्पतिवार एवं शुक्रवार के दिन में खदानों के बीच जाता। उनके परिवार से मिलता। कई की तो मैने केश स्टडी भी की थी। उस धूल तथा तेज ध्वनि के बीच श्रमिकों की कार्य दशाओं ने मुझे प्रवाहित किया कि मैने परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद इन खदानों में काम करने वाले श्रमिकों की समस्याओं तथा क्रेशर उद्योग का उनके स्वास्थ्य पर, पर्यावरण पर तथा कृषि पर पड़ने वाले कुभाव को जानने की जिज्ञासा ने शोध हेतु प्रस्तुत विषय "क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों की सामाजिक एवं आर्थिक दशाओं/स्थितियों का अध्ययन करने हेतु चयन किया। शोध की आवश्यकता इसलिए और अनुभव की गई कि श्रमिकों की कार्यदशाऐं बड़ी जौखिम पूर्ण थी, उनके लिए कारखाना अधिनियम 1948 की कई सुविधा या कल्याणकारी सेवा नहीं दी जाती थी। इसके अलावा क्रेशर की धूल, वायु प्रदूषण, पत्थर की रेत मृदा प्रदूषण तथा अत्याधिक 140 डी. वी. शोर की जौखिम तथा कार्य दश से होने वाले रोग और अन्त में धूल-ध्वनि का कृषि पर सर्वागिनीय कुभाव ही था। उपरोक्त सभी की गहराई से अवलोकन, निरीक्षण, परीक्षण करने हेतु आवश्यक था कि शोध कार्य सम्पन्न किया जाये। क्योंकि श्रमिक जो उत्पादन का अपरिहार्य साधन है, राष्ट्रीय आय का आधारभूत घटक है उसकी अस्वस्थप्रद कार्य दशाऐं आदि कुछ ऐसे मुद्दे थे जिन में झांकें बिना, उनका कल्याण एवं कार्य दशाओं में सुधार का प्रस्ताव करना सम्भव न था।

प्रस्तुत शोध अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नवत हैं :-

1. क्रेशर श्रमिकों की सामाजिक एवं जनांकिकीय विशेषताओं का उल्लेख करना।
2. क्रेशर उद्योग के झाँसी एवं ललितपुर जनपदों की क्रमशः सामाजिक स्थिति पर प्रकाश डालना।
3. क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना।
4. क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
5. क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की राजनैतिक स्थिति का विवेचन करना।
6. क्रेशर उद्योग का मानव स्वास्थ्य-पर्यावरण तथा कृषि पर प्रभाव की समीक्षा करना।
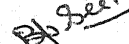
शोध अध्ययन के उपरोक्त उद्देश्यों को दृष्टिगत रखते हुऐ इस शोध प्रबन्ध का अध्यायीकरण निम्न प्रकार किया गया है :-

1. अध्याय प्रथम में शोध अध्ययन की विस्तृत प्रस्तावना एवं उद्देश्यों का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया गया है।
2. अध्याय द्वितीय में शोध पद्धति की विस्तृत व्याख्या की गई है।
3. अध्याय तीन में शोध साहित्य का पुर्नावलोकन प्रस्तुत किया गया है।
4. अध्याय चतुर्थ में झाँसी एवं ललितपुर की सामाजिक स्थिति पर प्रकाश डाला गया है।
5. अध्याय पंचम में उत्तरदाताओं की सामाजिक एवं जनांकिकीय विशेषताओं का विवेचन किया गया है।
6. अध्याय छः में क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की सामाजिक स्थिति का वर्णन किया गया है।
7. अध्याय सप्तम् में क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का उल्लेख किया गया है।

8. अध्याय अष्टम् में क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की राजनैतिक स्थिति की व्याख्या की गई है।

9. अध्याय नवम् में क्रेशर उद्योग का स्वास्थ्य-कृषि एवं पर्यावरण पर प्रभाव का उल्लेख किया गया है।

प्रस्तुत शोधकार्य में शोध समिति के निर्देशानुसार शोध संक्षिप्तकी के अनुरूप पूर्ण किया गया है। सम्प्रति, इसकी उपदेयता एवं महत्व की अनुभूति तो पाठकगण तथा विषय के विद्धान मनीषी ही भली-भाँति कर सकते है कि शोधकर्ता अपने प्रयास में कितना सफल हुआ है।

शोधकर्ता

(बुद्धप्रिय सिद्धार्थ)

आभार

प्रस्तुत शोध बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी से समाजकार्य विषय में 'डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी' की उपाधि प्राप्त करने के लिए प्रस्तुत किया गया। इस शोध प्रबन्ध की आधारशिला रखने हेतु सर्वप्रथम बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की शोध समिति बधाई की पात्र है जिसने प्रथम दृष्टता शोध की रूप रेखा अनुमोदित करके अनुसंधान कार्य हेतु मार्ग प्रशस्त कर मेरा उत्साहवर्द्धन किया है।
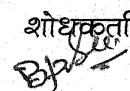
गुरूदेव डॉ० जसवन्त 'नाग' अध्यक्ष (समाजशास्त्र) पं० जे० एल० नेहरू पी०जी० कालेज, बाँदा का जीवन भर आभारी रहूँगा जिन्होंने अपने चरणों में बैठा कर शोध अध्ययन करने की स्वीकृति प्रदान कर महान कृपा की है।

गुरूदेव डॉ० आर० पी० निमेष, सहायक प्रोफेसर समाजकार्य डॉ० बी० आर० अम्बेडकर समाज विज्ञान संस्थान बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, परिसर झाँसी, जिनके द्वारा प्रस्तुत शोध कार्य को पूर्ण कराने के तहत जो परामर्श दिए गये वावजूद सघन कार्य में व्यस्त होते हुऐ उनके सहयोग के बिना शोध कार्य पूर्ण करना मेरे लिए कठिन ही नहीं अपितु दुष्कार्य था। मैं उनका आजीवन आभारी रहूँगा।

मैं श्री हरेन्द्र सिंह (सी०जे०एम०) ललितपुर, एवं डॉ० अनिल कुमार विपिन बिहारी कालेज, झाँसी व डॉ० सूबेदार यादव नेहरू महाविद्यालय ललितपुर, कि जिन्होंने मुझे उच्च शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश को प्रेरित किया।

श्री बजरंग सिंह खनिज अधिकारी ललितपुर, एवं झाँसी के खनिज अधिकारी श्री यादव, सिटी मजिस्ट्रेट श्री राजाराम जी, जिन्होंने मुझे "क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों के सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का अध्ययन" (झांसी एवं ललितपुर की खदानों पर आधारित) पर शोध कार्य करने में मेरी भरपूर सहायता की।

अन्त में मैं अपने पूज्य पिता जी एवं माता जी तथा भाई सिद्धार्थप्रिय सिद्धार्थ, बहिन कु०चन्द्रकान्ति वर्मा, श्री मती शशि सिद्धार्थ, भान्जे कुलदीप पचौरिया व सुन्दर सिंह ललितपुर का आभारी रहूँगा जिनके उत्साहवर्द्धन से मैं अभिभूत रहा हूँ।

शोधकर्ता

(बुद्धप्रिय सिद्धार्थ)

विषय वस्तु

संलग्न -तालिकाओं की सूची

क्र0 सं0	अध्याय	तालिका नं0	तालिकाओं का शीर्षक सम्बन्धी विवरण	पृष्ठ संख्या
1	5	1	उत्तरदाताओं का आयुवार विवरण	161
2	5	2	उत्तरदाताओं का लिंगवार विवरण	162
3	5	3	उत्तरदाताओं का जातिवार वर्गीकरण	163
4	5	4	उत्तरदाताओं के परिवार का विवरण	164
5	5	5	उत्तरदाताओं का वैवाहिक स्तर	164
6	5	6	उत्तरदाताओं के विवाह का स्वरूप	165
7	5	7	उत्तरदाताओं की आवासीय स्थिति	166
8	5	8	उत्तरदाताओं की पुत्रियों के विवाह की आयु	167
9	5	9	उत्तरदाताओं के पुत्रों के विवाह की आयु	168
10	6	10	उत्तरदाताओं के आवास में सुविधाएं	177
11	6	11	उत्तरदाताओं द्वारा पहने जाने वाले वस्त्र	178
12	6	12	उत्तरदाताओं की संस्थाओं में पद स्थिति	179
13	6	13	उत्तरदाताओं की सामाजिक पहिचान	180
14	6	14	उत्तरदाताओं की स्वतंत्रता सम्बन्धी अनुसूची	181
15	6	15	उत्तरदाताओं की सामाजिक सुरक्षा की अनुसूची	182
16	6	16	उत्तरदाताओं का रहन-सहन सम्बन्धी अनुसूची	183
17	6	17	उत्तरदाताओं की जीवन गुणवत्ता सम्बन्धी अनुसूची	184
18	6	18	उत्तरदाताओं के मनोरंजन के साधन	185
19	6	19	उत्तरदाताओं के सूचना स्रोत	186
20	6	20	उत्तरदाताओं के आवागमन के साधन	187

अध्याय - 1

प्रस्तावना

---

1. शोध विषय के अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व :

अतिशय प्राकृतिक सम्पदा का दोहन आज के मानव की नियति बन चुकी हैं इस दोहन के जहाँ अनेक लाभ है वहीं इससे अनेक प्रकार की हानियाँ भी है जिसे हम प्रत्यक्षतः देख सकते हैं । जल जंगल और जमीन का हम आज अत्याधिक दुरूपयोग कर रहे हैं परिणामतः मानव जीवन पूरी तरीके से प्रभावित हो गया है औद्योगीकरण तथा नगरीकरण की प्रक्रियाओं ने इस प्रकार के दोहन को बढ़ाने में सहयोग प्रदान किया है इसके परिणाम स्वरूप जहाँ एक ओर भौतिक सम्पदा वैभव एवं सुखों की वृद्धि हुई है वही प्राकृतिक विपदा के शिकार भी हुये हैं। जमीन एवं पहाड़ों का खनन जहाँ एक ओर भूचाल को नियंत्रित करता है वहीं उससे उत्पन्न प्रदूषण मानव जीवन को प्रभावित करता हैं ऐसे में जहाँ एक ओर वैभव एवं सुख हैं वहीं दूसरी ओर दुखों का अम्बार लगा हुआ है ।

प्रस्तुत अध्ययन प्राकृतिक सम्पदा के दोहन विशेषकर पर्वतों के उत्खनन के दुष्परिणामों पर आधारित है । पत्थर खदानों में कार्यरत श्रमिकों पर इस दोहन का प्रभाव पड़ रहा है इसका अध्ययन ही अभिष्ठ है । उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड क्षेत्र में इस प्रकार का कार्य विस्तार से हो रहा हैं अतः यहाँ इसके प्रभाव को भली-भांति जाना जा सकता है । श्रमिकों एवं यहाँ निवास करने वालों पर वायु, जल, प्रदूषण का क्या प्रभाव पड़ रहा हैं उसके क्या दुष्परिणाम उत्पन्न हो रहे हैं यह वर्तमान अध्ययन का प्रतिफल विषय है । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है यदि वही स्वस्थ्य नहीं है तो समाज कैसे स्वस्थ्य रह सकता है । इस प्रकार के उत्खलन से

न केवल श्रमिक वरन पास-पड़ोस का वातावरण प्रभावित होता है एवं विभिन्न रोगों से ग्रसित होता जा रहा है जिसका प्रभाव कार्य दक्षता पर पड़ता है। अतः उसके द्वारा किये गये कार्यो का मनोबाछित परिणाम नहीं प्राप्त हो रहा है।

इस प्रकार के अध्ययन से यह स्पष्ट होने की सम्भावना है इस प्रकार के उद्योग के दुष्परिणाम क्या ऐसे उद्योगों को परिष्कृति कैसे किया जा सकता है जिससे समाज उन्नति के मार्ग पर प्रशस्त हो सके। बुन्देलखण्ड में ऐसे अध्ययनों का सर्वाधिक अभाव है।

इस शोध अध्ययन के निदर्श झाँसी-ललितपुर के क्रेशर उद्योगों में कार्यरत श्रमिक हैं जो जाड़ों तथा घोर गर्मी की ऋतुओं में कठोर श्रम कर भवन निर्माण में अपनी महती भूमिका का निर्वहन करते हैं। उत्पादन की दृष्टि से श्रमिक चाहे कृषि क्षेत्र के हो, औद्योगिक क्षेत्र के हो अथवा भवन निर्माण का क्षेत्र, राष्ट्रीय आय में इनका महत्वपूर्ण योगदान होता है। परन्तु राष्ट्रीय स्तर का होने वाला विकास, कल्याण का लाभ इनको प्राप्त नहीं हो पाता, ये आज भी सदैव भी भाँति गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने को बाध्य हैं। इनके विकास एवं कल्याण पर किया गया व्यय निवेश ही होता है क्योंकि ये श्रमिक उत्पादन के रीढ़ होते हैं।

क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों का समाज तथा राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान है। किसी भी अर्थव्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिये राष्ट्रीय उत्पादन की निश्चयात्मक इकाई श्रमिक ही हैं। समाज की इन महत्वपूर्ण इकाईयों की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों में अधिकांश दरिद्र, अज्ञानी तथा अशिक्षित हैं। क्रेशर मालिक इनसे अस्वास्थ्यकर परिस्थितियों में कार्य कराकर इनका शारीरिक, आर्थिक तथा मानसिक शोषण करते हैं। गरीबी तथा अज्ञानता के कारण इन श्रमिकों को इन परिस्थितियों में कार्य करने को मजबूर होना पड़ता है और इस तरह उनका शोषण होता रहता है। इन श्रमिकों को शोषण से बचाने के

लिये इनका अध्ययन करना अनिवार्य है। क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों का शोध अध्ययन इसलिये भी आवश्यक है क्योंकि क्रेशर उद्योग का पर्यावरण स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यन्त खतरनाक कहा जा सकता है। इनमें से अधिकांश श्रमिक अपने जीवनकाल को भी पूरा नहीं कर पाते हैं और काल के गाल में समा जाते हैं। इन खतरनाक परिस्थितियों में कार्य करने को विवश इन श्रमिकों के सामाजिक तथा आर्थिक उत्थान हेतु इनका अध्ययन आवश्यक है।

श्रमिकों की कार्यक्षमता के कारण ही भारत का भौतिक तथा सामाजिक विकास सम्भव हो सका है। व्यक्ति की कार्यक्षमता पर उसकी सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति का ही प्रभाव पड़ता है। अतः इस दृष्टिकोण से भी इन श्रमिकों का अध्ययन आवश्यक है।

श्रमिकों की महिलायें अशिक्षित होती हैं तथा अपने अधिकारों के प्रति जरा भी जागरूक नहीं होती है। यहाँ की महिलाओं को क्रेशर मालिकों के शोषण का भी शिकार होना पड़ता है। अतः महिलाओं के समुचित उत्थान के लिये इनका अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है।

क्रेशर श्रमिकों के कल्याण के लिये सरकार द्वारा अनेक योजनाऐं चलायी जा रही हैं परन्तु इनका लाभ इन श्रमिकों तक नहीं पहुँचता है बल्कि क्रेशर मालिक इनका भरपूर शोषण करते हैं। श्रमिकों के कल्याणार्थ तथा सरकारी योजनाओं का समुचित लाभ इन श्रमिकों तक पहुँचाने के लिये इनका अध्ययन करना अनिवार्य है।

श्रम ही सृष्टि का मूल है। प्रत्येक देश के आर्थिक विकास में श्रम की एक महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। प्राकृतिक सम्पत्ति की प्रचुरता से सम्पन्न देश भी पर्याप्त एवं कुशल श्रम के अभाव में मनोवांछित प्रगति नहीं कर सकता। भारत में श्रमिकों ने आदिकाल से देश के आर्थिक निर्माण में अपने को लगाकर विशाल बनों को साफ करके कृषि व निवास के लिए भूमि उपलब्ध की, नदियों पर विशाल बांध

बनाये। रेलों, सड़कों व नहरों का निर्माण किया, वायुयान चलाये, कारखाने, बन्दागाहों और विशाल विद्युत गृहों की रचना कीं खानों को खोदकर वसुन्धरा के गर्भ से उसकी छिपी हुई सम्पत्ति को बाहर निकाला एवं कृषि, कला, व्यापार परिवाहन का विकास किया वास्तव में श्रम ही समस्त सम्पत्ति का स्रोत है एवं प्रकृति के बाद यही उत्पादन के लिए सामग्री प्रदान करता है और उसे सम्पत्ति में बदलता है। कार्ल मार्क्स ने "श्रम को सर्वाधिक महत्व दिया एवं पूँजी को मानवीय शोषण के लिये उत्तरदायी ठहराया।"[1] राष्ट्रपिता बापू के अनुसार भी 'श्रम की शक्ति' ही श्रमिकों में आत्म गौरव एवं सम्मान की भावना प्रेरित करती है। श्रम के माध्यम से ही प्रजातांत्रिक समाजवाद के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

इनके लोक कल्याण के लिए समय-समय पर केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों ने कहने को तो अनेक कार्यक्रम तथा योजनाओं का क्रियान्वयन किया है परन्तु उसका लाभ इन्हें आज भी आत्मसात नहीं हो पाया है क्योंकि ये अशिक्षित, दरिद्र, अन्धविश्वासी तथा भाग्यवादी जो है। इस दृष्टि से भी यह शोध विषय अध्ययन की दृष्टि से अत्याधिक महत्वपूर्ण है। झाँसी में यह क्रेशर उद्योग श्रमिकों के ऊपर प्रथम अध्ययन है इस सन्दर्भ में भी इसके निष्कार्षो की मौलिकता होगी। इस शोध अध्ययन के निष्कर्ष उद्योग विभाग के अधिशाषियों नियोजकों के लिए लाभकारी होंगे ताकि वे इन श्रमिकों की कार्य दशाओं में अनुकूल परिवर्तन कर सके। श्रम विभाग के मंडलीय श्रमिक निदेशक को भी इस शोध के बहुमूल्य तथ्य लाभकारी होंगे जिनके प्रकाश में वे सेवा नियोजक को श्रम कानूनों को क्रियान्वयन करा सकें। समाजकार्य के क्षेत्रों हेतु भी इस शोध के तथ्य लाभकारी होंगे जिनके उद्धार हेतु वे समाज कार्य की योजना बना कर उनकी समस्याऐं हल कर सकेंगे। अनुसंधान कर्ताओं को भी इस शोध के निष्कर्ष उपकल्पनाओं को निर्मित करने में

---

1. मार्क्स कार्ल एण्ड ऐन्जिल (1848): डेसकेपीट, पृष्ठ-320

सहायक होंगे। ताकि भविष्य में इन श्रमिकों के बारे में अन्य शोध अध्ययन किये जा सके।

2. शोध विषय की अवधारणा :

प्रस्तुत शोध विषय 'क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की सामाजिक आर्थिक स्थिति का समाजशास्त्री अध्ययन', झाँसी तथा ललितपुर जनपद की खदानों पर आधारित है। इस शोध अध्ययन में विषय का आशय यह है

1. क्रेशर उद्योग : वह उद्योग जहाँ श्रमिकों का समूह पठारी क्षेत्र में एक यंत्र के प्रयोग से (क्रेशर) पठार को तोड़-फोड़ कर जीरो ½ इंच तथा एक इंच के छोटे टुकड़ों में परिवर्तन (उत्पादन) करता है ताकि उत्पादित सामग्री को भवन निर्माण में प्रयोग किया जा सके विपरण हेतु ढेर लगाना ताकि बाहनों द्वारा उसके माँग ग्राहकों तक पहुँचाया जा सके। उक्त उत्पादन कार्य में संलग्न श्रमिकों की वास्तविक एवं आर्थिक स्थिति की विवेचना करता है।
2. श्रमिक : वह मानव समूह जो अपनी चेष्टाओं तथा क्रेशर यंत्र की सहायता से पत्थर के टीलों को गिट्टी के टुकड़ों के रूप में परिवर्तित करता है तथा इसके बदले में पारिश्रमिक क्रेशर उद्योग मालिक से नगदी के रूप में प्राप्त करता है।
3. सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति : का आशय श्रमिकों के वैवाहिक स्तर, शिक्षा, आवासीय सुविधा, मनोरंजन के साधनों के साथ मासिक आय, रहन-सहन का स्तर, क्रय शक्ति, काम की अवधि सामाजिक स्तरीकरण तथा भौतिक रूप से, मानसिक रूप से तथा सामाजिक रूप से कुशल क्षेत्र की स्थिति एवं सामाजिक गतिशीलता, अन्तःक्रिया और प्रस्थिति एवं भूमिका तथा पहिचान से है।

"बोलचाल की भाषा में 'श्रम' से आशय उस चेष्टा या मेहनत से होता है जो कि किसी कार्य को करने हेतु की जाती है। यह चेष्टा मनुष्य करें या पशु, सदैव

'श्रम' कहलाती है, जैसे हम परस्पर कहते सुनते हैं कि अमुक विद्यार्थी अथवा वकील या कृषक बहुत परिश्रम करता है, बैल बहुत मेहनत कर रहे हैं, इत्यादि। इसके अतिरिक्त, चेष्टा चाहे पैसा कमाने की दृष्टि से की जाये अथवा स्वास्थ्यवर्द्धन के लिए, या स्नेह के कारण, इसे 'श्रम' ही कहेगें। संक्षेप में किसी भी कार्य को करने से जो भी चेष्टा होती है, वही साधारण बोलचाल में 'श्रम' कहलाती है।''[1] परन्तु 'श्रम' का यह बहुत ही व्यापक अर्थ है ; अर्थशास्त्र में श्रम का अर्थ इतना व्यापक नहीं है। प्रो. एस.ई. थॉमस के शब्दों में, "श्रम मनुष्य का वह शारीरिक व मानसिक प्रयत्न है, जो प्रतिफल की आशा से किया जाता है।" इसी प्रकार, अर्थशास्त्री मार्शल के अनुसार श्रम का अर्थ मनुष्य के आर्थिक कार्यो से है, चाहे वे शारीरिक हों या मानसिक। पीगू के मतानुसार परिश्रम (या सेवा), जिसे द्रव्य द्वारा मापा जा सकता है, श्रम कहलाता है।

(क) भारतीय औद्योगिक श्रम की आर्थिक सामाजिक विशेषतायें :

भारत में औद्योगिक श्रमिक वर्ग का उदय पाश्चात्य देशों की तुलना में, भिन्न परिस्थितियों के अन्तर्गत हुआ है ; अतः उनकी कुछ उल्लेखनीय विशेषतायें हैं, जो इस प्रकार है

1. **एकता का अभाव** - भारतीय श्रमिकों में एकता का सर्वथा अभाव है। इसका मूल कारण यह है कि वे देश के सभी भागों से और समाज के सभी वर्गो से आए हुऐ होते है। परिणामस्वरूप मजदूरों का वर्ग एक ऐसा विचित्र समुदाय बन गया है, जिसमें भिन्न-भिन्न धर्मो के विभिन्न भाषाऐं बोलने वाले, विभिन्न रहन-सहन एवं रीति-रिवाज के लोग होते हैं। इन अनेक विभिन्नताओं के कारण श्रमिक वर्ग में संगठन नहीं है।

2. **अनियमित उपस्थिति** - एक नियमित व समर्पित श्रमिक उसे कहेंगे जो काम पर बराबर बना रहता है तथा जिसने गांव से अपने व्यापक सम्बन्ध तोड़ लिए हैं।

---

1. सक्सेना, एम.सी. (1996:5): श्रम समस्याऐं एवं सामाजिक सुरक्षा रस्तोगी पवलीकेशन, शिवाजी रोड, मेरठ

किन्तु भारतीय श्रमिक कारखाने के निकटवर्ती गांवों अथवा अन्य राज्यों से काम करने के लिये नगरों में आते हैं। अतः अपने गाँवों के प्रति उनका आकर्षण बना रहता है। समय-समय पर वे गाँव जाते रहते हैं। कृषि क्षेत्रों से आने वाले श्रमिक कृषि मौसम में अथवा फसल पर जब गाँव में अधिक काम होता है, अपना काम छोड़कर चले जाते हैं। इससे उनकी उपस्थिति कारखाने में अनियमित रहती है। निकटवर्ती गाँवों से आने वाले श्रमिक प्रायः प्रति मास ही अपने गाँव जाया करते हैं, जिससे कारखाने के काम में बड़ी बाधा पड़ती है।

3. अज्ञानता एवं अशिक्षा - भारत की सम्पूर्ण जनसंख्या में से केवल 35 प्रतिशत व्यक्ति पढ़े लिखे हैं। इन व्यक्तियों में औद्योगिक श्रमिक का भाग तो नाम मात्र को ही होगा। सामान्य शिक्षा का अभाव होने के कारण श्रमजीवी पूर्ण उत्तरदायित्व के साथ अपने कर्तव्यों का निष्पादन नहीं कर पाते। साथ ही, जहाँ भारतीय श्रम जीवियों में सामान्य शिक्षा का अभाव है, वहाँ औद्योगिक शिक्षा का अभाव होना आश्चर्य की बात नहीं। यही कारण है, कि श्रमजीवी लापरवाही के साथ यंत्रों व उपकरणों का उपयोग करते हैं तथा अपने काम का महत्व नहीं समझते। श्रमिकों की अशिक्षा व निर्धनता का प्रमुख कारण भारत में शिक्षण संस्थाओं का अभाव, दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली, तकनीकी व वोकेशन शिक्षा अभाव, उद्योग धन्धों के विकास में कमी, घरेलू उद्योग धन्धे का अभाव तथा धन का असमान वितरण है।

4. गरीबी रहन-सहन का निम्न स्तर - भारतीय श्रमजीवियों के रहन-सहन का स्तर अत्यन्त गिरा हुआ है। इसका प्रमुख करण यह है कि उनको पारितोषण बहुत कम मिलता है। कोई भी व्यक्ति, जब तक उसके पास अपनी समस्त आवश्यकताओं की संतुष्टि हेतु साधन न हों, अपने रहन-सहन का स्तर ऊँचा नहीं कर सकता।

5. भारतीय श्रमिकों की पूर्ति उद्योगों की आवश्यकतानुसार न होना - श्रमिकों की इस विशेषता के लिए अनेक कारण उत्तरदायी हैं। प्रथम, भारतीय श्रमिकों के कार्य में स्थायित्व का अभाव है। किसी भी समय उन्हें कार्य से पृथक किया जा सकता है। अतः एक स्थायी श्रम-शक्ति का विकास नहीं हो सका है। काम न मिलने की दशा में उन्हें विवश होकर गाँवों को वापस जाना पड़ता है। यही कारण है कि कृषि से सम्बन्ध बनाये रखना उनके लिए बहुत जरूरी है।

6. कार्य क्षमता का निम्न स्तर - भारतीय श्रमिकों की एक अन्यय विशेषता यह है कि उनकी कार्यक्षमता का स्तर अन्य देशों के श्रमिकों की तुलना में बहुत कम है। इसका प्रमुख कारण वे परिस्थितियाँ है जिनके अन्तर्गत उन्हें काम करना पड़ता है, जैसे प्रतिकूल जलवायु, निम्न पारितोषण, काम के अत्यधिक घण्टे, प्रतिकूल कार्य दशायें आदि।

7. भाग्यवादिता - भारतीय श्रमिक अपने जीवन के सुख-दुख को भाग्य की देन समझते हैं। वे अपनी उन्नति के लिए कर्म या पुरूषार्थ करने का प्रयत्नशील नहीं होते।

8. सामाजिक व धार्मिक दृष्टिकोण - भारतीय श्रमिकों की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता उनका विशेष सामाजिक व आर्थिक दृष्टिकोण है। उदाहरण के लिये, जाति प्रथा यहाँ श्रम की गतिशीलता में बाधक है। यही नहीं यह श्रम के संगठित रूप से विकास में भी बाधक है। प्रायः देखा जाता है कि विभिन्न जातियों के श्रमिक एक सामान्य अधिकार की माँग के लिये भी संगठित नहीं हो पाते। उनके सामाजिक व धार्मिक उत्तरदायित्व इतने अधिक होते हैं कि उनको निभाने में ही उनका बहुत अधिक समय, शक्ति व द्रव्य नष्ट हो जाता है।

9. न्यून गतिशीलता - भारतीय औद्योगिक श्रम की अन्य महत्वपूर्ण विशेषता उसकी गतिशीलता कम होना है। एक व्यवसाय से दूसरे व्यवसाय में तथा एक स्थान से दूसरे स्थान को जाने में भारतीय श्रमिक प्रायः असमर्थ रहता है। जन्म

स्थान से विशेष अनुराग, भाग्यवादिता, अशिक्षा, अज्ञानता, भौगोलिक बाधायें, औद्योगीकरण की धीमी प्रगति, विभिन्न, भाषायें, धर्म व जातियाँ, परिवहन व संदेशवाहन के साधनों की कमी, महत्वाकांक्षा का अभाव तथा औद्योगिक केन्द्रों में आवास की कठिनाई आदि, इस विशेषता के प्रमुख कारण है।

10. प्रवासी प्रवृत्ति - हमारे अधिकांश औद्योगिक श्रमिक नगरों में काम करने गाँवों से आते हैं। भूमि पर बढ़ती हुई जनसंख्या का भार, अनार्थिक कृषि, गाँवों में बेरोजगारी, सामाजिक अयोग्यतायें, सम्मिलित परिवार, प्रथा के दोष, महाजनों द्वारा शोषण आदि घटक हमारे ग्रामवासियों को नगरों में आजीविका की खोज के लिये ढकेलते हैं परन्तु गाँव के वातावरण में पले होने के कारण ग्रामीण जीवन से ही उन्हें अधिक अनुराग होता है अतः वे शीघ्र अवसर मिलने पर पुनः गाँव को वापिस लौट जाने को लालायित रहते हैं।

श्रम का वर्गीकरण - श्रम का तीन प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है

1. कुशल एवं अकुशल श्रम - कुशल श्रम से तात्पर्य उस श्रम से है जिसे करने हेतु विशिष्ट ज्ञान एवं प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है जैसे- इन्जीनियर, डॉक्टर अथवा मशीन चालक का श्रम। इसके विपरीत, अकुशल श्रम वह है जिसे करने हेतु किसी विशेष ज्ञान एवं प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती, जैसे घरेलू नौकर, चपरासी या कुली का श्रम। अकुशल श्रमिकों की पूर्ति प्रायः माँग की अपेक्षा अधिक होती है। इसी कारण उन्हें कम प्रतिफल (मजदूरी) प्राप्त होता है।

2. मानसिक तथा शारीरिक श्रम - वह श्रम जिसमें शरीर की अपेक्षा मस्तिष्क या बुद्धि का अधिक प्रयोग होता है, 'मानसिक श्रम' कहलाता है, जैसे शिक्षक, वकील, इन्जीनियर या परामर्शदाता के कार्य। इसके अतिरिक्त वह श्रम जिसमें विवेक की अपेक्षा, शरीर का अधिक प्रयोग होता है, शारीरिक श्रम कहलाता है, जैसे कुली, घरेलू नौकर आदि के कार्य। कोई श्रम न तो पूर्णतया मानसिक होता है और न पूर्णतया शारीरिक वरन् प्रत्येक श्रम में मानसिक और

शारीरिक दोनों प्रकार के श्रम का प्रयोग होता है, अन्तर केवल मात्रा का है। अन्य शब्दों में कुछ श्रमों में मस्तिष्क की प्रधानता होती है जबकि कुछ में शरीर की।

3. उत्पादक एवं अनुत्पादक श्रम - जो श्रम उपयोगिताओं का सृजन करता है तथा जो अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफल होता है, उसे उत्पादक और इसकी विपरीत दशाओं में अनुत्पादक कहलाऐंगा। अर्थशास्त्री मार्शल की यही धारणा है।

4. श्रम की कार्य दशाओं पर प्रभाव - श्रम को श्रमिक से पृथक नहीं किया जा सकता। यह एक ऐसी विशेषता है जिसके कारण श्रमिक के कार्य की दशायें बहुत प्रभावित होती हैं। एक श्रमिक को निर्जीव वस्तु के समान चाहे जो कार्य करने के लिये विवश ही किया जा सकता और न उससे लगातार एवं लम्बी अवधि तक काम लिया जा सकता है। उसका कार्य करने का वातावरण अच्छा होना चाहिये।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि श्रमिक की विशेषतायें श्रम की माँग पूर्ति, कार्य के घण्टे, मजदूरी, सरकारी नीति, इत्यादि को प्रभावित करती है। इन विशेषताओं के कारण ही श्रम के प्रतिफल का अलग से अध्ययन करने की आवश्यकता पड़ती है।

(ग) श्रम समस्याऐं

कोई भी अर्थ-व्यवस्था हो - स्वतंत्र, मिश्रित या समाजीकृत, श्रम समस्यायें सभी में विद्यमान होती हैं।यह अवश्य है कि पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में श्रम-समस्यायें अधिक जटिल एवं विविधक होती हैं, जबकि एक समाजीकृत अथवा मिश्रित अर्थव्यवस्था में वे उतनी जटिल एवं विधि नहीं होती। हमारा देश मिश्रित अर्थ व्यवस्था का जीता जागता उदाहरण है। यहाँ केवल निजी क्षेत्र में ही नहीं वरन् सार्वजनिक अथवा सरकारी क्षेत्रों में भी अनेक कारखाने व उद्योग धन्धे हैं। उनकी श्रम व्यवस्था का अध्ययन करने से यह स्पष्ट पता लगता है कि कोई भी श्रम समस्याओं से खाली नहीं है। जैसे समाजवादी देशों में श्रम समस्यायें उसी प्रकार विद्यमान हैं जिस प्रकार कि वे अमेरिका जैसी पूँजीवादी अर्थ व्यवस्था या भारत

जैसी मिश्रित अर्थ व्यवस्था वाले देशों में हैं। राष्ट्रीकरण कोई संजीवनी नहीं है जो श्रम समस्याओं को मूलतः नष्ट कर दें। वास्तव में श्रम समस्याओं की जड़ें गहरी हैं; उनका सम्बन्ध मानव तत्व से है।

श्रम समस्यायें ही सामाजिक समस्यायें हैं - एक कृषि अर्थ व्यवस्था में श्रम से सम्बन्धित समस्यायें अधिक जटिल नहीं हुआ करतीं। किन्तु औद्योगिक अर्थ व्यवस्था में वे बहुत जटिल होती हैं। आधुनिक युग में समाज की समृद्धि एवं प्रगति औद्योगिक प्रगति पर निर्भर करती है। अतः श्रम समस्यायें मात्र उत्पादन के क्षेत्र तक समस्याओं को सामाजिक समस्यायें माना जा सकता है, जो प्रायः तब उत्पन्न हो जाती हैं जबकि सामान्य उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सहयोगपूर्ण अभाव होता है।

(घ) श्रम समस्याओं का वर्गीकरण

श्रम समस्याओं का अध्ययन निम्नांकित चार प्रमुख शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है -

1. **मजदूरी सम्बन्धी समस्यायें** - मजदूरी का आशय उत्पादन कार्य में श्रम की सेवा के लिये चुकाये जाने वाले पुरस्कार से है। मजदूरी ही वह धुरी है जिस पर अधिकांश श्रम समस्यायें चक्कर काटती है। यह सेवायोजक के लिये लागत के रूप में होती हैं किन्तु श्रमिक के लिये आय के रूप में। मजदूरी ही श्रमिक के जीवन निर्वाह का मुख्य स्रोत है। उसका कल्याण और उसकी कुशलता मजदूरी पर ही निर्भर करती है। मजदूरी उसके तथा उसके परिवार के लिये प्रमुख आकर्षण है। इसी कारण इसने श्रम के क्षेत्र में अनेक जटिल अर्थ प्राप्त कर लिये हैं। सेवायोजक और श्रमिक उसे अलग-अलग दृष्टिकोणों से देखते हैं और इसकी महत्ता व उपयोगिता को मापने के उसके पैमाने भी अलग-अलग है।

श्रमिकों की मजदूरी बढ़ाने के लिये प्रयास किये जा रहे हैं। 1948 में न्यूनतम मजदूरी अधिनियम पारित कराके मजदूरी में असमानता को दूर करने का प्रयास किया गया है। भारत सरकार द्वारा नियुक्त उचित मजदूरी समिति ने जीवन स्तर

मजदूरी, उचित मजदूरी तथा न्यूनतम मजदूरी को परिभाषित करके यह अनुशंसा की कि उचित मजदूरी का स्तर न्यूनतम मजदूरी व जीवन स्तर मजदूरी के बीच में होना चाहिये।

2. संघवाद सम्बन्धी समस्यायें - सामूहिक सौदेबाजी श्रम संघवाद का प्रमुख कृत्य है, जिसके अन्तर्गत श्रमिकों द्वारा एक उत्तम मजदूरी एक उत्तम कार्य दशा, एक उचित कार्य अवधि, रोजगार की सुरक्षा, आदि की माँग की जाती है। इन अधिकारों के लिये माँग का विकास होने में एक लम्बा समय लगा है। अब तो ये औद्योगिक सम्बन्धों की संहिता का रूप ले चुके हैं। संघवाद का चरम परिणाम अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ की स्थापना है। श्रमिक संघों से केवल अधिकारान्तर्गत और अधिकरोत्तर क्रिया कलापों की ही अपेक्षा नहीं की जाती वरन् उन्हें देश की राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों के प्रति सजग रहना पड़ता है।

3. रोजगार की सुरक्षा से सम्बन्धित समस्यायें - बेकारी, अर्द्ध बेकारी, छिपी हुई बेकारी और रोजगार ये सब यथार्थ में औद्योगिक समस्यायें हैं और हमारी नगरीय जनसंख्या में इसका अधिक प्रसार है। हाँ अल्प रोजगार (या अर्द्ध बेकारी) कृषिज्ञ और अर्थ व्यवस्था में बहुत प्रबल है। बेकारी की धारणा ही एक श्रमिक के सुख को हानि पहुँचाने वाली है जबकि वास्तविक बेकारी तो सामाजिक दोषों और शोषण का प्रमुख स्रोत है। हमारी पीढ़ी वस्तुतः मजदूरी पर निर्भर रहने वालों की है। मजदूरों की आकांक्षायें, योजना क्रिया और यहाँ तक कि रहन-सहन का तरीका भी मजदूरी से सम्बद्ध है। यदि किसी श्रमिक को रोजगार सम्बन्धी सुरक्षा प्राप्त नहीं है, तो उसके परिवार के भविष्य, बालकों की शिक्षा एवं उनके समुदाय के कल्याण पर बुरा प्रभाव पड़ेगा।

4. सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी समस्यायें - सामाजिक सुरक्षा एक व्यापक शब्द है। सामाजिक बीमे और सामाजिक सहायता की योजनायें तथा कुछ व्यापारिक बीमे की योजनायें इसकी परिधि में आती है। एक कल्याणकारी राज्य में

प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक न्याय का आश्वासन होता है और श्रमिक इसका अपवाद नहीं हैं। हमारे औद्योगिक समाज के सामने अनेक खतरे हैं जिनसे अभी तक कृषक जीवन लगभग बचा हुआ था। उदाहरणार्थ - बेकारी, अस्थाई अक्षमता, बीमारी, परिवार के कमाऊ व्यक्ति की अकाल मृत्यु जैसी घटनायें, श्रमिक और उसके परिवार को अस्त-व्यस्त कर देती है। संयुक्त परिवार, ग्राम समाज और जाति प्रथा जैसी प्राचीन संस्थायें एक असमर्थ व्यक्ति को सहारा देने के लिये अब सक्रिय नहीं रह गई है। बदलते हुये सामाजिक ढाँचे में इन संस्थाओं के बजाय राज्य ने परम महत्व प्राप्त कर लिया है। राज्य से यह अपेक्षा की जाने लगी है कि वह अपने प्रत्येक सदस्य को सुरक्षा प्रदान करेगा। सामाजिक दृष्टि से भी सामाजिक सुरक्षा की आवश्यकता होती है, क्योंकि जब तक श्रमिकों को रहन-सहन के अच्छे साधन उपलब्ध न किये जायेंगे और उन्हें विभिन्न विपत्तियां से न बचाया जायेगा, तब तक सामाजिक विघटन और राष्ट्रीय आय की हानि को रोकना कठिन होगा। बेकारी एक अन्य औद्योगिक दोष है, जो कि भीख माँगने, बालकों से काम लेने, नीची मजदूरी, मद्यपान, निराश्रयता एवं व्यभिचारिता को जन्म देता है। औद्योगिक दुर्घटनायें, औद्योगिक बीमारियाँ, बृद्धावस्था, हड़ताल, तालेबन्दी, आदि अन्य दोष है, जो कि अत्यधिक ऋणग्रस्तता, कार्यक्षमता की हानि, उत्पादकता में कमी, जीवन स्तर में गिरावट जैसी समस्याओं को जन्म देते हैं। अतः समाज की शांति समृद्धि और स्थिरता के लिये सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था करना एक अनिवार्यता है।

(ड) श्रम समस्यायें उत्पन्न होने के कारण :-

श्रम समस्याओं के अभ्युदय के कारण निम्नांकित है।

1. **आर्थिक कारण** - पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत श्रमिक तथा 'श्रम' के क्रेता (अर्थात मिल मालिक) के बीच प्रायः संघर्ष बना ही रहता है। इन दोनों वर्गों के बीच रस्सीकसी का प्रमुख कारण दोनों के हितों में

सामंजस्य का अभाव होना है। उद्योग विशेष द्वारा निर्मित माल अथवा राष्ट्रीय आय में से श्रमिक तथा मालिक दोनों ही अपने लिये अधिक से अधिक भाग प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, क्योंकि आय के भाग पर ही उनका जीवन स्तर तथा अन्य जीवनोपयोगी सामग्री की उपलब्धता निर्भर करती है। फलस्वरूप ऐसी अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत दोनों ही वर्ग अपनी-अपनी आमदनी बढ़ाने की कोशिश करते हैं। जब श्रमजीवी अपनी आय बढ़ाने के लिये प्रयास करते हैं, तो उन्हें पूँजीपतियों, लेनदारों, अंशधारियों तथा प्रबन्धकों, आदि द्वारा उठाई गई अनेक आपत्तियों का सामना करना पड़ता है। ये लोग अपने निजी स्वार्थ के कारण यह कभी नहीं चाहते कि श्रमिकों को राष्ट्रीय आय में अधिक भाग दिया जाये। श्रम तथा पूँजी के बीच संघर्ष का प्रमुख कारण उनके आर्थिक हितों का आपस में टकराना है। इस टक्कर का मुख्य कारण मजदूरी की दर का न्यायोचित ढंग से निर्धारित न होना है।

2. मनोवैज्ञानिक कारण :- श्रम तथा पूँजी के पारस्परिक संघर्ष के लिये कुछ मनोवैज्ञानिक कारण भी उत्तरदायी है। श्रमिक एक मजदूर होने के साथ-साथ 'मानव' भी होता है। वह समाज में रहता है। अतः अपना पेट भरने व तन ढकने के अतिरिक्त उसे अपने मान-सम्मान का भी ध्यान रखना पड़ता है। एक मानव होने के नाते वह चाहता है कि समाज में उसको भी इज्जत की दृष्टि से देखा जाये, उसके कार्य का कुछ मूल्य हो एवं सभी लोग उसे औद्योगिक उन्नति का एक महत्वपूर्ण एवं उपयोग अंग समझें। इस दृष्टि से कारखाने के अन्दर औद्योगिक जनतन्त्र की स्थापना नितान्त आवश्यक है। यही कारण है कि आज मानवीय सम्बन्धों की समस्या सबसे अधिक महत्वपूर्ण बन गई। मनोविज्ञान से संबन्ध रखने वाली श्रम समस्यायें आधुनिक युग में बहुत उग्र होती जा रही है।

इसका प्रमुख कारण स्वचालन व यंत्रों का अत्यधिक प्रयोग होना है, जिसके परिणामस्वरूप एक ओर तो काम नीरस बनता जा रहा है और दूसरी ओर श्रमिकों का व्यक्तिगत उत्तरदायित्व, सम्मान, ख्याति, महत्व तथा व्यक्तित्व घटता जा रहा है।

3. सामाजिक कारण :- श्रम समस्याओं के उदय एवं विकास में कुछ सामाजिक तत्वों का भी भाग रहा है। आधुनिक औद्योगिक युग में कुटीर व लघु उद्योगों का महत्व वृहत् उद्योगों की अपेक्षा कम होता जा रहा है। फलतः औद्योगिक पूँजी कुछ गिने-चुने लोगों के हाथों में केन्द्रित होती जा रही है। दूसरे, पूँजीपतियों की संख्या घट रही है किन्तु श्रमिकों की संख्या बढ़ती जाती है। श्रम व पूँजी में मतभेद की गहरी खाई होने के कारण दोनों पक्ष एक-दूसरे के विचारों से अनजान रहते है।

4. राजनीतिक कारण :- जिस प्रकार किसी देश का शासन प्रबन्ध वहाँ की सरकार द्वारा किया जाता है, उसी प्रकार एक उद्योग का प्रबन्ध उसके स्वामी तथा अन्य प्रबन्धकर्त्ताओं द्वारा सम्पन्न होता है। जिस देश में निरंकुश या तानाशाही शासन होता है, वहाँ की प्रज़ा को कठपुतली की भाँति तानाशाह के आदेशानुसार काम करना पड़ता है। तानाशाही व्यवस्था के अन्तर्गत देश की शासन व्यवस्था में जन-साधारण का कोई हाथ नहीं होता। उद्योग धन्धों की प्रबन्धक श्रमिकों की अपेक्षा कहीं अधिक बलशाली होते है। वे अपनी सुविधानुसार श्रमिकों की भर्ती करते है और जब चाहे उन्हें काम से निकाल देते है। वर्तमान प्रजातांत्रिक युग में श्रमिक यह चाहते है कि प्रबन्ध में उनकी भी सहभागिता है।

5. श्रमिकों का जीवन स्तर :-

(अ) अवधारण - 'जीवन स्तर' एक लोचपूर्ण शब्द है जिसे विभिन्न लोगों ने अलग-अलग ढंग से परिभाषित किया है। एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिवेदन के

अनुसार जीवन स्तर के तीन मुख्य भाव है - (1) प्रथम का सम्बन्ध लोगों की वास्तविक जीवन परिस्थितियों से है और इसे 'जीवन क्रम' की संज्ञा दी गई है। (2) दूसरा, इसका सम्बन्ध उन आकांक्षाओं से है जिन्हें लोग प्राप्त या पुनः प्राप्त करना चाहते हैं। इस "जीवन स्तर के नाम से सम्बोधित किया गया है। (3) तृतीय भाव विशिष्ट उद्देश्यों (जैसे न्यूनतम मजदूरी या कार्य के घण्टे नियत करने) के लिए परिभाषित जीवन की बांछनीय परिस्थितियों से सम्बन्धित है। इसे 'जीवन प्रमाप' कहा जाता है।

मानवीय आवश्यकतायें असीमित होती है, जिन्हें उनके महत्व के आधार पर अनिवार्य आवश्यकताओं, आराम सम्बन्धी आवश्यकताओं तथा विलासिता सम्बन्धी आवश्यकताओं की श्रेणियों में बाँटा गया है। कोई भी व्यक्ति अपनी इन्हीं आवश्यकताओं से है, जिनकी तृप्ति का वह आदी हो गया है। दूसरे शब्दों में जीवन स्तर उन आवश्यकताओं-अनिवार्य वस्तुओं, आराम की वस्तुओं तथा विलासिता की वस्तुओं की ओर संकेत करता है, जिनका उपभोग, करने का कोई व्यक्ति या समाज का कोई वर्ग आदी हो गया है। अन्तराष्ट्रीय श्रम संगठन के मतानुसार जीवन स्तर की परिभाषा इस प्रकार की जाती है। "उन सब वस्तुओं और सेवाओं के समूह से जिन्हें समाज के किसी वर्ग को उपभोग करने का अभ्यास पड़ गया हो, रहन-सहन का दर्जा निश्चित होता है।"[1]

जीवन स्तर का सम्बन्ध मनुष्य की आदत से है। आदत का बनना बड़ा कठिन है। अतः एक बार जब किसी वर्ग या व्यक्ति के जीवन का स्तर बन जाता है, तो उसे बनाये रखने के लिये वह हर प्रकार की चेष्टा करता है, यहाँ तक कि वह विवाह तथा सन्तानोत्पत्ति को उस समय तक के लिये स्थगित कर देता है जब तक कि वह पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति पर्याप्त मात्रा में नहीं करने लगाता। सीगर ने लिखा है कि "जीवन स्तर के क्रिया के उस ढंग और आराम के उस स्तर

---

1. अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन

का बोध होता है, जिसे कोई व्यक्ति अपनी प्रसन्नता के लिये अनिवार्य मानने लगता है और जिसे उपलब्ध करने तथा सुरक्षित रखने के लिये वह किसी भी प्रकार का उचित त्याग (जैसे- देर तक अथक परिश्रम से कार्य करना, विवाह स्थगित कर देना, इत्यादि) करने के लिये तत्पर रहता है।"[1] प्रत्येक व्यक्ति, उन सेवाओं को प्राप्त करके अपना जीवन स्तर ऊँचा उठाने के लिये उत्सुक रहता है जो कि पहले उसकी पहुँच से बाहर थीं। वह इस स्तर के नीचे गिरने से भयभीत रहता है क्योंकि ऐसा होने से वह उन सेवाओं और वस्तुओं का उपभोग करने से वंचित हो जाता है, जिनका वह आदी होता है।

2. जीवन स्तर के प्रकार :-

जीवन स्तर दो प्रकर का होता है- ऊँचा और नीचा। ऊँचा जीवन स्तर वह है जिसमें मनुष्य अपनी अधिक से अधिक आवश्यकताओं की संतुष्टि करता है अर्थात वह पौष्टिक खाना खाता है, सुन्दर वस्त्र धारण करता है, स्वच्छ मकान में रहता है, परिवार की चिकित्सा पर तथा बच्चों की शिक्षा पर पर्याप्त धन व्यय करता है। इसके विपरीत, निम्न जीवन स्तर वह है जिसमें अपनी सीमित आय से बहुत कम आवश्यकताओं की संतुष्टि करता है।

जीवन स्तर के निर्णायक घटक :-

किसी भी व्यक्ति, परिवार या समाज के जीवन स्तर को प्रभावित करने वाले अनेक रूप होते है जिनका अध्ययन निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत किया गया है-

1. **भौगोलिक परिस्थितियाँ :-** भौगोलिक परिस्थितियों के कारण जीवन स्तर में भी भिन्नता पाई जाती है। उदाहरण के लिये, इंगलैण्ड में अत्यधिक सर्दी होने के कारण वहाँ ऊनी वस्त्र धारण करना अनिवार्य हैं परन्तु हमारे देश के अधिकतर भाग में सर्दी नाम मात्र को ही पड़ती है। ओर गर्म देश होने के

---

1. सैगरः उधृत द्वारा सक्सेना, एस.सी. (1996:50): श्रम समस्याऐं एवं सामाजिक सुरक्षा, रस्तोगी पब्लिकेशन, शिवाजी नगर मेरठ।

कारण वस्त्र और गृह की चिन्ता इतनी अधिक नहीं है। यही कारण है कि इंगलैण्ड के जनसाधारण का जीवन स्तर भारतवासियों की अपेक्षा ऊँचा है। स्वयं भारत में भी उत्तर प्रदेश, पंजाब, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, बिहार, केरल आदि राज्यों के निवासियों के जीवन स्तर में भौगोलिक परिस्थितियों के कारण भारी अन्तर पाया जाता है।

2. समय का प्रभाव :- वर्तमान युग 'विज्ञान का युग' है जिसमें नित्य नए आविष्कार होते रहते है और नई-नई वस्तुयें बनाई जाने लगी है। वस्तुओं के मूल्य में भी परिवर्तन होते रहते हैं। आज जीवनोपयोगी तरह-तरह की वस्तुऐं कम मूल्य पर जनता के उपभोग के लिये उपलब्ध है, जैसे- बिजली या गैस का चूल्हा, लैम्प, रेडियों, टेलीवीजन इत्यादि। पहले इन्हें विलासिता की वस्तु समझा जाता था, लेकिन आज ये आराम तथा अनिवार्यता की वस्तुयें मानी जाती हैं। जैसे-जैसे समय व्यतीत होता जाता है, मनुष्य नई-नई वस्तुओं का उपयोग करने लगता है।

3. धार्मिक व जातीय मनोवृत्ति :- इसका भी जीवन के दृष्टिकोण व रहन-सहन के स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, भारतीय धार्मिक व जातीय प्रवृत्तियाँ हिन्दुओं को शाकाहारी बनाती है तथा उन्हें 'सादा जीवन, उच्च विचार' का पाठ पढ़ाती है। परिणामतः उनकी आवश्यकतायें सीमित होती है एवं जीवन स्तर भी अपेक्षाकृत निम्न बना, रहता है। इसके विपरीत इंगलैण्ड व अमेरिका के निवासियों का दृष्टिकोण प्रवृत्ति और आसक्ति मार्ग का है जिससे वे सामाजिक वैभव और शारीरिक आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए अधिक प्रयत्नशील रहते है, अतः उनका जीवन स्तर ऊँचा होता है।

4. सामाजिक वातावरण :- मनुष्य जिस समाज में जन्म लेता है उसी की परम्परायें तथा रीतिरिवाज के अनुसार उसका जीवन बनता है तथा उसकी

आवश्यकताओं का निर्माण होता है । उदाहरण के लिये, भारतीय समाज (विशेषतः हिन्दू समाज) में अधिकांश विवाह, दहेज, दावत और क्षणिक शान शौक पर व्यय कर दिया जाता है और शेष जीवन रूखी-सूखी रोटी व फटे-पुराने कपड़ों पर व्यतीत किया जाता है। ऐसी परिस्थितियों में, उच्चतर जीवन स्तर की आशा कैसे करे? इसी प्रकार गाँव के रहने वाले जिस सामाजिक वातावरण में रहते है वह शहरों के वातावरण से भिन्न होता है। इसलिये उनके जीवन स्तर में भी भिन्नता पाई जाती है।

5. विदेशी सभ्यता तथा सम्पर्क :- इसके भी स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, जब कोई भारतीय अमेरिका के किसी नगर में एक-दो वर्ष रह जाता है, तो उसका जीवन स्तर पहले की अपेक्षा ऊँचा हो जाता है, क्योंकि वहाँ जाकर नई-नई वस्तुओं का उपयोग देखता है और स्वयं भी उनका उपभोग करने लगता है । अर्थशास्त्र की शब्दावली में इसे 'प्रदर्शन का प्रभाव' कहते है। प्रो. नर्क्स ने इस सम्बन्ध में स्पष्ट लिखा है कि, ''जब लोग बढ़िया वस्तुओं अथवा उपभोग की उन्नत विधियां अथवा पुरानी इच्छाओं की संतृष्टि की नवीन विधियों के सम्पर्क में आते है तो उनका मनोविज्ञान विकसित होने लगता है; उनके मन में नई-नई इच्छाओं का सृजन होने लगता है और परिणामतः उपभोग की प्रवृत्ति में वृद्धि होने लगती है।'' प्रदर्शन प्रभाव की पुष्टि की दिशा में एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है। उत्तर प्रदेश राज्य में, स्वतंत्रता के पूर्व, चुन्नी-कुर्ता-सल्वार का प्रयोग नहीं किया जाता था, किन्तु जबसे पंजाबी संस्कृति का प्रसार हुआ यहाँ की वेष-भूषा में भी नए-नए परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे है। अर्न्तराष्ट्रीय व्यापार, जी0टी0वी0 तथा विदेशी मीडिया ने इस सम्पर्क को और भी दृढ़ कर दिया है जिसका जीवन स्तर पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है।

6. शिक्षा और बुद्धि का विकास :- शिक्षा और ज्ञान बढ़ने से रूचि परिमार्जित होती है और जीवन तथा समाज के प्रति दृष्टिकोण भी बदलता है। फलतः शिक्षा प्राप्त करने के बाद मनुष्य के जीवन का स्तर स्वाभाविक रूप से ऊँचा हो जाता है। यह उचित और अनुचित का भेद करके अपनी आय का सर्वोत्तम ढंग से उपयोग करता है। यहाँ तक कि बहुत से शिक्षित व्यक्ति अपनी जीवन स्तर बनाये रखने के लिये यह उचित समझते हैं कि या तो विवाह किया न जाये अथवा परिवार को सीमित रखें, क्योंकि उनके समाने जीवन स्तर का प्रश्न पहले आता है और अन्य बातें बाद में। एक शिक्षित व्यक्ति नंगे पैर सड़क पर घूमना पसन्द नहीं करता और न गन्दे मकान में ही रह सकता। इस प्रकार उसकी रूचि परिमार्जित हो जाती है।

7. आय का प्रभाव :- एक व्यक्ति विशेष का जीवन स्तर प्रायः इस बात पर निर्भर करता है कि उसकी आय कितनी है। एक साधारण कहावत है- 'एजे पाँव पसारिए जेती लाँबी सौर'। सच है कि किसी व्यक्ति या परिवार की वस्तुओं और सेवा को खरीदने की शक्ति उसकी आय द्वारा सीमित होती है। यदि यह मान लिया जाये कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी आय को विवेक से खर्च करता है, तो सम्भवतः जिस व्यक्ति की आय अधिक होगी वह उतनी ही अधिक वस्तुओं का उपभोग कर सकेगा। परिणामतः ऐसे मनुष्यों का जीवन स्तर अन्य मनुष्यों के जीवन स्तर की अपेक्षा ऊँचा होगा। यही कारण है कि साधारणतः एक धनी व्यक्ति का जीवन स्तर निर्धन व्यक्ति की अपेक्षा ऊँचा होता है।

8. व्यय करने की रीति :- आय के अतिरिक्त व्यय करने की रीति का भी जीवन स्तर पर प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, अधिक आय होने पर भी यदि कोई व्यक्ति अपनी आय का अधिकांश भाग मधुशाला, जुंआघर, नाच-रंग आदि में व्यय कर देता है, तो उसका जीवन स्तर ऊँचा नहीं हो

सकता। इसके विपरीत यदि कोई व्यक्ति अपनी आय को विवेक से खर्च करता है, एक पैसे की भी फिजूलखर्ची नहीं करता, साधारण भोजन करता है तथा सामान्य वस्त्र धारण करता है, छोटे आवास में रहता है, मादक पदार्थों की ओर देखता भी नहीं तथा शिक्षा आदि पर उचित व्यय करता है, तो उसका जीवन स्तर अच्छा होगा।

9. द्रव्य की क्रयशक्ति :- द्रव्य की क्रयशक्ति का भी जीवन स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता है। वस्तुओं के दाम कम होने पर थोड़ी आय से अनेक सुविधाजनक वस्तुऐं तथा सेवायें खरीदी जा सकती हैं। ऐसी दशा में मुद्रा की क्रय शक्ति बहुत अधिक होती है। इसके विपरीत, जब वस्तुओं के दाम बहुत चढ़ जाते हैं, तो मुद्रा की क्रयशक्ति कम हो जाती है, और अपनी निश्चित आय से हमें बहुत थोड़ी वस्तुऐं प्राप्त होती है।

10. वर्ग का प्रभाव :- वर्तमान समाज में आर्थिक, सामाजिक तथा जातीय आधार पर अनेक वर्ग बन गये हैं। प्रत्येक वर्ग के अपने प्रति रीति-रिवाज, खान-पान के तरीके और परम्पराऐं होती है जो कि जीवन स्तर को प्रभावित करती हैं। जो व्यक्ति जिस काम को करता है तथा जिस प्रकार के लोगों में रहता है वह उसी वर्ग का सदस्य बन जाता है और उसे उस वर्ग की रीतियों के अनुसार ही जीवन व्यतीत करना पड़ता है। पूँजीवादी व्यवस्था में समाज के तीन वर्ग हो गये हैं - मजदूर या निम्न वर्ग, मध्यम वर्ग तथा उच्च वर्ग। निम्न वर्ग का रहन-सहन बहुत नीचा होता है। आय तो कम होती ही है, साथ ही वे उसको विवेकपूर्ण ढंग से व्यय भी नहीं करते। किन्तु मध्यम वर्ग के लोगों को अपनी सामाजिक स्थिति के अनुसार अपनी जीवन स्तर बनाए रखना पड़ता है। समाज में मान प्रतिष्ठा, बच्चों की शिक्षा, मनोरंजन आदि सभी का ध्यान रखना पड़ता है जबकि उनकी आय पर्याप्त नहीं होती है। उच्च वर्ग में मुट्ठी भर ही व्यक्ति आते है, जैसे मिल-मालिक, व्यापारी व

अधिक वेतन पाने वाले जो अपनी सभी प्रकार की आवश्यकताओं को यथेष्ट मात्रा में पूरी करते हैं, अतः उनका जीवन ऊँचा होता है।

11. व्यक्तिगत दृष्टिकोण :- किसी व्यक्ति के जीवन दर्शन का भी उसके रहन-सहन के स्तर पर गहरा पड़ता है । उदाहरणार्थ, धर्म, संतोष व अध्यात्म में विश्वास करने वाले व्यक्ति का जीवन स्तर अधिक ऊँचा नहीं होता। इसके विपरीत भौतिकवादी व्यक्ति का जीवन स्तर प्रायः ऊँचा देखा जाता है।

12. जीवन सुधार संगठनों का प्रभाव :- आज कल ऐसे संगठनों का उदय हो रहा है, जो अपने सदस्यों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का निरन्तर प्रयत्न करते रहते हैं। पश्चिमी देशों में श्रमिकों के लिए ऐसे अनेक संगठन काम कर रहे हैं किन्तु भारतवर्ष में अभी इनका अभाव सा है । यहाँ जातीय संगठन अवश्य देखे जाते है। किन्तु राष्ट्रीयता की भावना जागृत होने के साथ-साथ ऐसे संगठनों का महत्व कम होता जा रहा है। वास्तव में देश को आज विशुद्ध जीवन सम्बन्धी संगठनों की आवश्यकता है।

13. परिवहन के साधनों का प्रभाव :- जैसे-जैसे परिवहन के साधनों का विकास हो रहा है, जनता का बाहरी सम्पर्क बढ़ता जा रहा है। और उसके प्रभाव से जीवन स्तर में उन्नति होती जाती है। उदाहरण के लिए, शहरों और गाँवों के मध्य सम्पर्क बढ़ जाने से ग्रामवासियों के जीवन स्तर में पर्याप्त उन्नति हो गई है।

14. स्वास्थ्य का प्रभाव :- मनुष्य के स्वास्थ्य का भी उसके जीवन स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता है। एक अस्वस्थ व्यक्ति न तो अच्छा खा सकता है और न अच्छा पहन ही सकता है, क्योंकि वह अस्वस्थ व्यक्ति सदैव ही शीतल वायु व गर्म लू से डरता है। इसके विपरीत एक स्वस्थ व्यक्ति अच्छा खाता

पहनता है। अतः अस्वस्थ व्यक्ति का जीवन स्तर स्वस्थ व्यक्ति की अपेक्षा नीचा होता है।

15. **प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता तथा उनका समुचित विदोहन :-** यदि किसी देश में प्राकृतिक सम्पदा भरपूर है तथा वहाँ के निवासियों ने विधिवत् उसका दोहन भी किया है तो उनका जीवन स्तर भी ऊँचा होगा। उदाहरण के लिए, स्वतन्त्रता के पूर्व प्रायः यह कहा जाता था कि 'भारत एक धनाढ्य देश है किन्तु यहाँ के निवासी निर्धन है'। हमारी निर्धनता का प्रमुख कारण प्रकृति-दत्त-सम्पदा का समुचित विदोहन न करना था।

16. **राष्ट्रीय आय का वितरण :-** जिस देश में राष्ट्रीय आय का वितरण न्याय संगत व उचित होगा वहाँ के लोगों का जीवन स्तर भी ऊँचा रहेगा, और दोषपूर्ण वितरण की दशा में असमानता रहेगी एवं सामान्य लोगों का स्तर नीचा ही रहेगा।

17. **देश में शांति व सुरक्षा :-** अशांति व आतंकवाद की स्थिति में उच्च जीवन स्तर की आशा नहीं की जा सकती क्योंकि उपभोग की वस्तुओं की पूर्ति करना कठिन हो जाता है। सामाजिक सुरक्षा की स्थिति में ही उच्च जीवन स्तर हेतु प्रयास करना संभव होता है। कश्मीर के निवासियों का जीवन स्तर इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

18. **विश्वव्यापी सहयोग व सहकारिता :-** देश के अतिरिक्त विश्व की स्थिति का भी जीवन स्तर पर प्रभाव पड़ता है। विश्व व्यापीकरण की नवीन नीति के ही कारण आज भारत में बहुराष्ट्रीय निगमों का पर्दापण शुरू हो गया है। उनके द्वारा उत्पादित व प्रचारित पदार्थों का यहाँ के जीवन स्तर पर भी निश्चित प्रभाव पड़ेगा।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि मनुष्य के जीवन स्तर पर अनेक बातों का प्रभाव पड़ता है । यही कारण कि दो व्यक्तियों, दो वर्गो या दो देशों के निवासियों का जीवन स्तर इतना भिन्न पाया जाता है ।

निम्न जीवन स्तर के कारण

अब हम भारतीय श्रमिकों के निम्न जीवन स्तर के विभिन्न कारणों पर प्रकाश डालेंगे । अध्ययन की सुविधा के लिए इन कारणों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है (i) भौगोलिक, (ii) आर्थिक तथा (iii) व्यक्तिगत ।

(i) भौगोलिक कारण :-

हमारे देश की जलवायु गर्म है, अतः हमारे देशवासियों की आवश्यकतायें भी सीमित है । ग्रीष्मकाल में थोड़े कपड़ों से काम चल जाता है और शीतकाल में अधिकांश व्यक्ति तापकर ही समय काट देते है । गर्मियों में वे न कुछ ओढ़ते हैं और न बिछाते हैं, केवल शीतकाल की कुछ अवधि में मोटी चादरें अथवा कम्बल का प्रयोग करते है । संक्षेप में, हमारे देश की भौगोलिक अवस्था इस प्रकार की है कि मनुष्य अत्यन्त साधारण जीवन व्यतीत करते हैं, जिससे उनका जीवन स्तर बहुत नीचा है ।

(ii) आर्थिक कारण :-

1. **अशिक्षा, अज्ञानता एवं रूढ़िवादिता** - देश के केवल 52 प्रतिशत व्यक्ति ही पढ़े लिखे है और उनमें औद्योगिक श्रमिकों का भाग तो शायद 2 प्रतिशत या 3 प्रतिशत ही है । इसका दुष्परिणाम यह है कि अधिकांश देशवासियों में उन्नति की भावना नहीं पायी जाती । वे अपनी वर्तमान स्थिति से ही सन्तुष्ट रहते हैं और अपने जीवन स्तर को ऊँचा करने का विशेष प्रयत्न नहीं करते । देश के धार्मिक एवं सामाजिक आदर्शो का भी श्रमिकों के जीवन स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ा है । वे रूढ़िग्रस्त होने के कारण श्रमजीवी परम्परा से चले

आये रीति-रिवाजों का स्वभाव से ही अनुकरण करते हैं। वे जन्म, मृत्यु, विवाह आदि उत्सवों पर वर्षो की बचत को एक दिन में व्यय कर देते हैं, जिससे उनका जीवन स्तर बहुत नीचा रहता है।

2. अकुशलता - श्रमिकों की अकुशलता भी जीवन स्तर की वृद्धि में बाधक है। सर क्लीमेंट सिम्पसन का अनुमान है कि लंकाशायर का एक श्रमिक अपने जैसे 2.67 भारतीय श्रमिकों के बराबर कार्य करता है। प्रति श्रमिक उत्पादन कम होने के कारण उनको मजदूरी कम मिलती हैं जिसके परिणामस्वरूप उनका जीवन स्तर नीचा हो जाता है।

3. कम मजदूरी - अल्प आय का भी भारतीय श्रमिक के जीवन स्तर पर बुरा प्रभाव पड़ता है। दरिद्रता के कारण वे भली प्रकार अपना पेट भी नहीं भर सकते एवं पर्याप्त वस्त्र धारण नहीं कर सकते। ऐसे परिस्थिति में दूध, दही, घी, फल आदि निपुणतावर्धक वस्तुओं की वे कल्पना भी नहीं कर सकते। कीमतों में निरन्तर वृद्धि 'करेला और नीम चढ़ा' का कार्य करती है। परिणामस्वरूप उनका जीवन स्तर गिर जाता है।

(iii) व्यक्तिगत कारण :-

1. दुर्व्यसन एवं ऋणग्रस्तता - अर्थशास्त्री डार्लिंग के अनुसार भारतीय श्रमिक ऋण में ही जन्मता है, ऋण में ही उसका पालन-पोषण होता है और ऋण में ही उसकी मृत्यु हो जाती है। महाराष्ट्र, बंगाल, उड़ीसा और उत्तर प्रदेश, आदि राज्यों द्वारा की गई जाँच से पता लगा है कि अपनी आय का 10-15 प्रतिशत भाग श्रमजीवी मादक वस्तुओं पर व्यय करते हैं।

2. असन्तुलित एवं अपर्याप्त भोजन - श्रमिकों के स्वास्थ्य एवं कुशलता का उनके भोजन एवं खान-पान से अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। जब शरीर की अनिवार्य आवश्यकतायें पूरी नहीं हो पाती, तो औद्योगिक अकुशलता, अनुपस्थिति और सामयिक आलस्य तथा बार-बार बीमार पड़ना तथा अधिक

मृत्यु संख्या इसके अनिवार्य दुष्परिणाम है, जिनसे बचा नहीं जा सकता। भारत में जो सर्वेक्षण किये गये हैं उनके रिपोर्टों से पता चलता है कि भारतीय जन साधारण के भोजन में पोषक तत्वों का बड़ा ही अभाव रहता है। पोषक तत्वों का अभाव रहने से सामान्य स्वास्थ्य खराब रहने लगता है, अनेक बीमारियों के लगने का भय रहता है और कुशलता कम हो जाती है। बहुत से श्रमिकों को एक समय का भोजन भी भर पेट नहीं मिलता।

3. **निर्धनता एवं शारीरिक दुर्बलता** - निर्धनता एवं अल्प वेतन के कारण श्रमिकों का मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य खराब रहता है। अधिक समय तक वे निरन्तर कठिन परिश्रम करने के लिए अपने को असमर्थ पाते हैं। एक बार रोगी होने पर वे अच्छी तरह इलाज भी नहीं करा सकते। भारत के अनके क्षेत्रों में मलेरिया आदि रोगों से अधिकांश श्रमिक पीड़ित रहते हैं। इससे उनकी कार्यक्षमता गिरती है और उत्पादन को भी क्षति पहुँचती है।

4. **जनसंख्या का आधिक्य** - भारतवर्ष की जनसंख्या में वृद्धि निरन्तर जारी है। परिणामतः हमें अपनी कुल राष्ट्रीय उत्पत्ति अधिक नागरिकों मे बांटनी पड़ती है, जिससे देशवासियों के जीवन स्तर में कोई विशेष वृद्धि नहीं हो पा रही है।

5. **दोषपूर्ण गृह व्यवस्था** - औद्योगिक केन्द्रों में गृह समस्या बड़ी जटिल है। अधिकांश श्रमिक जनसंख्या एक कमरे वाले घरों में निवास करती है, जिसमें चार से लेकर बारह व्यक्ति तक रहते हैं। उदाहरण के लिए एक कमरे वाले घरों में रहने वाल परिवारों का अनुपात बम्बई में 89 प्रतिशत, अहमदाबाद में 73 प्रतिशत, कानपुर में 62.5 प्रतिशत और नागपुर, जबलपुर, अकोला, गोंदिया 60 प्रतिशत है। ऐसी परिस्थितियों में सामान्य पारिवारिक जीवन असम्भव हो जाता है।

6. **धन का वितरण** - अन्य देशों की तुलना में हमारे देश की राष्ट्रीय उत्पत्ति भी बहुत कम है, जिसके परिणामस्वरूप देशवासियों का जीवन स्तर बहुत नीचा है । हमारे देश में धन का वितरण भी बड़ा दोषपूर्ण है । अधिकांशतः ऐसा देखा जाता है कि धनी व्यक्ति और भी धनी होते जा रहे हैं, किन्तु गरीब लोगों की निर्धनता बढ़ती जा रही है ।

जीवन स्तर को ऊँचा करने के उपाय

भारतीय श्रमिकों के जीवन स्तर में वृद्धि करने के लिये निम्न सुझाव दे सकते हैं-

1. **आय में वृद्धि** - जीवन स्तर पर सबसे अधिक प्रभाव आय का पड़ता है । अधिकांश दशाओं में आय बढ़ जाने पर जीवन स्तर भी ऊँचा हो जाता है । उत्तर प्रदेशीय श्रम जांच समिति ने अपनी रिपोर्ट में एक स्थान पर संकेत दिया था कि सम्पूर्ण श्रम समस्याओं का केन्द्र बिन्दु उनकी मजदूरी ही है । अतः जिन उपायों से राष्ट्रीय आय में वृद्धि की जा सकती है, उन्हीं उपायों से जीवन स्तर को भी ऊँचा किया जा सकता है । इसके साथ-साथ साधनों का इस प्रकार उपयोग करना चाहिऐ कि वे लम्बे काल तक उपयोगिता प्रदान करते रहें । दूसरे; रोजगार के बढ़ जाने से भी राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी । और इस वृद्धि का परिणाम जीवन स्तर का ऊँचा होना है ।
2. **धन का समान वितरण** - राष्ट्रीय आय के अधिक होते हुए भी यह सम्भव है कि समाज का जीवन स्तर ऊँचा न हो । उस आय का वितरण यदि न्यायपूर्ण नहीं है, तो ऐसे वर्ग या समुदाय का जीवन स्तर ऊँचा नहीं हो सकता । अतः यह आवश्यक है कि विभिन्न परिवारों और व्यक्तियों की आय में बहुत अन्तर न हो ।
3. **शिक्षा में प्रगति** - शिक्षा में प्रगति हो जाने से भी जीवन स्तर ऊँचा हो जाता है। शिक्षा द्वारा नये-नये प्रकार की आवश्यकतायें उत्पन्न की जा सकती है । मनुष्य दूसरे देशों, जातियों, नये आविष्कारों तथा आवश्यकताओं की पूर्ति

के नये-नये साधनों का ज्ञान प्राप्त कर लेते है। एक शिक्षित व्यक्ति अच्छा उपभोक्ता तथा अच्छा उत्पादक बन सकता है। इस प्रकार एक ओर तो उसकी उत्पादन क्षमता बढ़ जाती है और दूसरी ओर वह बेकार अथवा निपुणतानाशक वस्तुओं के उपभोग पर आय को व्यय नहीं करता। यूरोपीय देशों में जीवन स्तर ऊँचा होने का महत्वपूर्ण कारण शिक्षा की उन्नति है।

4. परिवार कल्याण - कुटुम्ब के आकार का जीवन स्तर पर प्रभाव पड़ता है। जीवन स्तर को ऊँचा रखने के लिये पारिवारिक विस्तार पर नियंत्रण रखना पड़ता है। पाश्चात्य परिवार के सम्मुख जब कोई इस प्रकार की समस्या उत्पन्न होती है कि परिवार में एक बच्चे की या एक कार की वृद्धि की जाये, तो निर्णय अधिकतर कार के पक्ष में ही होता है। ऐसा परिवार अपना जीवन स्तर नीचा नहीं होने देता। अतएव अपने देश में पारिवारिक नियोजन की बड़ी आवश्यकता है।

5. रूचि एवं मनोवृत्ति में परिवर्तन - समाज एवं व्यक्ति की रूचि परिवर्तित कर देने से भी जीवन स्तर को ऊँचा किया जा सकता है। प्रचार एवं प्रसार द्वारा लोगों को इस बात की शिक्षा दी जा सकती है कि वे अपनी आय का अधिक उपयोगी व्यय करें। मादक वस्तुओं के सेवन पर वैधानिक रूप से रोक लगा देनी चाहिए। इस प्रकार प्रवृत्ति में परिवर्तन कर देने से हमारे श्रम जीवी श्रेष्ठ उपभोक्ता बन सकते हैं और उनका जीवन स्तर ऊँचा हो सकता है।

6. परिवहन साधनों की उन्नति - जिन देशों मे परिवहन के साधन अधिक विस्तृत तथा अधिक अच्छे होते हैं, वहाँ के मनुष्यों के आचार और विचार में बहुत परिवर्तन हो जाता है। परिवहन के साधन समाज और जातियों के विभिन्न वर्गो में पारस्परिक सम्बन्ध को बढ़ा देते है जिससे विचारों, रीति-रिवाजों, शौक इत्यादि का आदान-प्रदान हो जाता है। मनुष्य संसार

और उसकी बातों को जान जाता है। जिससे जीवन स्तर को ऊँचा उठाने में बड़ी सहायता मिलती है।

7. सन्तुलित एवं पर्याप्त आहार - सामान्य विकास के लिए यह आवश्यक है कि सही प्रकार का और पर्याप्त मात्रा में भोजन उपलब्ध हो। भोजन सन्तुलित होना चाहिऐ अर्थात् ऐसा हो जिससे सम्पूर्ण पोषण तत्वों की प्राप्ति होती रहे।

8. समुचित आवास व्यवस्था - औद्योगिक श्रमिकों की गृह समस्या को सुलझाने के लिए तत्कालीन कदम उठाये जायें। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि कमरे का क्षेत्रफल 300 वर्ग फुट से कम नहीं होना चाहिये और उसमें चार व्यक्तियों से अधिक न रहें। घरों में खिड़कियाँ व रोशनदानों की व्यवस्था होनी चाहिऐ। नहाने-धोने के लिये नल व शौचालय भी पर्याप्त संख्या में होने चाहिये।

6. <u>श्रमिकों की कार्य दशायें</u>

"कार्य करने की दशाओं" के अन्तर्गत उन विविध बातों का समावेश किया जाता है, जिनमें श्रमिक कार्य करते हैं। साधारणतः कारखाने के भीतर व बाहर की सफाई, उचित तापमान, वायु तथा रोशनी का प्रबन्ध, खतरे वाली मशीनों से सुरक्षा का प्रबन्ध, पीने के लिये जल की सुविधायें, केन्टीन, स्नानागार, कपड़े धोने के जलाशल का प्रबन्ध, विश्राम गृह की व्यवस्था, मनोरंजन, शिशु-सदन तथा अन्य कल्याणकारी कार्यों की व्यवस्था, काम करने के उचित घण्टे, उचित-पाली-प्रणाली, अत्यादि बातें, "कार्य दशाओं" के क्षेत्र में शामिल की जाती है।

कार्य-दशाओं सम्बन्धी कारखाना आधिनियम (1948) के प्रावधान :

भारतीय कारखाना अधिनियम, 1948 के अन्तर्गत श्रमिकों की काम करने की दशाओं में सुधार हेतु अनेक रचनात्मक प्रयास किये गये हैं जिनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है -

1. **स्वच्छता** - कारखाना अधिनियम के अनुसार प्रत्येक कारखाने में पूर्ण सफाई रहनी चाहिये ताकि नाली, कूड़ा-कचरा, शौचालय, आदि के कारण कहीं भी दुर्गन्ध नहीं रहनी चाहिये। पूर्ण सफाई रखने के लिये यह अनिवार्य है कि प्रत्येक कारखाने में झाड़ू लगाकर अथवा अन्य किसी ढंग से कूड़ा-कचरा साफ किया जाये। कारखाने के विभिन्न कमरों के फर्श पर कहीं भी कूड़ा-करकट इकट्ठा नहीं होने देना चाहिये। निर्माण कार्य के समय में यदि फर्श गीला हो जाये तो जल निकालने के लिये पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिये। कारखानों के अन्दर की दीवारें, छतें, आने-जाने के मार्गों की दीवारें, सीढ़ियाँ इत्यादि कम से कम हर पाँचवें वर्ष साफ की जानी चाहिये तथा उन पर सफेदी अथवा वार्निश होनी चाहिये।
2. **गन्दगी युक्त पदार्थों की सफाई** - यदि कारखानों में निर्माणी क्रिया के परिणामस्वरूप उसमें कूड़ा-करकट या व्यर्थ पदार्थ उत्पन्न होते हैं तो उनकी सफाई के लिये उचित व्यवस्था की जानी चाहिये। इस आदेश का प्रमुख उद्देश्य यह है कि श्रमजीवियों तथा कारखाने के पड़ोस में रहने वाले व्यक्तियों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव न पड़े।
3. **रोशनदान व तापमान** - कारखाने के प्रत्येक कमरे में ताजी हवा के आने-जाने के लिये उचित व प्रकाशपूर्ण व्यवस्था होनी चाहिये। इसके अतिरिक्त कारखाने के भीतर का तापमान उतना होना चाहिये, जिससे श्रमजीवी पर बुरा प्रभाव न पड़े तथा वायु उनको सुविधाजनक प्रेरणात्मक प्रतीत हो। कमरे की दीवारों व छतों का निर्माण ऐसी सामग्री से किया जाना चाहिये जिससे तापमान बहुत अधिक न हो वरन् कम से कम रहे। यदि निर्माण क्रिया की प्रकृति के कारण कमरे में बहुत अधिक गर्मी पैदा हो जाती है अथवा उनका तापमान बहुत अधिक बढ़ जाता है, तो ऐसे साधनों का

प्रयोग किया जाना चाहिये जिससे कि तापमान का कुप्रभाव श्रमजीवियों पर न पड़े।

4. **धूल व धुएँ से सुरक्षा** - यदि किसी कारखाने की उत्पादन क्रिया के परिणामस्वरूप धूल व धुए की उत्पत्ति होती है जो उसे एक स्थान पर एकत्रित नहीं होने देना चाहिये, वरन् प्रभावशाली साधनों द्वारा ऐसा प्रयत्न करना चाहिये जिससे कि धुआँ बाहर निकल जाये।

5. **कृत्रिम आर्द्रता** - ऐसे प्रत्येक कारखाने में जहाँ कृत्रिम आर्द्रता बढ़ाई जाती है अर्थात् साधनों द्वारा आवश्यकतानुसार तापमान को कम या अधिक किया जाता है, वहाँ राज्य सरकार आर्द्रता का स्तर नियत कर सकती है।

6. **अधिक भीड़-भाड़ पर नियंत्रण** - कारखाने के किसी भी कमरे में इतने अधिक व्यक्ति नहीं होने चाहिये जिससे श्रमजीवियों के स्वस्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़े। अधिनियम में प्रत्येक श्रमजीवी के लिये कमसे कम 500 घन फीट स्थान निश्चित किया गया है। इस अधिनियम के लागू होने से पूर्व स्थापित कारखानों में यह स्थान 500 घन फीट स्थान निश्चित किया गया है। इस अधिनियम के लागू होने से पूर्व स्थापित कारखानों में यह स्थान 350 घन फीट था। इसके अतिरिक्त मुख्य निरीक्षक प्रत्येक काम करने के कमरे में अधिकतम श्रमजीवियों की संख्या भी निर्धारित कर सकता है।

7. **प्रकाश** - प्रत्येक कारखाने के उस स्थान में जहाँ श्रमिक कार्य करते हों अथवा मार्ग में आते-जाते हों, वहाँ प्रकाश की समुचित व्यवस्था होनी चाहिये। ऐसे प्रकाश प्राकृतिक अथवा कृत्रिम दोनों ही प्रकार के हो सकते हैं। यदि किसी कारखाने में ऐसी खिड़कियाँ प्रयोग की गई हैं, जिसके काँच चकाचौंध उत्पन्न करते हों अथवा आँखों को हानि पहुँचाते हों तो उन पर रोक लगा देनी चाहिये। आँखों पर जोर अधिक न पड़े इस हेतु रॉड का प्रयोग किया जाना चाहिये।

8. पीने का जल - प्रत्येक कारखाने मे पीने योग्य ठण्डे व शीतल जल की व्यवस्था होनी चाहिये। जल पीने की स्थान, स्नानागार, शोचालय, मूत्रालय आदि से 20 फीट दूर होनी चाहिये। यदि कारखाने में 250 से अधिक श्रमजीवी काम करते हों तो गर्मी के मौसम में जल को ठण्डा रखने की भी उचित व्यवस्था होनी चाहिये।

9. शौचालय व मूत्रालय - प्रत्येक कारखाने में पर्याप्त संख्या में शौचालयों व मूत्रालयों की व्यवस्था होनी चाहिये। पुरूषों व महिलाओं के लिये अलग-अलग शौचालय व मूत्रालय की व्यवस्था होनी चाहिये। इसका निर्माण ऐसे सुविधाजनक स्थान पर किया जाना चाहिये जहाँ प्रत्येक श्रमजीवी उनका उपभोग आसानी से कर सके। शौचालय व मूत्रालय में वायु, प्रकाश व स्वच्छता की पूरी व्यवस्था होनी चाहिये।

10. पीकदान - प्रत्येक कारखाने के विभिन्न स्थानों पर पर्याप्त संख्या में पीकदानों की व्यवस्था होनी चाहिये। इन पीकदानों को साफ रखना बहुत आवश्यक है। कोई भी श्रमजीवी पीकदानों के अलावा कारखाने के किसी अन्या भाग में नहीं थूक सकता। इसका उद्देश्य यह है कि कोई भी व्यक्ति फर्श या अन्या स्थान पर गन्दगी न फैलाये, क्योंकि प्रायः गन्दगी से ही बीमारियाँ फैलती हैं। यदि कोई श्रमिक पीकदान का उपयोग नहीं करता और इधर-उधर थूकता है तो उस पर 5 रूपये तक जुर्माना किया जा सकता है।

11. यन्त्रों की घेराबन्दी - मशीनों से होने वाली दुर्घटनाओं के सम्बन्ध में भी कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत उचित व्यवस्था की गई है। प्रत्येक खतरे वाली मशीन के चारों ओर तार लगाना जरूरी है। इसी प्रकार घूमने वाले पट्टों और पहियों के चारों ओर तार लगाना चाहिये। मशीनों में तेल देने तथा उनका निरीक्षण करने के लिये विशेष कुशलता प्राप्त व्यक्तियों को नियुक्त

करना चाहिये। कोई भी व्यक्ति जब तक उसे उचित प्रशिक्षण न मिला हो, किसी खतरे वाली मशीन पर कार्य नहीं कर सकता। अधिनियम में एक संशोधन के अनुसार, मशीनों को ढकने की भी व्यवस्था की गई है। मशीनों के निकट पहुँचने के स्थान भी मजबूत और पक्के होने चाहिये तथा पैर फिसलने वाले पदार्थों को हटा देना चाहिये। इसके अतिरिक्त कोई भी श्रमिक ऐसा भार नहीं उठायेगा जो उसके स्वास्थ्य के लिये हानिकारक हो। खतरनाक आग अथवा विस्फोट से सुरक्षा का भी उचित प्रबन्ध होना चाहिये। आग लग जाने की स्थिति में आग बुझाने वाले यन्त्र कारखाने में काफी मात्रा में उपलब्ध होने चाहिये।

12. **कल्याण कार्य की व्यवस्था** - भारतीय कारखाना अधिनियम को 42 से 50 तक की धारायें निम्नलिखित कल्याण कार्यों की व्यवस्था के लिये आदेश देती है - (1) कपड़े धोने की सुविधा, (2) कपड़ों को रखने व सुखाने की सुविधा, (3) बैठने की सुविधा, (4) प्राथमिक उपचार के उपकरण रखना, (5) जलपान गृह की व्यवस्था, (6) विश्राम-सील, आश्रय-स्थल व कैन्टीन की व्यवस्था, (7) शिशु-सदन की व्यवस्था तथा (8) कल्याण अधिकारी की नियुक्ति।

औद्योगिक श्रमिकों की ऋणग्रस्तता

अर्थ - भारतीय औद्योगिक श्रमिकों की ऋणग्रस्तता उनकी प्रमुख विशेषता है, जो उनकी क्षमता एवं निम्न जीवन स्तर का भी एक प्रधान कारण है। शाही श्रम आयोग ने अपनी रिपोर्ट में एक स्थान पर लिखा है कि, "भारतीय औद्योगिक श्रमिकों के निम्न जीवन स्तर का प्रधान कारण उनकी ऋणग्रस्तता है। भारतीय श्रमिक ऋण में ही जन्म लेता है, ऋणी के रूप में ही जीवन व्यतीत करता है तथा ऋण के भार से दबा हुआ ही वह इस संसार से कूँच कर जाता है।" इतना ही नहीं मृत्यु के उपरान्त भी वह ऋण का उत्तरदायित्व वसीयता के रूप में अपने

उत्तराधिकारियों के कन्धों पर छोड़ जाता है।'' यह कथन भारतीय श्रमजीवियों के लिए पहले जितना सत्य था उतना ही आज भी सत्य बना हुआ है।

सीमा - औद्योगिक श्रमिकों की ऋणग्रस्तता की सीमा के विषय मेंसही व विश्वसनीय आँकड़ों का अभाव है । इसका प्रमुख कारण यह है कि जिस व्यक्ति या संस्था ने इस कार्य को अपने हाथ में लिया, उसे पूर्ण सफलता नहीं मिली, क्योंकि श्रमिक जाँचकर्ताओं को ठीक-ठीक सूचना देने में हिचकिचाते हैं। अनेक मामलों में तो श्रमिकों को स्वयं अपनी ऋणग्रस्तता की सीमा का पता नहीं होता। फिर भी समय-समय पर औद्योगिक श्रमिकों की ऋणग्रस्तता के विषय में अनुमान लगाए गए है, जिनका सार यह है कि विभिन्न औद्योगिक केन्द्रों के लगभग दो-तिहाई परिवार ऋणग्रस्त हैं।

<u>ऋणग्रस्तता के कारण</u>

भारतीय श्रमिकों की ऋणग्रस्तता के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं -

1. पैतृक ऋण - बहुधा श्रमिक परिवारों में पूर्वजों द्वारा लिये हुए ऋण का भुगतान करना एक पवित्र कर्तव्य माना जाता है । पूर्वज की गलती या मजबूरी के कारण परिवार के सदस्यों को यह उत्तरदायित्व प्राप्त होता है एवं चक्रवृद्धि ब्याज के कारण ऋण की राशि बढ़ती जाती है, तथा परिवार में पीढ़ी इस परम्परागत देनदारी को चुकाने के प्रयत्न में उत्तराधिकारी जीवन व्यतीत कर देते हैं। कदाचित् उन्हें इस कानून का ज्ञान नहीं होता कि मृतक ने जो ऋण लिये थे उनके सम्बन्ध में उत्तराधिकारी उसी सीमा तक उत्तरदायी होते हैं, जितनी की सम्पत्ति मृतक ने उत्तराधिकारी को छोड़ी हो। यदि मृतक ने कोई सम्पत्ति नहीं छोड़ी है, तो उसके ऋण के लिये उसके उत्तराधिकारियों को किसी भी न्यायालय में उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता।

2. **सामाजिक अवसरों पर अपव्ययता** - भारतीय श्रम समाज में विभिन्न अवसरों पर जो सामाजिक समारोह सम्पन्न होते हैं उनमें बड़ी ही अदूरदर्शिता से काम लिया जाता है। श्रम-जाँच समिति के शब्दों में "भारत में रीति-रिवाज अत्यन्त कठोर शासक हैं। सामाजिक भोज एवं दहेज जैसी प्रथाओं के कारण श्रमजीवियों को अपनी हैसियत से अधिक ऋण लिये होते हैं। ऐसे अवसरों पर प्रायः श्रमिक अपनी वास्तविक आर्थिक दशा भूल जाता है और समुदाय के अन्य लोग भी इसका विचार न कर उसे ऋण देकर अपव्यय के लिए प्रेरित करते हैं। जॉबर, मिस्त्री और पठान सदैव ऐसे ही अवसरों की ताक में रहते हैं और सहर्ष ऋण प्रदान करने को तत्पर रहते हैं।" इसी प्रकार, जन्म एवं मृत्यु के असवरों पर भी अदूरदर्शिता से काम लिया जाता है। श्रमिक की ऋणग्रस्तता का यह बहुत महत्वपूर्ण कारण है।

3. **जुआ, नशा आदि पर फिजूलखर्ची** -जुआ खेलना अथवा नशा करना भारतीय श्रमजीवियों की बहुत बुरी आदत है। भले ही पेट भर भोजन के लिये उनके पास पैसा न हो, किन्तु दिन भर की थकान दूर करने के लिये ऋय लेकर वे मदिरापान अवश्य करेंगे। विवेकहीन होने के कारण श्रमिक अपनी आय का सदुपयोग नहीं कर पाते। यदि उनकी जेब में चार पैसे पड़े हैं, तो स्वस्थ मनोरंजन की अपेक्षा वे शराब अथवा जुए को अधिक प्राथमिकता देंगे। इस दुर्गुण के कारण भी उन्हें ऋणी रहना पड़ता है।

4. **दोषपूर्ण भरती पद्धति** - श्रमिकों की भर्ती कर्मकारियोजनों (जॉबरों) द्वारा होती है। प्रत्येक भर्ती होने वाले व्यक्ति को जॉबर की दस्तूरी देनी पड़ती है। श्रमिकों की नियुक्ति, उन्नति अथवा एक विभाग से दूसरे विभाग में ट्रान्सफर, सब कुछ इन्हीं जॉबरों पर निर्भर करता है। जॉबरों की अधिकांश आय नई भरती पर निर्भर करती है, वे तरह-तरह के बहाने बनाकर पुराने श्रमिकों को निकालने तथा नयों को भर्ती करते रहते हैं। इस प्रकार भारत

में घूस लेने की प्रथा प्रचलित है । अपनी नौकरी स्थिर रखने के लिये श्रमजीवियों को ऋण लेकर कर्मचारियोजनों की हथेली सदा गर्म रखनी पड़ती है ।

5. ऋण प्राप्ति की सुविधा - औद्योगिक श्रमिकों की ऋणग्रस्तता का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि उनको बड़ी सुविधा से ऋण मिल जाता है । नगर का महाजन, मारवाड़ी अथवा पठान उन्हें अपने ऋण चंगुल में फँसाने के लिये सदैव तत्पर रहते हैं । कभी-कभी मिस्त्री तथा कर्मकारियोजन भी ऋणदाता का कार्य करते है । यही नहीं, मदिरा विक्रेता तथा परचूनी वाले भी प्रायः श्रमिकों को उधार माल बेचकर उनकी ऋणग्रस्तता बढ़ाते रहते हैं ।

6. अत्यधिक ऊँची ब्याज दर - यद्यपि श्रमजीवियों को ऋण सहज ही मिल जाता है, तथापि ऋण की शर्ते सरल नहीं होतीं । ब्याज दर बहुत अधिक ऊँची होती हैं क्योंकि सम्पत्तिहीन होने के कारण श्रमजीवी किसी प्रकार की प्रतिभूति देने में असमर्थ होते हैं ।

7. अशिक्षा - हमारे अधिकांश श्रमजीवी पढ़े-लिखे नहीं हैं, अतः ऋणदाता उनके भोलेपन का दुरूपयोग करते हैं । काला अक्षर भैंस बराबर होने के कारण वे स्वयं तो ब्याज का हिसाब लगा नहीं पाते और ऋण की जो घटी बढ़ी राशि ऋणदाता उन्हें बताते हैं उसे ही स्वीकार कर लेते हैं । कभी-कभी तो माह की पहली तारीख पर श्रमिक को जो कुछ भी मजदूरी मिलती है उसे ये ऋणदाता तुरन्त ले लेते हैं तथा बेचारा श्रमिक ऋण की ज्वाला में सुलगता रहता है ।

8. ऋणदाताओं की दूषित कार्य प्रणाली -प्रायः ऋणदाता ब्याज से प्राप्त होने वाली नियमित आय पर ही निर्भर करते हैं और इसीलिये वे मूलधन की चिन्ता नहीं करते । वे अनुत्पादित कार्यो के लिये भी सहर्ष ऋण देते हैं । ऋण प्राप्ति की सरलता एवं महाजन की तत्परता से प्रलोभित होकर बहुधा श्रमजीवी

अपनी आश्यकता एवं देय क्षमता से भी अधिक ऋण ले लेते हैं। इसके अतिरिक्त यह भी देखने में आता है कि ऋणदाता ब्याज का मूलधन के भुगतान के समय प्राप्ति की रसीद नहीं देते तथा हिसाब-किताब की पुस्तकों में भी त्रुटिपूर्ण प्रविष्टियाँ कर देते है।

9. बीमारी - जनसंख्या के आधिक्य के कारण नगरों मे आए दिन विभिन्न महामारियों के प्रकोप के कारण श्रमजीवियों को ऋण लेने की आवश्यकता पड़ती रहती है।

10. कम आय - अन्य उन्नतिशील देशों की अपेक्षा हमारे देश में औद्योगिक श्रमिकों की मजदूरी, बोनस व मँहगाई आदि की दरें बहुत नीची है, जिसके कारण उनकी आय बहुत कम होती है। अपने निम्न जीवन स्तर को बनाये रखने के लिये उसे जो अनके व्यय करने पड़ते हैं, उनकी पूर्ति नियमित आय से नहीं हो पाती। ऐसी दशा में आय व व्यय के अन्तर को पूरा करने के लिये उसे ऋणदाताओं के दरवाजे खटखटाने पड़ते हैं। उसके पास अतिरिक्त आय का कोई साधन भी नहीं होता।

11. बेरोजगारी - हमारे देश में बेरोजगारी की गहन समस्या है। कृषि श्रमिक तो वर्ष में 3-4 महीने हाथ पर हाथ रखे बैठे रहते हैं। अतः वे रोजगार की तलाश में शहरों को भागते हैं। नगरों में भी उन्हें बेरोजगारी की समस्या का सामना करना पड़ता है। बेबस होकर अपना पेट पालने के लिये उन्हें ऋणग्रस्त होना पड़ता है।

12. ऋण लेने के उद्देश्य - यदि उत्पादक कार्यो के लिये ऋण लिये जायें, तो यह अधिक भयंकर नहीं होता; परन्तु हमारा औद्योगिक श्रमिक अनुत्पादक कार्यो के लिये भी ऋण लेता है। परिणामस्वरूप वह कोई ऐसा नहीं कर पाता, जिसे ऋण की वापसी की व्यवस्था हो सके। अतः वह जीवन भर ऋणग्रस्तता बना रहता है।

13. **सरकार की उदासीनता** - औद्योगिक श्रमिकों की ऋणग्रस्तता के लिये कुछ सीमा तक सरकार की उदासीनता भी उत्तरदायी है। वह महाजनों, साहूकारों व देशी बैंकरों, आदि पर उचित नियंत्रण नहीं लगा सकी है, जिसके कारण ये लोग श्रमिकों का खूब शोषण करते हैं। खास सुविधायें देने के सम्बन्ध में सरकार ने जो प्रयास किये हैं, वे विशेष उत्साहवर्धक नहीं कहे जा सकते।

14. **अन्य कारण** - कुछ अन्य कारण भी औद्योगिक श्रमिकों की ऋणग्रस्तता के लिए उत्तरदायी हैं। उदाहरणार्थ : (i) सहकारी आन्दोलन की धीमी गति भी इसके लिए उत्तरदायी है। (ii) ऋणग्रस्तता का एक अन्य कारण कारखानों का कुप्रबन्ध है।

ऋणग्रस्तता के दुष्परिणाम

श्रमिकों की ऋणग्रस्तता के निम्नलिखित कुप्रभाव देखे जाते हैं -

1. **निम्न जीवन स्तर** - श्रम जाँच समिति के अनुसार श्रमिकों की निर्धनता एवं निम्न जीवन स्तर का प्रधान कारण उनकी भारी ऋणग्रस्तता है। श्रम जीवियों की अधिकांश आय भारी ब्याज चुकाने में ही व्यय हो जाती है और वह अपने परिवार के उपभोग के लिये न्यूनतम आवश्यकताओं का भी प्रबन्ध नहीं कर पाता। फलतः अनुचित एवं अपर्याप्त आहार के कारण उसका व उसके परिवार के अन्य व्यक्तियों का स्वास्थ्य कुप्रभावित होता है।

2. **कार्य कुशलता में कमी** - ऋणग्रस्तता के परिणामस्वरूप श्रमिकों की कार्यक्षमता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। भूखा पेट, नंगा शरीर, किसी न किसी रोग से पीड़ित श्रमिक सदैव अपने ऋण बोझ को उतारने की चिन्ता से ग्रस्त रहता है। ऐसी परिस्थिति में कौन यह आशा कर सकता है कि श्रमिक मन लगाकर कार्य करेगा?

3. **श्रमिकों के स्वाभिमान को ठेस** - आए दिन ऋणदाता श्रमिकों को मूलधन अथवा ब्याज की अदायगी का स्मरण दिलाता रहता है। यदि राशि अधिक बढ़ जाती है और श्रमिक ऋणदाता की इच्छा के विरुद्ध कार्य करता है, तो वे उसे न्यायालय की धमकी देते हैं। कभी-कभी ब्याज न चुकाने के कारण प्रतिफल के रूप में ऋणी से ऋणदाता अपने घर का काम भी लेता है।

4. **श्रमिकों में प्रेरणा का विनाश** -ऋणदाता से श्रमिक की स्वतः प्रेरणा का विनाश हो जाता है। ऋण चुकाने की चिन्ता उनकी समस्त अभिलाषाओं को कुचल देती है।

5. **सौदा शक्ति का ह्रास** - ऋणग्रस्तता के कारण श्रमिक की मोल-भाव करने की शक्ति भी कम हो जाती है। उसे सदैव किसी शर्त पर सेवा करके ऋण चुकाने की धुन रहती है। ऐसी परिस्थिति में वह मोल-भाव न करके कम से कम मजदूरी पर भी काम करना स्वीकार कर लेता है।

6. **वर्ग संघर्ष की भावना** - जब श्रमिक पूँजीपतियों व महाजनों, आदि द्वारा सताया जाता है। तो उसमें संघर्ष की भावना प्रबल हो जाती है। वह इन लोगों से घृणा करने लगता है और इस घृणा के कभी-कभी भयंकर परिणाम निकलते हैं।

7. **नैतिक पतन** - श्रमिकों की ऋणग्रस्तता से सम्पूर्ण समाज प्रभावित होता है। महाजन व साहूकार आदि इन श्रमिकों को ऋण देकर सदैव उन्हें अपने चंगुल में रखना चाहते हैं। श्रमिकों के शोषण में महाजन के पोषण को देखकर समाज के अन्य वर्ग भी धन कमाने की लालसा से प्रेरित होकर श्रमिकों को ऋण देने के प्रयत्न करते हैं एवं उनसे अधिक ब्याज वसूल करके स्वयं धनी बनने का प्रयास करते हैं। इससे समाज का नैतिक पतन होता है। ऋण की निर्दयता श्रमिक के मनोबल को गिराती है तथा उसकी कार्यक्षमता को घटा देती है।

ऋणग्रस्तता के निवारणार्थ उपाय -

दो तरह के उपचार उपलब्ध हैं - निषेधात्मक और धनात्मक। ऋण आयोग के मजदूरों को महाजन के चंगुल से बचाने के लिए कुछ प्रस्ताव रखे थे। उन्होंने सिफारिश की थी कि एक निश्चित सीमा के नीचे के वेतन एवं मजदूरी को कुर्की से मुक्ति मिलनी चाहिये और केवल कुछ दशाओं को छोड़कर अन्य दशाओं में मजदूर की गिरफ्तारी एवं कैद नहीं होनी चाहिये। मजदूरों के असुरक्षित ऋणों के निदानों के लिये कदम उठाये जायें, ऋणग्रस्त श्रमिकों की स्थिति को बचाने के लिये सिविल प्रोसीजर कोड में आवश्यक संशोधन कर दिये जायें इत्यादि।

औद्योगिक श्रमिकों की ऋणग्रस्तता दूर करने के लिये प्रमुख सुझाव निम्न है-

1. शिक्षा का प्रसार - शिक्षा के प्रसार से हमारा श्रमिक जागरूक हो जायेगा एवं उत्पादक तथा अनुत्पादक ऋण में अन्तर समझने लगेगा। वह फिर विवेकशील होकर ऋण न लेगा और यदि लेगा तो उसका इतना शोषण न हो सकेगा, जितना कि आजकल होता है क्योंकि देश के प्रचलित कानूनों का उसे ज्ञान हो जायेगा।

2. शराबखोरी पर प्रतिबन्ध - मजदूरों में कुल व्यय का लगभग 10 प्रतिशत मादक वस्तुओं पर खर्च होता है। मादक वस्तुओं के सेवन में श्रमिकों की कार्यक्षमता घटती है। शराबखोरी पर प्रतिबंध से इस समस्या को नियंत्रित किया जा सकता है। समस्त औद्योगिक क्षेत्रों को 'सेवा क्षेत्र' घोषित कर देना चाहिये और शराब का आयात एवं निर्माण कठोरता से बन्द कर देना चाहिये। जब शराब उपलब्ध न होगी तो श्रमिक लाचार हो जायेगा। इससे राज्य सरकारों को कुछ हानि अवश्य होगी किन्तु इससे राष्ट्र सम्पन्न बनेगा।

3. भरती पद्धति में सुधार - श्रमिकों बस्तियों में सहकारी साख समितियों की स्थापना करनी चाहिये जहाँ श्रमजीवियों को सरलता से एवं कम ब्याज दर

पर ऋण मिल सके। इसके लिये यह भी नितान्त आवश्यक है कि श्रमजीवियों में परस्पर सहकारिता की भावना भी हो।

4. **श्रमिकों की आय में वृद्धि** - श्रमिकों के पारितोषण में वृद्धि कर दी जाये जिससे कि वे अपनी सभी आवश्यकताओं की स्वयं पूर्ति करने में समर्थ हो सके। श्रमिकों का आर्थिक स्थिति में सुधार करने के लिये निम्न सुझाव हैं (1) न्यूनतम भृति अधिनियम द्वारा निर्धारित मजदूरी की दर में वृद्धि कर दी जायें, (2) श्रमिकों को महँगाई व बोनस उचित रूप में दिया जाये, (3) श्रमिकों को सहभागिता की योजना के अन्तर्गत लाभांश व प्रबन्ध में भी भावी बनाया जाये।

5. **ऋण प्रर्ति के स्रोतों पर नियंत्रण** - महाजनों की दोषपूर्ण नीतियों पर प्रतिबन्ध लगा देना चाहिये। उनके द्वारा लिये जाने वाले ब्याज की एक अधिकतम सीमा निर्धारित कर देनी चाहिये। महाजनों आदि को हिसाब-किताब की पुस्तकें रखनी चाहिये। श्रमिकों की भर्ती करने वाले मध्यस्थों को श्रमिकों के साथ किसी प्रकार का लेन-देन नहीं करना चाहिये।

6. **श्रमिक आवास की समुचित व्यवस्था** - औद्योगिक नगरों के निकट श्रमिकों के आवास की समुचित व्यवस्था न होने के कारण उन्हें अपने परिवार के सदस्यों से मिलने के लिये बार-बार गाँव जाना पड़ता है। जिससे अनावश्यक व्यय होता है। कभी-कभी तो अपनी पत्नियों से दूर रहने के कारण व वेश्यागमन के चक्कर में पड़कर वर्बाद हो जाते हैं। अतः उनके आवास की समुचित व्यवस्थाकर देने से ऋण की समस्या का अप्रत्यक्ष ढंग से समाधान किया जा सकता है।

7. **पंचायतों का विकास** - हमारे अशिक्षित श्रमिकों को मुकदमेबाजी में भी अनावश्यक रूप में धन अपव्यय करना पड़ता है। अतः यदि प्रत्येक औद्योगिक केन्द्र में पंचायतों (या जन अदालतों) की स्थापना कर दी जाये, तो

श्रमिकों के छोटे-छोटे झगड़ों का निपटारा आसानी से हो सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में ग्राम पंचायतें ही इस कार्य को कर सकती हैं।

8. अन्य सुझाव - (1) ऋण सम्बन्धी अधिनियम के निर्माण से भी समिति में सुधार किया जा सकता है। (2) ऋण की वसूली के लिये महाजनों, पठानों आदि की औद्योगिक संस्थान के चक्कर लगाना अपराध घोषित कर दिया जाये।

ऋणग्रस्तता निवारण सम्बन्धी वैधानिक व्यवस्था -

1. मजदूरी की कुर्की रोकने सम्बन्धी व्यवस्था - भारत सरकार ने नागरिक दण्ड संहिता में यह संशोधन किया है कि जिन श्रमिकों को वेतन 100 रूपये मासिक से कम है, उनकी कुर्की नहीं की जा सकती। इसी प्रकार प्रत्येक सरकारी कर्मचारी के वेतन के पहले 100 रूपये और शेष के आधे भाग को कानूनी छुआ दे दी गई है। यदि किसी श्रमिक के आधे वेतन की कुर्की लगातार 24 माह तक होती रही है तो उसके बाद एक वर्ष तक कुर्की रोक दी जायेगी।

2. ऋण हेतु कारावास के विरूद्ध व्यवस्था - श्रमिकों द्वारा ऋण का भुगतान न करने की दशा में उनके महाजन उन्हें जेल भिजवा देते थे। इस भय को दूर करने के लिये पंजाब सरकार ने ऋणग्रस्तता सहायता अधिनियम पास किया था जिसके अनुसार किसी भी श्रमिक को उसकी ऋण की धनराशि के लिये तब तक जेल नहीं भेजा जा सकता जब तक कि वह उनकी धनराशि देने के लिये तैयार है जितनी कि उसकी सम्पत्ति की सामर्थ्य है। (यदि कुर्की कराई जाये)। इसी आधार पर भारत सरकार ने नागरिक दण्ड संहिता में यह संशोधन किया है कि केवल उन अवस्थाओं को छोड़कर जबकि यह सम्भावना हो कि ऋण न्यायालय के क्षेत्राधिकार से बाहर चला जायेगा

अथवा सरकारी आदेश के निष्पादन में बाधा डालेगा, ऋण की धनराशि के लिये उसे कारावास का दण्ड नहीं दिया जा सकेगा।

3. **ऋण मुक्ति अधिनियम** - इस आशय का कानून मध्य प्रदेश सरकार ने पास किया था । इसके अनुसार कोई भी श्रमिक, जिसका ऋण उसकी परिसम्पत्ति और तीन माह की मजदूरी से अधिक हो, अपने ऋण की समाप्ति के लिये प्रार्थना-पत्र दे सकता है। न्यायालय श्रमिकों के वेतन तथा उनके आश्रित की संख्या को ध्यान में रखते हुये उस राशि को निर्धारित कर देता हैं जिसे श्रमिक को उचित समय में देना होगा।

4. **औद्योगिक संस्थानों को घेरने पर प्रतिबन्ध** - बंगाल, बिहार व तमिलनाडु सरकारों ने अधिनियम द्वारा यह व्यवस्था की है कि कारखानों के निकट श्रमिकों को घेर कर अथवा डरा-धमका कर ऋण वसूल न किया जाये। यदि ऋणदाता ऐसे प्रयास करता है, तो उसे छः माह के कारावास या अर्थ दण्ड अथवा दोनों से दण्डित किया जा सकेगा।

श्रमिकों की आवास व्यवस्था :-

सामान्यतः 'औद्योगिक आवास व्यवस्था' से हमारा आशय औद्योगिक श्रमिकों के रहने के लिए मकानों की समुचित व्यवस्था से है। रहने की व्यवस्था अच्छी भी हो सकती है और दूषित भी। किन्तु यह आवास व्यवस्था का संकुचित अर्थ है। व्यापक दृष्टि से जो हमारे लिये अधिक मान्य है, आवास व्यवस्था के अन्तर्गत हम केवल चार दीवारों वाले मकानों का ही समावेश नहीं करते, वरन् मकान के आस-पास का वातावरण भी इसमें सम्मिलित है। इस प्रकार 'आवास व्यवस्था', से हमारा आशय श्रमिकों के लिए एक ऐसे आश्रय से है, जो कि आरामदायक हो अर्थात् जहां श्रमिक तथा उसके परिवार के सभी लोग सुविधा से रह सके। उसका आशय स्वस्थ वातावरण एवं ऐसी सेवाओं की उपलब्धि से भी है जिनसे श्रमिकों का स्वास्थ्य व कार्य-क्षमता बनी रहे एवं वे सुखमय जीवन व्यतीत

कर सके। इसके अतिरिक्त वहां चिकित्सा, शिक्षा, क्रीड़ा, मनोरंजन, इत्यादि की भी पर्याप्त सुविधा होनी चाहिए।

विशेषतायें :- आधुनिक अवधारणा के अनुसार 'आवास' में निम्न विशेषतायें होनी चाहिए- (1) मकान में परिवार के सदस्यों के अनुपात में पर्याप्त कमरे होने चाहिए, (2) मकान की स्थिति स्वच्छ व प्रदूषण रहित वातावरण में होनी चाहिए, (3) मकान के प्रत्येक कक्ष का उपयुक्त प्रयोग होना चाहिए, जिसके लिए वह बनाया गया है, (4) प्रत्येक मकान में खुला आँगन होना चाहिए, (5) मकान में वायु व प्रकाश की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए, (6) बच्चों के खेलने व किचिन गार्डन की व्यवस्था होनी चाहिए, (7) मकान का किराया श्रमिकों की सामर्थ्य के भीतर होना चाहिए, (8) मकान साफ-सुथरे, पक्के व पुते हों तथा (9) मकानों में बिजली-पानी की भी व्यवस्था होनी चाहिए।

<u>अच्छी आवास व्यवस्था की आवश्यकता:-</u>

सभ्य जीवन में आवास एक मानवीय परिवार की पहली आवश्यकता है। आधुनिक सभ्यता की यही माँग है कि श्रमिकों के लिए आवास व्यवस्था श्रेष्ठ व पर्याप्त हो। आवास-व्यवस्था उस भौतिक वातावरण का एक प्रमुख भाग है, जो हमारे स्वास्थ्य और कल्याण को निरन्तर प्रभावित करता रहता है। एक श्रमिक प्रातःकाल से लेकर सायंकाल तक कारखानों की चार दीवारियों के भीतर काम करता है और संध्या को कारखाने से लौटने पर यदि उसे वैश्यालय और मदिरालय या टूटी-फूटी गन्दी बस्ती में आश्रय लेना पड़े, तो उसके स्वास्थ्य एवं नैतिक कल्याण की आसानी से कल्पना की जा सकती है। श्रमिकों के लिए आवास की पर्याप्त व्यवस्था न करना, वास्तव में मानवता को ठुकराना हैं

हमारे देश में औद्योगिक श्रमिकों के लिए पर्याप्त आवास व्यवस्था के विषय में जो कुछ भी कहा जाए कम ही होगा। भारतीय श्रमिक अकुशल माना जाता है। किन्तु इस बात पर कम ही विचार किया गया है कि इस अकुशलता का एक

महत्वपूर्ण कारण उनके लिए आवास की संतोषजनक व्यवस्था का अभाव होना है। सच तो यह है कि स्वास्थ्य और आवास व्यवस्था एक दूसरे से घनिष्ठतः सम्बन्धित हैं और ये दोनों मिलकर कार्यक्षमता की सीमा का निर्धारण करते हैं। स्वर्गीय श्री जगजीवन राम ने की प्रस्तावना में इस सम्बन्ध में लिखा है कि "भारतवर्ष में औद्योगीकरण बहुत तेज गति से बढ़ रहा है। इसकी प्रगति मजदूरी और लाभ से नापी जाती है, किन्तु इसके साथ-साथ मनुष्यों का जो ढेर लगता है, उस ओर शायद ही किसी का ध्यान जाता हो। जैसा कि हड़तालों व तालाबन्दियों से विदित है कभी-कभी तो श्रमिक की दयनीय दशाओं को देखकर हमारा खून खौलने लगता है और उसमें विद्रोह की आग भड़कने लगती है इसलिए हमारी समस्या औद्योगीकरण को ऐसी दिशा में ले जाने की है जहाँ प्राचीन मनुष्यों के स्वभाव से उसका मेल हो सके। आधुनिक औद्योगिकवाद को सही दिशा में मोड़ने का एक साधन यह है कि श्रमिक को अच्छा मकान दिया जाए जिससे कि वह घर से बाहर आपने सुख की हानिकारक खोज में न रहे और न ही उसके बच्चे गन्दी नालियों और कूड़े-करकटों के ढेर के पास अपना अधिकांश समय व्यतीत करें।"

<u>प्रमुख औद्योगिक क्षेत्रों में आवास-व्यवस्था :-</u>

भोजन और वस्त्र के उपरान्त 'मकान' मनुष्य की तृतीय प्रमुख आवश्यकता है। यों तो हमारी ये तीनों समस्यायें गम्भीर हैं, किन्तु मकानों की समस्या, मुख्यतः औद्योगिक नगरों में बड़ा विकराल रूप धारण करती जा रही है। उनके निवास स्थानों को 'मकान' की संज्ञा देना ही लज्जा की बात है। उन्हें मानव के योग्य नहीं कहा जा सकता। कानपुर में भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने 2 अक्टूबर, 1952 को श्रमिकों के निवास स्थान का निरीक्षण करते हुए उन्हें 'नरक-कुण्ड' कहा था। पण्डित नेहरू ने कहा था कि भारतीय श्रमिकों की निवास समस्या बहुत ही जटिल है और उनके रहने के स्थान मैली-कुचैली गली से अच्छे नहीं कहे जा सकते। अन्य औद्योगिक केन्द्रों में भी उनकी गन्दी बस्तियां होती

हैं, जहां सफाई का नाम नहीं, कोठरी मेंसूर्य का प्रकाश नहीं पहुँचता, फर्श में नमी रहती है, रोशनदान का पता नहीं तथा स्वच्छ वायु आ ही नहीं सकती।''

1. **टाटा नगर की श्रम बस्ती** - यहां सर्वश्री टाटा की ओर से लोहे एवं इस्पात उद्योग में काम करने वाले श्रमजीवियों के लिये लगभग 15,000 मकान बनवाये गये हैं। प्रत्येक मकान में दो कमरे, रसोईघर तथा एक बरामदा हैं इसके अतिरिक्त स्नानागार एवं फ्लश संडास भी हैं। सभी मकान पक्के तथा कुछ में बिजली के पंखे भी हैं। यह सब व्यवस्था दक्ष कारीगरों के लिये है, अकुशल श्रमजीवियों के निवास स्थान बड़े गन्दे एवं असंतोषजनक हैं।

2. **मद्रास की श्रम बस्ती** - मद्रास में भी श्रमिकों के निवास स्थान बड़े असंतोषजनक हैं कुछ मिल-मालिकों के लिये क्वार्टर्स बनवाये हैं, परन्तु उनमें अनेक श्रमिक रहना पसंद नहीं करते, क्योंकि उनके विरूद्ध खुफिया जाँच होती रहती है यदि कभी वे हड़ताल में भाग लेंगे तो वे क्वार्टर से निकाल दिये जायेंगे। ऐसे वातावरण में वे रहना पसंद नहीं करते।

3. **शोलापुर की श्रम बस्ती** - शोलापुर में श्रमिकों की गृह व्यवस्था संतोषजनक है। इसी प्रकार मदुरा में श्रमिकों के लिये सुन्दर मकान बने हैं, जिनमें प्रायः सभी वर्तमान सुविधायें उपलब्ध हैं। नागपुर की एम्प्रेस मिल एवं बंगलौर की सूती, ऊनी तथा रेशमी वस्त्र मिल के श्रमजीवियों के लिये बड़ी सुन्दर गृह-व्यवस्था हैं रानीगंज तथा झरिया की कोयले की खानों में काम करने वाले श्रमिकों के लिये जो मकान बनवाये गये हैं, वे Mines Board of Health के अदेशानुसार बनवाये गये हैं, अतः संतोषजनक कहे जा सकते हैं। असम के चाय बगीचों में काम करने वाले श्रमिकों की गृह दशा अत्यन्त शोचनीय है। वहां कहीं भी स्वच्छता नहीं है तथा मलेरिया का बड़ा बोलबाला है।

4. **बागानों में श्रमिक के आवास की स्थिति** - बागानों में तीन प्रकार के मकान बने हुए है- (1) कच्चे, (2) अर्द्ध-कच्चे और (3) पक्के । लगभग 90 प्रतिशत मकान कच्चे हैं । इनमें खिड़कियाँ और बरामदे नहीं होते । पक्के मकानों में खिड़कियाँ होती है । असम के रहने के स्थानों की स्थिति अधिक संतोषजनक नहीं है । बहुत से मकान सिंचाई के क्षेत्रों में बने होते हैं जहाँ जल इकट्ठा हुआ करता है । जल के लिये कुओं की व्यवस्था है, जो प्रायः ढके हुए नहीं होते । सफाई की स्थिति भी काफी असंतोषजनक है । नहाने और धोने के स्थानों का सर्वथा अभाव सा ही है । पश्चिमी बंगाल में मकान बहुत कम ऊँचाई वाले होते हैं, जिनमें रोशनी का पर्याप्त प्रबन्ध नहीं होता। दीवारें बाँस की बनी होती हैं, जिनके ऊपर गारे का प्लास्टर लगा होता है । दक्षिण के बागानों में सभी श्रमिकों के लिए आवास की व्यवस्था है । पिछले दस सालों में बहुत से कमरों का निर्माण हुआ है, जिनमें सुविधाओं का ध्यान रखा गया हैं कॉफी के बागानों में स्थिति सामान्यतः खराब ही है । दक्षिण भारत के बागानों में आकस्मिक एवं स्थानीय श्रमिकों के अलावा सभी श्रमिकों के लिए आवास सुविधायें दी जाती हैं । कहवा बागानों में स्थिति सामान्यतः खराब ही है । दक्षिण भारत के बागानों में आकस्मिक एवं स्थानीय श्रमिकों के अलावा सभी श्रमिकों के लिए आवास सुविधाएें दी जाती है । कहवा बागानों में आवास संबंधी दशायें प्रायः खराब है । ट्रावनकोर ने रबर बागानों में बैरकों की तरह के मकान बने हुए हैं ।

5. **खानों में श्रमिकों के लिए आवास व्यवस्था** - खानों में श्रमिकों के लिए पर्याप्त आवास व्यवस्था के अभाव के लिए निम्नलिखित घटक उत्तरदायी हैं -

(क) सेवायोजकों द्वारा उपेक्षा, जबकि वे ही आवास सुविधायें देने की स्थिति में हैं ।

(ख) खानों का अनार्थिक आकार और इसलिए न्यूनतम आवास सुविधा देने में इनकी वित्तीय असमर्थता।

(ग) निर्माण हेतु भूमि मिलने में कठिनाई।

(घ) इमारती सामान मिलने में कठिनाई तथा

(ङ) खानों में श्रमिकों का अस्थायित्व जिससे उन्हें निजी घर बनाने के लिए प्रेरणा की कमी होती है। यदि वे चाहें भी तो ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि उनकी मजदूरी इतनी कम होती है कि मकान बनाने में विनियोग करना कठिन हो जाता है। कुछ श्रमिक किराया देने की स्थिति में नहीं होते।

कोयले की खानों पर श्रमिकों के रहने के लिए जो मकान बनाये गये हैं उन्हें 'धोरा' कहा जाता है। इनमें एक कमरा और एक बरामदा होता है और अधिकांश एक दूसरे के पीछे होते है। एक 'धोरा' में लगभग 12 से 15 व्यक्ति रहते हैं। श्रमिक सर्दियों में काम दिलाने के लिये अपने बहुत से सम्बन्धियों को ले आते हैं जो बाद में वहीं रहने लगते हैं। जल, रोशनी, जल की निकासी, पाखाने इत्यादि की समुचित व्यवस्था इनमें नहीं होती। नहाने और कपड़े धोने की कोई अलग से व्यवस्था नहीं होती। श्रमिक प्रायः गन्दे तालाबों में नहाते हैं।

कोयला खान श्रम-कल्याण निधि संगठन ने लगभग 70,000 मकान व बैरक बनवाये है, जो आवश्यकता को देखते हुए बहुत हैं। रानीगंज कोयला खानों में लगभग 80 श्रमिकों के लिए कोयला खानों द्वारा आवास की सुविधायें प्रदान की जा रही हैं। हैदराबाद में अधिकांश कोयला खानों में भीड़-भाड़ पाई जाती है किन्तु कोयला कल्याण कोष के अधीन स्थिति में कुछ सुधार किए जा रहे हैं। कोलार सोने की खानों में सेवायोजकों ने अपने श्रमिकों के लिए एक बस्ती बनाई है जो साफ-सुथरी है। हट्टी स्वर्ण खानों में भी कम्पनी ने अपनी श्रमिकों को मुफ्त आवास सुविधाऐं दी हैं अभ्रक खानों में कल्याण कोष से श्रमिकों के लिए विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत 1988 तक 800 से अधिक मकान बनाए गए।

लाइन स्टोन एवं डोलोमाइट खानों में कल्याण कोष से स्वीकृत मकानों से लगभग 2½ हजार मकान बनाए जा चुके हैं।

1. **स्वास्थ्य पर कुप्रभाव** - दोषपूर्ण गृह-व्यवस्था श्रमिकों के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये शुद्ध वायु तथा प्रकाश उतना ही आवश्यक है, जितनी कि कोई अन्य वस्तु। जिन स्थानों या मकानों में सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँच पाता, वहाँ नाना प्रकार की बीमारियों के कीटाणु पैदा हो जाते हैं। ऐसे मकानों में सदैव सीड़न बनी रहती है। जिन मकानों के पास कूड़ा-करकट पड़ा रहता है वहाँ भी सदैव भयानक बीमारियों के प्रकोप की आशंका बनी रहती है, यदि एक कमरे में अनेक व्यक्ति रहते हैं, तो आक्सीजन के अभाव से ही अस्वास्थ्यवर्धक परिणाम हो सकते हैं। अतः यदि श्रमिकों के लिये अच्छे मकानों की व्यवस्था नहीं की जाती, तो वे नाना प्रकार की भयानक बीमारियों के शिकार बन जाते हैं। वास्तव में मकानों की दुर्व्यवस्था उस कुटिल चक्र का एक भाग है, जिसमें हम जमाखोरी, गरीबी, पाप, असावधानी व अज्ञानता को सम्मिलित करते हैं। मकानों में बहुत अधिक व्यक्तियों का एक साथ रहना क्षय रोग एवं बाल मृत्यु का कारण बनता है। आवास की उचित व्यवस्था होने के साथ-साथ इनकी दर मे कमी देखी गई है। एक कमरे के स्थान पर दो या तीन कमरे वाले मकानों की व्यवस्था ने भी इस स्थिति में आश्चर्यजनक उन्नति दिखलाई है।

2. **कुशलता पर कुप्रभाव** - आवास व्यवस्था का श्रमिकों की कार्यक्षमता से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। कार्यकुशलता की वृद्धि तथा उसकों निरन्तर बनाये रखने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि श्रमिकों का स्वास्थ्य अच्छा हो तथा उन्हें गहरी नींद आती तो परन्तु अच्छे मकानों के अभाव में श्रमिक न तो अपने स्वास्थ्य को ही बनाये रख सकते हैं और न ही गहरी नींद

सो सकते हैं। गहरी नींद के लिये स्वच्छ वायु, उचित कमरा तथा शान्त वातावरण की आवश्यकता पड़ती है। भारतीय श्रमिकों को मिलने वाले मकानों में इन सुविधाओं का अभाव है। अतः मकानों की दुर्व्यवस्था से उनकी कार्यक्षमता में बाधा पड़ती है।

3. सेवायोजकों को हानि - पर्याप्त आवास के अभाव में सेवायोजकों को भी श्रमिकों की न्यून कार्यक्षमता, बुरे स्वास्थ्य, अनुपस्थिति आदि के कारण हानि उठानी पड़ती है, और ये सभी बुराईयाँ पर्याप्त आवास व्यवस्था के अभाव में ही पैदा होती हैं। मकानों का अभाव अथवा उचित व्यवस्था का होना औद्योगिक अशांति का भी एक प्रमुख कारण है।

4. सामाजिक वातावरण दूषित होता है - आवास की दुर्व्यवस्था का समाज के वातावरण पर भी बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। अधिकतर श्रमिक बड़े-बड़े अहातों में निवास करते हैं, जिनमें छोटे-छोटे क्वाटर्स होते हैं। इन क्वाटर्स की बनावट इस प्रकार होती है कि किसी प्रकार का पर्दा रखना असम्भव हो जाता है। नल, शौचालय, मूत्रालय, आदि में महिलाओं व पूरूषों का कोई भेद नहीं होता। इसके अतिरिक्त इन मकानों के अन्दर बाल-बच्चों का लगातार 24 घण्टे रहना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।

5. सांस्कृतिक स्तर में गिरावट - मकानों की दुर्व्यवस्था के कारण श्रमिकों का सांस्कृतिक स्तर भी गिर जाता है। वैश्यागमन आदि कुप्रवृत्तियों के कारण श्रमिकों का नैतिक पतन हो जाता है।

6. राष्ट्र को हानि - श्रमिकों के लिये आवास की दुर्व्यवस्था से केवल श्रमिक, उनके परिवार के सदस्य तथा सेवायोजक ही कुप्रभावित नहीं होते, वरन् राज्य तथा केन्द्रीय सरकार के ऊपर भी इनका बुरा प्रभाव पड़ता है। मकानों की पर्याप्त व्यवस्था के अभाव में श्रमिकों की कार्यकुशलता कम हो जाती है, जिससे राष्ट्रीय उत्पादन-क्षमता गिर जाती है। इससे एक तो देश में

वस्तुओं का अभाव हो जाने की आशंका हो जाती है और दूसरे, न्यून उत्पादन से उसका उत्पादन कर कम हो जाता है । यही नहीं, राष्ट्रीय लाभांश की मात्रा भी कम हो जाती है । साथ-साथ श्रमिकों की दशा सुधारने के लिए सरकार को समाज कल्याण पर बहुत अधिक व्यय करना पड़ता है ।

अन्य दुष्परिणाम निम्नलिखित है -

1. नीरस गृह-जीवन - अनुपर्युक्त एवं सुविधाहीन घरों के कारण श्रमिकों का घरेलू जीवन नीरस एवं आनन्दरहित हो जाता है ।
2. बीमारियों का प्रकोप - गन्दगी के कारण मलेरिया और क्षय जैसी भयानक बीमारियों का जोर रहता है । श्रमिकों का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, उनके मस्तिष्क संकुचित हो जाते हैं तथा मानसिक विकास का कोई अवसर नहीं रहता ।
3. कार्यक्षमता का ह्रास - अस्वस्थ्य वातावरण से श्रमिकों की कार्यक्षमता में भी ह्रास होने लगता है जिससे उनकी उत्पादन शक्ति कम हो जाती है और इसका प्रभाव उनकी मजदूरी पर पड़ता है । कुछ तो उनकी आय पहले से ही कम हो जाती है और इसका प्रभाव उनकी मजदूरी पर पड़ता है । जिसके कारण वे अपना जीवन स्तर ऊँचा नहीं उठा सकते ; अतः मजदूरी की प्रत्येक कमी उनके जीवन स्तर को और भी कुप्रभावित करती है ।
4. औद्योगिक अशान्ति - अपूर्ण और गन्दे मकान भी औद्योगिक अशान्ति के कारण होते हैं ।
5. शिशु-मृत्यु - एक सबसे बड़ी बुराई अधिक संख्या में शिशु मृत्यु है जो बम्बई की गन्दी बस्तियों में पाई जाती है । मृत्यु संख्या निवास के कमरों के विपरीत अनुपात में है । उदाहरणार्थ, एक जाँच के अनुसार यह पता लगा है कि एक कमरे वाले निवास-स्थानों में मृत्यु संख्या 78.3 प्रतिशत ।

निष्कर्ष -

संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि श्रमिकों के लिये आवास की दुर्व्यवस्था के परिणामस्वरूप श्रमिक, सेवायोजक, उपभोक्ता तथा सरकार सभी को कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। अतः इस महत्वपूर्ण समस्या का प्रत्येक दृष्टिकोण से समाधान होना चाहिए और शीघ्र होना चाहिए।

आवास-समस्या को सुलझाने के लिए किए गए प्रयास -

भारतीय श्रमिकों के आवास की समस्या के समाधान के केन्द्रीय व राज्य सरकारों, उद्योगपतियों, नगरपालिकाओं, तथा अन्य संगठनों द्वारा जो प्रयास किए गए है, उनका संक्षिप्त विवरण नीचे प्रस्तुत है-

(1) राज्य सरकार की योजनायें -

स्वतंत्रता प्राप्ति के समया से ही सरकार ने यह स्वीकार किया है कि आवास सुविधा प्रदान करने के लिए राज्य सरकारों को विशिष्ट भूमिका अदा करनी है। इस दशा में किए गए प्रयासों का संक्षिप्त ब्योरा इस प्रकार है -

1. सामाजिक आवास योजनायें - सामाजिक आवास कार्यक्रमों को लेकर केन्द्रीय सरकार की भूमिका ऋण और अनुदान के रूप में राज्य सरकारों और केन्द्र शासित प्रशासनों को व्यापक वित्तीय सहायता देना और कार्यक्रमों की प्रगति पर नजर रखने के तक सीमित है। आर्थिक नियोजन के प्रारम्भ से ही इन योजनाओं का सूत्रपात हुआ, जैसे-

(क) औद्योगिक श्रमिकों और समाज के आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्गो के लिए समन्वित रियासती योजना (1952),

(ख) कम आय वाले वर्ग के लिए आवास योजना (1954),

(ग) बागान श्रमिकों के लिए रियासती आवास योजना (1956),

(घ) मध्यम आय वर्ग आवास योजना (1959),

(ड़) राज्य सरकार के कर्मचारियों के लिए किराया आवास योजना (1959),

(च) तंग बस्तियों की सफाई सुधार योजना (1956),

(छ) ग्रामीण आवास परियोजना (1957),

(ज) भूमि अधिग्रहण तथा विकास योजना (1959),

(झ) ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिहीन श्रमिकों के लिए आवासीय स्थलों का प्रावधान (1971)।

जुलाई, 1982 में समस्त सामाजिक आवास योजनाओं को, आय समूहों के आधार पर, पाँच वर्गों में विभक्त कर दिया गया :-

(क) आर्थिक दृष्टि से कमजोर तबके के लिए आवास योजना,

(ख) कम आय समूह के लिए आवासीय योजनायें, (ग) मध्यम आय समूह के लिए आवासीय योजनायें,

(घ) राज्य सरकार के कर्मचारियों के लिए किराए की आवासीय योजनायें, और

(ड़) भूमिहीन श्रमिकों के लिए ग्रामीण आवास-स्थान निर्माण सहायता योजना।

2. उपदान या आर्थिक सहायता प्राप्त गृह-निर्माण योजना - 1952 में प्रारम्भ की गई इस योजना के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार ने आवास-निर्माण और भूमि का 20 प्रतिशत व्यय उठाने का उत्तरदायित्व लिया किन्तु शर्त यह रखी कि इतना ही व्यय उद्योगपति भी करें। उद्योगपतियों की ओर से उत्साह में कमी के कारण यह योजना विशेष सफल नहीं हो सकी।

3. निम्न आय वर्ग आवास योजना - 1954 में प्रारम्भ की गई इस योजना के अन्तर्गत ऐसे व्यक्तियों को मकान बनाने के लिए ऋण दिया जाता है जिनकी वार्षिक आय 7,200रु. से अधिक नहीं है। ऋण की राशि विकसित भूमि

की लागत के 80 प्रतिशत तक होती है और अधिकतम ऋण राशि 14,500 रू. तक होती है।

4. **मध्यम आय वर्ग आवास योजना** - 1959 में प्रारम्भ की गई इस योजना के अन्तर्गत मकान बनाने के लिए ऋण सामान्य तथा उस धनराशि में से दिया जाता है जिसे जीवन बीमा निगम ऋण के रूप में राज्यों को देता है। केन्द्र शासित प्रदेशों को यह धन केन्द्रीय सरकार देती है। इस योजना के अन्तर्गत मकान बनाने के लिए उन लोगों को ऋण प्रदान किया जाता है जिनकी वार्षिक आय 7201 रू. से 18,000 रू. के बीच होती है। ऋण मकान की लागत का 80 प्रतिशत या 27,500 रू. जो भी अधिक हो, तक होता है। ऋण के योग्य व्यक्तियों को बने बनाए मकान क्रय करने के लिए ऋण मिलता है।
5. **ग्रामीण आवास परियोजना कार्यक्रम** - इन योजना के अन्तर्गत ग्रामीणों को मकान बनाने के लिए ऋण प्रदान किया जाता है, जो लागत का 80 प्रतिशत अथवा अधिकतम 5,000 रू. तक हो सकता है।
6. **किराया आवास योजना** - 1959 में प्रारम्भ की गई इस योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारें अपने कर्मचारियों के लिए मकान बनवाती हैं तथा उन्हें किराए पर देती हैं। 1993 के अन्त तक लगभग 40,000 मकान बनाए जा चुके थे।
7. **भूमि अधिग्रहण और विकास योजना** - 1959 में प्रारम्भ की गई इस योजना के अन्तर्गत राज्य सरकारें और केन्द्र शासित क्षेत्रों के शासन नगरी क्षेत्रों का अधिग्रहण और विकास करते हैं इच्छुक व्यक्तियों को विकसित प्लाट मिल सकें। इसका उद्देश्य भूमि के मूल्य में स्थिरता लाना, नगर के विकास को युक्तिसंगत बनाना एवं अपने आप में पूर्ण सुविधायुक्त बस्तियों के निर्माण को प्रोत्साहित करना है।

(2) केन्द्रीय क्षेत्र की योजनायें -

आवास समस्या के समाधान हेतु केन्द्रीय सरकार द्वारा निम्नांकित योजनायें क्रियान्वित की गई हैं -

1. **बागान श्रमिकों के लिए** - 1956 में शुरू की गई इस योजना के अन्तर्गत केन्द्र सरकार बागान श्रमिकों को किराया लिए बिना मकान देने के लिए आवास व्यवस्था हेतु 50 प्रतिशत ऋण और 37.5 प्रतिशत अनुदान देती है। बागान श्रमिकों की सहकारिताओं को परियोजनाओं की स्वीकृत लागतों का 90 प्रतिशत तक वित्तीय सहायता के रूप में दिया जाता है। एक अन्य योजना के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों को मकान बनाने या बने बनाए मकार खरीदने के लिए ऋण प्रदान किया जाता है। ऋण स्वीकृत करने का अधिकार सम्बन्धित मंत्रालय को होता है।
2. **ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिहीन श्रमिकों के लिए योजना** - इनके लिए भूमि उपलब्ध करवाने की योजना राष्ट्रीय न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम का एक अंग है। 1974 से यह योजना राज्य सरकारों को हस्तान्तरित कर दी गई है।
3. **आवास व्यवस्था तथा अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन** - अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने आवासी अभाव, आवास नीति, आवास स्तर तथा गन्दी बस्तियों की सफाई के प्रश्नों पर अनेक महत्वपूर्ण अध्ययन किये हैं। 1945 में अर्न्तराष्ट्रीय श्रम संगठन ने 'आवास नीति' के नाम से एक अध्ययन पुस्तिका प्रकाशित की, तथा 1948 में इसने एक आवास तथा रोजगार शीर्षक रिपोर्ट प्रकाशित की। इसके अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र महासभा और अन्तर्राष्ट्रीय संघ की विशिष्ट एजेन्सियों (जैसे-यूनेस्को) ने भी आवास समस्याओं तथा नगर नियोजन विषयों पर उपयोगी साहित्य का प्रकाशन किया है।

औद्योगिक आवास व्यवस्था सम्बन्धी कानून -

श्रमिक कल्याण कोषों के अन्तर्गत आवास व्यवस्था के अलावा कुछ राज्य सरकारों ने श्रमिक वर्ग के लिए आवास व्यवस्था कराने हेतु अधिनियम पारित किये हैं जिनका संक्षिप्त विवरण आगे प्रस्तुत है-

1. बम्बई आवास बोर्ड एक्ट, 1948 - के अन्तर्गत राज्य सरकार के नियंत्रण में एक आवास बोर्ड बनाने की व्यवस्था है जिसे औद्योगिक श्रमिकों के लिए आवास योजनायें बनाने और लागू कराने के अधिकार दिये गये हैं। अधिनियम में बेहतरी करो प्लाटों के पुनर्गठन हर्जाना आदि से सम्बन्धित विवादों के निपटारे के लिए विशेष टिब्युनल की स्थापना करने का प्रावधान हैं आवास बोर्ड को यह भी अधिकार दिया गया है कि कुछ परिस्थितियों के अन्तर्गत जैसे किराया देने पर उप किरायेदार रखने पर वह किरायेदारों को मकानों से बेदखल कर दें।
2. मध्य प्रदेश आवास बोर्ड अधिनियम, 1950 में 'मध्य प्रदेश आवास बोर्ड' बनाने के लिये व्यवस्था है। बोर्ड को यह अधिकार दिया गया कि वह औद्योगिक श्रमिकों के लिये अनुमोदित आवास योजनायें हाथ में ले उन्हें लागू कराये। सामान्यतः बोर्ड का कर्तव्य श्रमिकों के ऐसे रिहायसी घर बनाना है जिनमें जल की पूर्ति, सफाई, प्रकाश पार्क, खेल मैदान, परिवहन आदि सुख-सुविधाओं की व्यवस्था हो।
3. मैसूर आवास बोर्ड अधिनियम, 1955 का उद्देश्य आवास बोर्ड को ऐसे कदम उठाने के लायक बनाना है जो आवास-व्यवस्था सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए जरूरी हों। बोर्ड के प्रमुख कार्य हैं नई आवास योजनाओं को तैयार करके उन्हें क्रियान्वित करना, निर्माण लागत को कम करना तथा निर्माण कार्य में तेजी लाना।
4. हैदराबाद श्रमिक आवास अधिनियम, 1952 तथा आन्ध्र प्रदेश आवास बोर्ड अधिनियम, 1962 में एक श्रमिक आवास निगम की स्थापना के लिए

व्यवस्था है जिसे श्रमिकों के लिए यथासम्भव उनके काम की जगह के पास में ही समस्त सुख-सुविधाओं के साथ स्वीकृत स्टैन्डर्ड घरों की व्यवस्था तथा उनकी देखभाल करने का उत्तरदायित्व सौंपा गया है।

5. पंजाब औद्योगिक आवास अधिनियम, 1956 का उद्देश्य भारत सरकार की सहायता प्राप्त औद्योगिक आवास योजना के अन्तर्गत मकानों का प्रबन्ध करना है। अधिनियम के अन्तर्गत मकानों के आबन्टन, किराये की वसूली, बेदखली और दूसरे सम्बन्धित मामलों के लिए व्यवस्था हैं।

6. उत्तर प्रदेश औद्योगिक आवास अधिनियम, 1955 राज्य सरकार या किसी स्थानीय अधिकारी द्वारा बनवाये गये अथवा भारत सरकार की सहायता प्राप्त औद्योगिक योजना के अन्तर्गत या केन्द्रीय अथवा राज्य सरकार की सहायता प्राप्त औद्योगिक योजना के अन्तर्गत या केन्द्रीय अथवा राज्य सरकार की किसी दूसरी योजना के अन्तर्गत निर्मित रियायती मकानों का प्रबन्ध, प्रशासन व नियंत्रण करता है।

7. असम राज्य हाउसिंग बोर्ड अधिनियम, 1972 ने राज्य में आवास सम्बन्धी आवश्यकताओं की ठीक से देख-रेख के लिए असम राज्य हाउसिंग बोर्ड कायम करने की व्यवस्था की है। कुछ अन्य राज्यों जैसे गुजरात और तमिलनाडु में भी मकानों के निर्माण एवं अनुरक्षण हाउसिंग बोर्ड कायम किये गये हैं। राजस्थान में राजस्थान आवास योजनायें (भूमि अधिग्रहण) अधिनियम 1960 में पारित किया गया जिसका उद्धेश्य है कि आवास हेतु भूमि उचित मूल्य पर प्राप्त हो सके।

<u>भारत में श्रम-कल्याण कार्य :-</u>

अर्थ - 'श्रम कल्याण' शब्द का अर्थ विभिन्न देशों व परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न रूप में लगाया जाता है। इसीलिये शाही श्रम आयोग ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि "श्रम कल्याण शब्द की परिभाषा लोचदान होनी चाहिये जिससे कि

विभिन्न देश अपने सामाजिक रीति-रिवाजों, औद्योगीकरण की स्थिति तथा श्रमिकों के शैक्षणिक स्तर के अनुरूप इसके भिन्न-भिन्न अर्थ लगा सकें।" राष्ट्रीय श्रम आयोग, 1969 के मतानुसार भी, "श्रम कल्याण" का विचार आवश्यक रूप से प्रगतिशील है, जिसका अर्थ देश में समय-समय पर, यहाँ तक कि देश में ही उसके मूल्यांकन, सामाजिक संस्थाओं, औद्योगीकरण की मात्रा व सामाजिक तथा आर्थिक विकास के स्तर से भिन्न-भिन्न होता है। इसी कारण श्रम कल्याण को एक नियत सीमा के भीतर बांधना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है, क्योंकि इसका अर्थ बहुत लचीला है। सामान्यतः श्रम कल्याण कार्यों के अन्तर्गत श्रमिकों के बौद्धिक, शारीरिक, नैतिक एवं आर्थिक विकास से सम्बन्धित समस्त कार्यों को शामिल किया जाता है। ये कार्य चाहे नियोक्ता, सरकार या अन्य संस्थाओं द्वारा किए जायें तथा साधारण अनुबन्धात्मक सम्बन्ध अथवा विधान के अन्तर्गत श्रमिकों को जो मिलना चाहिए, उनसे अलावा किए गये हों। इसी आधार पर श्रम कल्याण कार्यों के अन्तर्गत हम आवास-व्यवस्था, चिकित्सा एवं शैक्षणिक सुविधायें, कैन्टीन व भोजनालय की सुविधा, आराम एवं मनोरंजन की सुविधायें, शिशु-गृह या झूलाघर, सवेतन अवकाश, सामाजिक बीमा, उपभोक्ता सहकारी भण्डार आदि सुविधाओं का समावेश कर सकते हैं।

कल्याण कार्य के अंग :-

कल्याण कार्य में कौन-कौन सी बातें सम्मिलित की जाये यह उद्योग की प्रकृति, उसकी स्थिति, काम में प्रगति एवं संगठन के ढंग और उसके परिणाम पर निर्भर करता है। साधारणतः श्रमिकों के कल्याण के लिये निम्न बातों पर आयोजन होना चाहिये।

(1) कारखानों के अन्दर कल्याण कार्य -

1. **वैज्ञानिक भर्ती पद्धति** - श्रमिकों को कारखानों में नियुक्त करने के लिये जिस पद्धति का अनुसरण किया जाए, वह पूर्व निश्चित तथा वैज्ञानिक होनी

चाहिए। हमारे देश में श्रमिकों की भर्ती कर्मकारियोजकों द्वारा होती है। अपनी नौकरी को स्थिर रखने के लिये श्रम जीवियों का नाना प्रकार के कर्मकारियोजकों की सेवा सुश्रुषा करनी पड़ती है। योजकों की आय नियुक्तियों पर ही निर्भर करती है, अतः वे तरह-तरह के बहाने बनाकर पुराने श्रमिकों को निकालने तथा नये श्रमिकों को भर्ती करते रहते है। इसका दुष्परिणाम यह होता है कि श्रमिकों की कार्यक्षमता कम हो जाती है, और उद्योगों का उत्पादन व्यय बढ़ जाता है, अतः श्रमिकों की निपुणता के हित में एवं एक स्थायी श्रमिक वर्ग पाने के लिये यह अति आवश्यक है कि भर्ती की पद्धति का एक वैज्ञानिक आधार पर पुनः संगठन हो, कर्मकारियोजकों द्वारा भर्ती नहीं होनी चाहिये। मजदूरों को भरती के लिये कुछ नियम बना लेने चाहिये। अच्छा हो यदि इस काम के लिये एक योग्य अधिकारी के अधीन एक पृथक विभाग हो। जो श्रमिक कहीं पहले काम कर चुके हों, उनकी भर्ती पुराने सेवायोजकों के प्रमाण पत्र के आधार पर होनी चाहिये। इस संबंध में काम दिलाने वाले केन्द्र पर्याप्त सहायता दे सकते हैं। श्रमिकों की नियुक्ति के पश्चात् उनको कारखानों में ले जाकर उनके साथियों और अफसरों से उनका परिचय करा देना चाहिए। काम के नियम भी उन्हें भली प्रकार समझा दिए जायें। श्रमिकों के मन की शंकाओं को दूर करने के लिये, छुट्टी (वेतन सहित और बिना वेतन के), उन्नति तथा स्थानान्तरण सम्बन्धी नियम बना लेने चाहिऐ और भली प्रकार उनको समझा भी देना चाहिए। श्रमिकों की मजदूरी में मनमानी कटौती नहीं करनी चाहिये। प्रत्येक कार्य उचित आधार पर हो।

2. स्वच्छता, प्रकाश तथा वायु - कारखानों में आवश्यकतानुसार समय-समय पर सफाई और पुताई कराते रहना चाहिऐ। प्रकाश की व्यवस्था इस प्रकार हो कि श्रमिकों को पर्याप्त रोशनी मिल सके। धीमी तथा अधिक तेज रोशनी

काम करने में बाधा डालती है, सिर में पीड़ा और आँखों को हानि पहुँचाती है। प्रायः दुर्घटना होने की भी आशंका रहती है। वायु के आने-जाने का सुप्रबन्ध होना चाहिय। कपड़े की मिलों में कृत्रिम नमी पहुँचाने की योजनायें विवेकपूर्ण होनी चाहिये और उनका इस प्रकार कार्यान्वित किया जाये कि श्रमिकों को न्यूनतम कष्ट हो। सामान्य सफाई के अतिरिक्त श्रमिकों की स्वेच्छा का भी विशेष ध्यान रखा जाये। उनके लिये विशेष कारखानों के श्रमिकों के लिये नहाने व धोने का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिये। यद्यपि जलवायु के दृष्टिकोण से ये सुविधायें बहुत आवश्यक है, फिर भी हमारे देश के कारखानों में इनकी व्यवस्था बहुत ही असंतोषजनक है। प्रत्येक कारखाने में स्नान गृह तथा संडास का होना आवश्यक है। पीने के लिये स्वच्छ जल का भी उचित प्रबन्ध होना चाहिये।

3. **औद्योगिक प्रशिक्षण** - विज्ञान की उन्नति ने वर्तमान उत्पादन क्षेत्र में क्रांति कर दी है। नवीन से नवीन कल एवं यंत्र और सुगम से सुगम तथा अधिक से अधिक फलदायिनी कार्य पद्धतियाँ सुगम होती जा रही है, इसलिये समय-समय पर श्रमिकों के प्रतिक्षण सम्बन्धी उचित आयोजन किये जाये, ताकि वे अपना काम सुचारू रूप से कर सके। यदि वे आधुनिक कार्य पद्धति से अनभिज्ञ है; तो उनकी कार्यक्षमता कम रहेगी। यदि वे मशीनों के प्रयोग में भली प्रकार से परिचित एवं अभ्यस्त नहीं हैं, तो वे मशीनों को पूर्ण चाल से चलाने में भी असमर्थ रहेंगे। प्रायः मशीनों के साथ-साथ अपनी चाल न रख पाने के कारण उनके हाथ-पैर मशीन में आकर कट जाते हैं। दुर्भाग्य से अपने देश में भी अभी तक औद्योगिक शिक्षण का बहुत ही अभाव है।

4. **दुर्घटनाओं की रोकथाम** - खतरनाक यन्त्रों से बचाने के लिये 'ओड' लगा देनी चाहिये। यन्त्रों से बचाव के अन्य उपाय भी करने चाहिये, जैसे आग बुझाने का प्रबन्ध, श्रमिकों के लिये रक्षात्मक पोशाक का प्रबन्ध, आदि।

नये व अनभिज्ञ श्रमिकों को रक्षा के उपाय भली प्रकार समझा देने चाहिये। आकस्मिक परिस्थितियों के लिये एक ऐसा डॉक्टर भी होना चाहिये जो किसी भी समय सेवा के लिये प्रस्तुत हो सके।

(ii) कारखानों के बाहर कल्याण कार्य -

5. सामान्य शिक्षण - सामान्य शिक्षण से श्रमिकों के मस्तिष्क विकसित होते हैं और उनकी समझने की शक्ति बढ़ जाती है। सामान्य शिक्षा केवल औद्योगिक ज्ञान प्राप्त करने में सहायता नहीं देती, वरन् अन्य समस्याओं को समझाने में भी बड़ी सहायता देती है। हमारे देश में अधिकतर हड़तालें श्रमिकों के अज्ञान एवं उनकी अनभिज्ञता के कारण होती हैं। भोले श्रमिकों को अज्ञान पक्ष के लोग बहका देते हैं, और वे रास्ता भटक जाते हैं, अस्तु, यदि इस अनभिज्ञता को दूर किया जाये तो सेवायोजक एक समझदार और कुशल श्रमिक वर्ग प्राप्त कर सकेंगे। शिक्षा की सुविधायें प्रदान करना सेवायोजकों की ओर से एक बहुत बड़ी सेवा होगी। उनको चाहिये कि वे अपने-अपने औद्योगिक क्षेत्र में प्रारम्भिक शिक्षा को अनिवार्य कर देगें और उनका उचित प्रबन्ध करें। प्रौढ़ों के लिये भी उचित शिक्षा का प्रबन्ध करना चाहिये। उनके लिये रात्रि पाठशालायें खोली जा सकती हैं।

6. गृह व्यवस्था :- अनुपयुक्त एवं सुविधाहीन घरों के कारण श्रमिकों का घरेलू जीवन नीरस एवं आनन्दरहित हो गया है। गन्दगी के कारण मलेरिया और तपेदिक जैसी भयानक बीमारियों का जोर रहता है, श्रमिकों का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, उनके मस्तिष्क संकुचित हो जाते हैं और मानसिक विकास का कोई अवसर नहीं रहता। उनमें अनेक बुरी आदतें भी पैदा हो जाती है, अतः श्रम जीवियों की कार्य क्षमता को बढ़ाने के लिये, उनके रहने के लिये सुन्दर घरों की व्यवस्था करना अति आवश्यक है।

7. चिकित्सा -श्रमिकों की कार्यक्षमता पर उनके स्वास्थ्य का परोक्ष प्रभाव पड़ता है, अतः उनके स्वास्थ्य की रक्षा करना सेवायोजकों का कर्तव्य हो जाता है । हमारे कारखानों में मजदूरों की अनुपस्थिति प्रायः उनके बुरे स्वास्थ्य के ही कारण है । इससे उनको स्वयं तो हानि होती है, उद्योग को भी हानि उठानी पड़ती है । हमारे देश का मजदूर कम आय के कारण अपना इलाज नहीं करा सकता, इसलिए उनके लिए सुन्दर चिकित्सालय का प्रबन्ध होना चाहिये, जो केवल श्रमिकों की सेवा के लिये ही हो । डॉक्टरों को चाहिये कि वे सहानुभूति से अपने कर्तव्य का पालन करें । चिकित्सालयों में सब प्रकार की आवश्यक दवाइयों का पर्याप्त स्टॉक हमेशा रहना चाहिये ।

8. भोजन - श्रमिकों की कार्यक्षमता बढ़ाने के लिये भोजन सम्बन्धी सुविधायें उनको प्रदान की जायें तो सचमुच ही उनका बड़ा कल्याण हो । भारतीय श्रमिकों की आय बहुत थोड़ी है, पौष्टिक पदार्थो के सेवन की बात तो दूर रही, उनको मोटे अनाज की भरपेट रोटियां भी नहीं मिलती । वर्तमान मँहगाई ने तो उन पर और भी वज्रपात कर दिया । सेवायोजकों का कर्तव्य है कि वे सहकारिता के सिद्धांतों पर अपने श्रमजीवियों के लिये उपभोक्ता सहकारी भण्डारों की स्थापना करें तथा समाज के लिये ऐसी दुकानें खोलें जहाँ सस्ते दामों पर और उचित राशि से श्रमिकों को वस्तुयें मिल सकें । कैन्टीन की भी व्यवस्था हो सकती है, जहाँ मजदूर मध्यान्तर अवकाश में खा-पी सके और विश्राम ले सके । यदि सम्भव हो तो सस्ते चाय एवं जलपान गृह भी खोले जाये । उन औद्योगिक संस्थानों में जिनमें स्त्रीयाँ श्रमिक अधिक मात्रा में हों, शिशु सदनों का होना आवश्यक है, जहाँ कि, औरतों के काम के समय उनके बच्चों की उचित देखभाल हो सके । यदि बच्चे माँ के साथ रहेंगे तो दुर्घटनायें हो सकती हैं और उनके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा ।

9. मनोरंजन - दिन भर के कड़े परिश्रम के पश्चात् प्रायः सभी श्रमिक थक जाते हैं। अतः यदि उनके शारीरिक एवं मानसिक मनोरंजन की उचित व्यवस्था हो तो वास्तव में उनका बड़ा कल्याण होगा। उनको प्रति सप्ताह सवेतन अवकाश मिलना आवश्यक है। कार्य की नीरसता को दूर करने के लिये मनोरंजन के अनेक साधन हो सकते हैं। भजन-कीर्तन व कव्वाली का आयोजन किया जाये। व्यायाम एवं खेल-कूद के लिये मैदान भी हों। नुमाइश, नाटक, बाद-विवाद , संगीत, सिनेमा, आदि का समय-समय पर प्रबन्ध होना चाहिये। बच्चों के लिये तथा अन्य लोगों के लिये भी पार्क, पुस्तकालय एवं वाचनालयों की व्यवस्था हो। इन सारी सुविधाओं का उत्तरदायित्व सेवायोजकों पर ही है।

10. मितव्ययिता - सेवायोजकों को चाहिये के वे श्रमिकों के अपव्यय को रोकने के लिये पूर्ण प्रयत्न करें। प्रोवीडेन्ट फण्ड की व्यवस्था की जाये। सहकारी साख समितियां खोली जायें, जिससे उन्हें आवश्यकता पड़ने पर नर्म शर्तो तथा न्यून ब्याज पर ऋण मिल सके। नशे की दुकानों पर प्रतिबन्ध लगा दिये जायें जिससे कि वे अपना धन एवं स्वास्थ्य नष्ट न कर सकें।

भारत में श्रम कल्याण कार्य की आवश्यकता :-

भारतवर्ष में श्रमिकों के हेतु कल्याण कार्य की बहुत आवश्यकता है। यहाँ के श्रमिक अकुशल और अन्य देशों की तुलना में उनकी कार्य क्षमता न्यून है। श्रमिकों को संतुष्ट और सुखी करने के लिये उनकी परिस्थिति मेंसुधार करना चाहिए। हमारी दृष्टि से श्रमिकों को केवल नकद मजदूरी से ही कोई विशेष लाभ न होगा क्योंकि इससे उनकी कार्य निपुणता पर कोई गम्भीर प्रभाव नहीं पड़ता। सम्भव है कि नकद राशि को वे जुए और नशे में उड़ा दें। इसके विपरीत, यदि कल्याण कार्य के द्वारा उनको लाभ पहुँचाया जायेगा तो हमें विश्वास है कि उनकी कार्य क्षमता अवश्य बढ़ेगी।

1. **औद्योगिक शांति की स्थापना** - इस विषय में दो मत नहीं हो सकते कि कल्याण कार्य की विस्तृत व्यवस्था से श्रम एवं पूँजी के बीच निकटतम सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं। जब श्रमिक को इस बात का अनुभव होने लगता है कि सेवायोजक तथा राज्य उनके ही कल्याण के लिए अनेक योजनायें कार्यान्वित कर रहे हैं, तो उनके मन में एक स्वस्थ वातावरण पैदा हो जाता है, जिससे औद्योगिक शांति की स्थापना में बड़ा योग मिलता है।
2. **श्रमिकों के उत्तरदायित्व में वृद्धि** - श्रम कल्याण कार्य की व्यवस्था में श्रमिक यह अनुभव करने लगते हैं कि वे उद्योग के एक अनुयायी है। अतः वे संस्था के विकास में विशेष रूचि लेने लगते हैं, कि वे उद्योग के एक अनुयायी है। अतः वे संस्था के विकास में विशेष रूचि लेने लगते हैं, उनके उत्तरदायित्व में वृद्धि की भावना से सेवायोजकों को बड़ा लाभ होता है।
3. **सेवाओं को आकर्षक बनाना** - जिस औद्योगिक संस्था में कल्याण कार्य की योजनायें लागू होती हैं, वहाँ की सेवायें अपेक्षाकृत अधिक आकर्षक हो जाती हैं और अधिकांश श्रमिक सही कार्य करना पसन्द करते हैं। इससे स्थायी श्रम शक्ति की वृद्धि होती है।
4. **औद्योगिक व्यवस्था का अनिवार्य अंग** - आज प्रायः सभी विवेकशील सेवायोजक इस बात का अनुभव करने लगे हैं कि कल्याण कार्य औद्योगिक व्यवस्था का एक अनिवार्य अंग है। यह श्रमिकों के हृदय में आत्म गौरव की भावना प्रेरित करता है।
5. **मानसिक क्रांति** - कल्याण कार्य की व्यवस्था श्रम एवं पूँजी की मानसिक क्रांति के द्वारा उनके हृदय परिवर्तन का एक श्रेष्ठ साधन है।
6. **कार्यक्षमता में वृद्धि** - कल्याण कार्य से श्रमिकों की कार्यक्षमता में निश्चय ही वृद्धि होती है।

7. **सामाजिक गुण** - अन्त में यह लिखना अनावश्यक न होगा कि कल्याण कार्य की व्यवस्था से अनेक सामाजिक कुरीतियों का भी निवारण होता हैं और इस प्रकार समाज भी लाभान्वित होता हैं श्रमिक समाज के महत्वपूर्ण अंग है। कैन्टीन में सस्ते व सन्तुलित भोजन की सुविधा से श्रमिकों के स्वास्थ्य में वृद्धि होती है, स्वस्थ मनोरंजन के द्वारा उनकी अनके बुरी आदतें (जैसे- मदिरापान, जुआ खेलना आदि) दूर हो जाती है, चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाओं से श्रमिकों तथा उनके आश्रितों के स्वास्थ्य में वृद्धि होती है, इत्यादि।

इन लाभों से ही प्ररित होकर टेक्सटाइल लेबर इन्क्वारी कमेटी ने कहा था- ''कार्यक्षमता का उन्नत स्तर केवल वहीं हो सकता है, जहाँ श्रमिक शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ तथा मानसिक दृष्टि से सन्तुष्ट हों। इसका तात्पर्य यह है कि केवल वहीं श्रमिक कुशल हो सकते हैं जिनके लिये शिक्षा, आवास, भोजन तथा वस्त्र आदि का उचित प्रबन्ध हो।'' इसी दृष्टि से हमारे देश में बम्बई विश्वविद्यालय ने श्रम समस्याओं एवं कल्याण कार्य के अध्ययन तथा शिक्षा के लिये विशेष प्रबन्ध किया। श्री टाटा ने भी बॉम्बे स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स एवं सोशल साइंसेज की स्थापना इसी उद्देश्य से की है।

श्रम कल्याण कार्यो का वर्गीकरण :-

श्रम कल्याण कार्यो का निम्नलिखित तीन वर्गो में विभक्त किया जा सकता है।

1. **वैधानिक श्रम कल्याण कार्य** - वैधानिक श्रम कल्याण कार्यो से तात्पर्य उन समस्त कार्यो से है जो श्रमिकों के हित के लिये सरकार की ओर से विभिन्न कानूनों के रूप में किये जाते हैं। उदाहरण के लिये भारतीय कारखाना अधिनियम 1948 में जिन श्रम कल्याण कार्यो की चर्चा की गई है, और उन सुख सुविधाओं को भी जो कि 1952 के खान अधिनियम, 1956 के बागान मजदूर अधिनियम और 1966 के बीड़ी और सिगार (रोजगार की

स्थिति) अधिनियम के अन्तर्गत जुटानी होती है, वैधानिक श्रम-कल्याण कार्य के अन्तर्गत सम्मिलित किया जा सकता है। मिल-मालिकों के लिये इन आदेशों का पालन करना आवश्यक होता है।

2. ऐच्छिक कल्याण कार्य - ऐच्छिक श्रम कल्याण कार्यों के अन्तर्गत उन कार्यो को सम्मिलित किया जाता है, जो मालिकों के द्वारा ऐच्छिक रूप में श्रमिकों के लिये किये जाते हैं। सामाजिक संगठनों द्वारा भी इस प्रकार के कार्य सम्पन्न हो सकते हैं। वाई.एस.सी.ए. की सेवायें इन सम्बन्ध में ज्वलन्त उदाहरण है।

3. पारस्परिक श्रम कल्याण कार्य - पारस्परिक श्रम कल्याण कार्यों के अन्तर्गत उन कार्यो का समावेश किया जाता है जो श्रमिकों, मिल-मालिकों और सरकार के परस्पर सहयोग के द्वारा श्रमिकों के लाभार्थ किये जाते हैं।

भारत में आयोजित श्रम कल्याण कार्य -

हमारे देश में श्रम कल्याण कार्य की भावना का प्रादुर्भाव, वास्तव में, द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त हुआ। द्वितीय महायुद्ध की अवधि में, जब निर्मित वस्तुओं की माँग बढ़ी, आवश्यक वस्तुओं के दाम चढ़ गए, नगरों में आवास समस्या जटिल हो गई, खाने-पीने की वस्तुओं के दुर्लभता के कारण श्रमिकों की कार्यक्षमता कम हो गई और परिणामस्वरूप श्रमिक वर्ग त्राहि-त्राहि करने लगा। ऐसी परिस्थितियों में उद्योगपतियों, सरकार तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं का ध्यान श्रम कल्याण की ओर आकर्षित हुआ।

(क) केन्द्रीय सरकार द्वारा कल्याण कार्य :-

भारत में अभी तक जितना भी श्रम कल्याण कार्य किया गया है उसका श्रेय मुख्यतः निम्नलिखित संस्थाओं को है :-

(क) केन्द्रीय सरकार,

(ख) राज्य सरकार,

(ग) सेवायोजक व उद्योगपति,

(घ) श्रमिक संघ,

(ङ) संयुक्त राष्ट्र संघ,

(च) समाज सेवी संस्थायें तथा

(छ) नगर पालिकायें, आदि।

सरकार द्वारा कल्याण कार्य की भावना, वास्तव में, एक नवीन स्फूर्ति है, जिसने द्वितीय महायुद्ध के पश्चात ही अधिक जोर पकड़ा, 1945 में द्वितीय महायुद्ध समाप्त हो गया तथा विविध प्रकार की कठिनाईयों से विवश होकर श्रमिक वर्ग त्राहि-त्राहि करने लगा। इसी अवधि में औद्योगिक अशांति की भी एक लहर आई जिसने केन्द्रीय सरकार का ध्यान श्रमिकों की ओर आकर्षित किया। युद्ध अवधि में औद्योगिक उत्पादन को बनाये रखने के लिये श्रमिकों के मनोबल को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से कुछ कार्य किये गये। अगस्त, 1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति पर समाजवादी समाज की स्थापना के उद्देश्य से इस दिशा में सराहनीय प्रयास किये गये। केन्द्रीय सरकार ने ये प्रयास विभिन्न अधिनियमों को बनाकर मालिकों के लिये अनिवार्य कर दिया कि वे अधिनियमों के अन्तर्गत, श्रम-कल्याण कार्यक्रम अनिवार्य रूप से अपनायें। इन्हें 'वैधानिक व्यवस्था' की संज्ञा दी जा सकती है। कुछ प्रमुख निम्नलिखित हैं -

1. **कोयला खान-श्रमिक कल्याण कोष** - इसके अन्तर्गत कोयला एवं कोक पर एक उत्पादन कर लगाया जाता है जिसकी राशि दो खातों, आवास खाता व सामान्य खाता में 7:5 के अनुपात में बाँटकर जमाकर दी जाती है। इस राशि का उपयोग कल्याणकारी कार्यो में किया जाता है, जैसे- डॉक्टरी सुविधा, मनोरंजन, शिक्षा, शिशु-सदन, आवास व्यवस्था आदि। इस कोष का प्रशासन एक परामर्शदात्री समिति द्वारा किया जाता है। जिसमें सरकार, खान मालिक व श्रमिकों के बराबर प्रतिनिधि होते हैं।

2. **अभ्रक खान श्रम-कल्याण कोष अधिनियम** - अभ्रक का भारत से निर्यात भी होता है, अतः निर्यात पर 3.5 प्रतिशत शुल्क लगाकर इस कोष की स्थापना की गई है जिसे चिकित्सा, मनोरंजन, प्रसूति एवं बाल कल्याण केन्द्र, बच्चों के स्कूल आदि पर व्यय किया जाता है। इस कोष से बच्चों को छात्रवृत्ति भी दी जाती है एवं निःशुल्क पुस्तकें वितरित की जाती है।
3. **सार्वजनिक उपक्रम श्रम-कल्याण कोष अधिनियम** - इस अधिनियम के अन्तर्गत सार्वजनिक औद्योगिक उपक्रमों में कार्य करने वाले श्रमिकों के कल्याण के लिए विभिन्न कार्यक्रमों को चलाने हेतु एक कोष से विनियोग की व्यवस्था की गई है। ऐसे कोषों की स्थापना का कार्य उपक्रमों की इच्छा पर छोड़ दिया गया है।
4. **कारखाना संशोधन अधिनियम** - इस अधिनियम के अनुसार कारखानों में विश्राम सुविधा, नहाने व धोने की सुविधा, मूत्रालय, कारखानों की प्रति सप्ताह धुलाई, 250 से अधिक श्रमिकों के होने पर कैन्टीन की सुविधा, 50 या अधिक महिला श्रमिकों के होने पर शिशु ग्रह 150 श्रमिकों या इससे अधिक पर विश्राम गृह व जलपान गृह, 500 या इससे अधिक पर श्रम-कल्याण अधिकारी की नियुक्ति आदि की व्यवस्थायें हैं।
5. **बागान श्रम अधिनियम** - बागानों या बगीचों में काम करने वाले श्रमिकों के कल्याण के लिए 1951 में यह अधिनियम बनाया गया है। इसमें स्थायी श्रमिकों के लिए आवास व्यवस्था तथा सभी श्रमिकों के लिए अस्पताल चलाना अनिवार्य कर दिया गया है। इसमें बच्चों की शिक्षा के लिए भी व्यवस्था की गई है। इन श्रमिकों पर कारखाना अधिनियम 1948 की धारायें भी लागू होती हैं।
6. **कच्चा लोहा, मैंगनीज व क्रोम खान श्रम-कल्याण अधिनियम** - इस अधिनियम के अन्तर्गत कच्चे लोहे, मैंगनीज, क्रोम और के उत्पादन पर एक

विशेष कर लगाकर, श्रम-कल्याण के लिए एक कोष बनाने की व्यवस्था की गई है। इस कोष का उपयोग श्रमिकों के कल्याण -जैसे उनकी तथा उनके परिवार की चिकित्सा, शिक्षा, मकान बनाने हेतु वित्तीय सहायता, मनोरंजन, पानी आदि के लिए किया जाता है।

7. **मोटर परिवहन कर्मचारी अधिनियम** - मई 1961 में 'मोटर परिवहन कर्मचारी अधिनियम' मोटर परिवहन कर्मचारियों के कल्याणार्थ आयोजन करने तथा कार्य-दशाओं का नियमन के लिये बनाया गया था। इस अधिनियम में जलपान गृह, विश्राम गृह, नहाने-धोने की सुविधाओं, चिकित्सा सहायता, आदि कल्याण कार्यों की व्यवस्था सम्मिलित है। उड़ीसा, गोवा, दमन, द्वीप तथा अण्डमान-निकोबार द्वीपसमूह को छोड़कर अन्य राज्यों व केन्द्र शासित क्षेत्रों में अपने अलग-अलग नियम निर्धारित किये हैं।

8. **बीड़ी श्रमिक कल्याण कर संशोधन अधिनियम** - इस अधिनियम में बीड़ी एवं सिगरेट के कारखानों में काम करने वाल श्रमिकों के लिए कुछ कल्याणकारी कार्य करने की व्यवस्था की गई जिसके अन्तर्गत श्रमिकों का चिकित्सा, शिक्षा, मनोरंजन, आवास आदि की सुविधायें दी जाती है।

9. **ठेका मजदूर नियम एवं समाप्ति अधिनियम** - इसका उद्देश्य सरकार द्वारा अधिनियम में निर्धारित कसौटी के अनुसार किसी अधिसूचित प्रतिष्ठान के कुछ उपक्रमों, क्रियाओं व अन्य कार्यों में ठेका मजदूरी समाप्त करना है। किन्तु जहाँ इसे समाप्त करना सम्भव नहीं है वहाँ उनके वेतन के भुगतान और उनके लिये आवश्यक सुविधाओं की व्यवस्था करके उनकी सेवा शर्तों का नियमन करता है।

10. **लाइमस्टोन एवं डोलोमाइट खान श्रमिक कल्याण कोष अधिनियम** - एक विशेष कर लगाकर इस कोष का निर्माण किया गया है जिसका उपयोग

श्रमिकों के आवास, चिकित्सा, शिक्षा व मनोरंजन आदि के लिए किया जाता है।

11. **बन्दरगाह श्रमिक (सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं कल्याण) योजना, 1986** - इस योजना के अन्तर्गत इन श्रमिकों का आवास, चिकित्सा, मनोरंजन आदि की सुविधायें दी जाती हैं। कुछ बन्दरगाहों पर श्रमिकों के लिए उचित मूल्य की दुकानें भी खोली गई हैं।

12. **राष्ट्रीय पुरस्कार योजना** - केन्द्रीय सरकार के जिन कारखानों पर कारखाना अधिनियम लागू होता है उनमें श्रेष्ठ सुरक्षा व्यवस्था हेतु 4 राष्ट्रीय पुरस्कार योजनायें लागू की हैं। प्रत्येक योजना में 15 पुरस्कारों की व्यवस्था है। जो कर्मचारी उत्पादकता वृद्धि, मितव्ययिता, अथवा अधिकतम कार्यक्षमता के लिए सुझाव देंगे उन्हें "श्रमवीर" का राष्ट्रीय पुरस्कार देने की व्यवस्था हैं।

13. **श्रमिक शिक्षा योजना** - यह योजना 1958 से श्रमिकों को शिक्षा व प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से लागू की गई है।

14. **महिला एवं बाल विकास श्रमिक कल्याण** - 1987 के अन्तर्गत बाल एवं महिला श्रमिकों को भी समान कार्य हेतु समान वेतन देने की व्यवस्था है। इनके कल्याण कार्य की भी उपयुक्त व्यवस्था की गई है।

(ख) राज्य सरकारों द्वारा किये गये श्रम कल्याण कार्य :-

द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व राज्य सरकार ने श्रम कल्याण के लिए कोई विशेष प्रयास नहीं किए। उनका कार्य केवल श्रमिक अधिनियमों को लागू करना था। किन्तु 1947 में केन्द्र व राज्यों में कांग्रेस सरकार बन जाने पर राज्य सरकारों का ध्यान इस ओर गया और उन्होंने राज्यों में श्रम कल्याण के लिए नियम बनाए तथा स्वयं भी श्रम कल्याण में प्रत्यक्ष रूप से भाग लिया। इस कार्य में उत्तर प्रदेश व महाराष्ट्र सरकारें आगे रहीं। आजकल लगभग सभी राज्य सरकारों द्वारा

अपने-अपने राज्यों में श्रम कल्याण कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं । इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत (क) श्रम कल्याण केन्द्र व (ख) आवास बस्तियाँ स्थापित की जा रही है । अब तक उत्तर प्रदेश में 73 श्रम कल्याण केन्द्र स्थापित किए जा चुके हैं । तथा आगरा, फिरोजाबाद, कानपुर, मिर्जापुर, इलाहाबाद व बनारस में श्रमिक बस्तियां स्थापित की गई हैं । इसी प्रकार मध्य प्रदेश में जबलपुर, ग्वालियर, उज्जैन, इन्दौर, रतलाम व हिंगनघाट में राजस्थान में किशनगढ़ व जोधपुर में, पंजाब में अमृतसर, लुधियाना, अम्बाला व जालन्धर में, पश्चिमी बंगाल में हावड़ा व कलकत्ता में, महाराष्ट्र में शोलापुर व बम्बई में तथा गुजरात में अहमदाबाद में श्रम-कल्याण केन्द्रों की स्थापना की गई है । गत वर्षों में पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत राज्य सरकारों ने श्रम-कल्याण पर लगभग 600 करोड़ रु. सातवीं योजना के अन्त तक व्यय किए हैं ।

(ग) सेवायोजक व उद्योगपतियों द्वारा आयोजित श्रम-कल्याण कार्य :-

भारत में नियोक्ता श्रमिक कल्याण कार्य के प्रति उदासीन हैं और वे केवल वही कल्याण का कार्य करना चाहते हैं जिसको करना उनके लिए कानूनों के अन्तर्गत अनिवार्य है । किन्तु इसके अपवाद भी है । नीचे कुछ प्रमुख उद्योगपतियों द्वारा किए गए श्रम-कल्याण कार्य का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है ।

1. **सूती वस्त्र उद्योग** - इस उद्योग की लगभग सभी इकाईयों में चिकित्सालय, शिक्षा-गृह व उचित मूल्य की दुकानें तथा अधिकांश में कैन्टीन हैं । कुछ इकाईयों में मनोरंजन केन्द्र, अच्छे अस्पताल व उपभोक्ता सहकारी समितियां भी हैं । सूती वस्त्र उद्योग में श्रम कल्याण के लिए मालिकों द्वारा उल्लेखनीय कार्य किया गया है जिसमें केलिको मिल्स, अहमदाबाद, ग्रेसिम उद्योग, ग्वालियर देहली क्लाथ मिल्स, देहली, मदुराई व एम्प्रेस मिल्स, नागपुर प्रमुख हैं ।

2. लोहा एवं इस्पात उद्योग - इसमें बड़ी इकाईयों में चिकित्सालय हैं । जहां महिला श्रमिक है, वहां झूलाघर व शिशु-सदन हैं। श्रम-कल्याण करने वाले उद्योगपतियों में टाटा कम्पनी का नाम सुप्रसिद्ध है । टाटा आयरन स्टील एण्ड कम्पनी, जमशेदपुर में 490 पलंग वाला एक टाटा आधुनिक अस्पताल है, 3 दहाई स्कूल, 11 मिडिल स्कूल, 16 प्रारम्भिक पाठशालायें, 9 रात्रि स्कूल तथा 12 श्रम-कल्याण केन्द्र है। इसके अतिरिक्त बड़े-बड़े खेल के मैदान, पुस्तकालय एवं वाचनालय, सहकारी भण्डार, आदि भी हैं।
3. जूट उद्योग - इसमें उद्योगपतियों का एक संगठन भारतीय जूट मिल्स एसोशियेशन है जो श्रमिक कल्याण के सम्बन्ध में विभिन्न योजनायें चलाता व प्रबन्धित करता है। इस संघ ने 5 श्रम कल्याण स्वास्थ्य केन्द्र हैं- श्रीरामपुर, टीटागढ़, कनकीपाड़ा, भदेश्वर व हजारीबाग । इस समय लगभग 70 मिलों में चिकित्सालय व कैन्टीन हैं ; 55 मिलों में शिशु गृह है, 35मिलों में स्कूल तथा

(घ) समाज सेवी संस्थाओं द्वारा किया गया कल्याण कार्य -

कुछ समाज सेवी संस्थाओं ने भी श्रम-कल्याण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। इन संस्थाओं में 'बम्बई समाज सेवा लीग', 'सेवा सदन समिति', बम्बई प्रेसीडेन्सी महिला मण्डल, 'वाई.एम.सी.ए.' इत्यादि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। बम्बई की समाज सेवी समिति रात्रि स्कूल चलाकर श्रमिकों में शिक्षा प्रसार का कार्य करती है । इसके अतिरिक्त पुस्तकालय, स्काउटिंग, श्रमिकों के मनोरंजन और खेलों की व्यवस्था, सरकारी समितियां इत्यादि की सुविधायें प्रदान करती है। पुणे और बम्बई में सेवा सदन समितियां स्त्रियों एवं बच्चों में सामाजिक, शैक्षणिक एवं चिकित्सा सम्बन्धी कार्य करती हैं तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं को तैयार करती है। बंगाल में महिला समितियों गांवों में जाकर शिक्षा प्रसार और सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा का कार्य करती है।

(ड) नगरपालिकाओं द्वारा किया गया कार्य - कुछ नगर निगम व नगरपालिकाओं ने भी इस दिशा में सराहनीय कार्य किये है। उदाहरण के लिये बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली, कानपुर, मद्रास, और अजमेर के नगर निगमों ने सहकारी साख समितियों की व्यवस्था की है। बम्बई के नगर निगम ने एक पृथक कल्याण विभाग भी खोल रखा है, जिसने कल्याण कार्यो का एक विस्तृत जाल सा बिछा रहा है। बम्बई में नगर निगम द्वारा चालों में कल्याण केन्द्रों की स्थापना की गई है। कलकत्ता नगर निगम ने रात्रि पाठशालाओं, शिशु-सदन तथा कैण्टीन की व्यवस्था की है। दिल्ली व मद्रास में भी प्रौढ़-शिक्षा की सुविधायें दी जाती है। बच्चों के खेलने के लिये मैदान भी है। लगभग सभी नगरपालिकाओं में प्रोवीडेन्ट फण्ड योजना चालू है।

अध्याय -2

शोध पद्धति

मानव विश्व का सर्वाधिक बौद्धिक, चिन्तनशील एवं जिज्ञासु प्राणी है उसकी इसी जिज्ञासु प्रवृत्ति के कारण वह समाज में व्याप्त सामाजिक समस्याओं एवं उनके निराकरण के लिये सजग प्रहरी बनकर समाधान खोजने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील रहता है। यहाँ तक कि समस्या से सम्बन्धित ज्ञान का स्पष्टीकरण करना, नवीन ज्ञान की खोज करना तथा उसका सत्यापन करना, उसके लिये एक जटिल समस्या होती है। समस्या से सम्बन्धित पक्षों के विषय में यथार्थ ज्ञान किन-किन तरीकों तथा प्रविधियों द्वारा किया जाये। ताकि अनुभवसिद्ध तथ्यों को ज्ञात करके निरीक्षण, परीक्षण तथा सत्यापन के आधार पर मानव व्यवहार से सम्बन्धित क्रियाशील अन्तर्निहित प्रक्रियाओं की जानकारी प्राप्त की जा सके एवं विभिन्न सामाजिक प्रघटनाओं एवं नवीन तथ्यों के बीच पाये जाने वाले प्रक्रियात्मक सम्बन्धों की खोज की जा सके। इसके लिये उसे यह सोचना पड़ता है कि ऐसा करने के लिये शोध अध्ययन किस प्रकार किया जाये? ताकि संग्रहीत सूचनाऐं विश्वसनीय, तर्कसंगत तथा वस्तुनिष्ठ रूप में प्राप्त हो सके क्योंकि, "किसी भी अध्ययन विषय का विकास उसकी अध्ययन विधियों के विकास पर निर्भर करता है, न कि विषय सामग्री पर"[1] इसलिये सामाजिक अध्ययन पद्धतियों का उल्लेख करते हुऐ सर्वश्री सैलटिज जाहोदा तथा कुक ने इन्हें बौद्धिक (नोरमेटिव) तथा व्यवहारिक (एप्लाइड) दो भागों में वर्गीकृत किया है। सामान्य शब्दों में बौद्धिक उद्देश्य को सैद्धन्तिक ज्ञान और व्यवहारिक उद्देश्य को उपयोगितावादी कहा जा सकता है। इनका स्पष्टीकरण करते हुये प्रोफेसर कपिल ने लिखा है कि बौद्धिक

---

1. करलिंगर, एफ.एन., दि फाउण्डेशन ऑफ विहेवियरल रिसर्च, रिनेहार्ट एण्ड विन्सन प्रेस हाल्ट, न्यूयार्क, 1964, पृष्ठ-4

शोध के अन्तर्गत सामाजिक जीवन, सामाजिक समस्याओं तथा प्रघटनाओं के सन्दर्भ में मौलिक सिद्धांतों व नियमों की अन्वेषणा की जाती है, जो इस ओर संकेत करती है कि एक अनुसंधानकर्ता को क्या करना चाहिए? जबकि व्यवहारिक शोध के अन्तर्गत मानव व्यवहार से सम्बन्धित समस्या का गहन अध्ययन करके उसका समाधान प्रस्तुत किया जाता है, जिसमें व्यवहारिक सुझाव दिये जा सकें। "स्पष्टतः व्यवहारिक शोध के अन्तर्गत किन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिये अतिरिक्त (नवीन) ज्ञान की प्राप्ति की जाती है।"[1] परन्तु सर्वश्री करलिंगर एफ. एन. (1964:27) के अनुसार अनुसंधान कार्य प्रायः निम्नलिखित तीन श्रेणियों में विभक्त किये जा सकते हैं :-

1. विशुद्ध मौलिक अनुसंधान,
2. क्रियात्मक अनुसंधान,
3. व्यवहारिक अनुसंधान

जिस प्रकार विधाता की सर्वोत्तम सृष्टि मानव है, उसी प्रकार मानव की सर्वोत्तम सृष्टि मानव समाज व उसकी विचित्र घटनाऐं है। यह मानव बुद्धिजीवी है, जिज्ञासा से भरपूर ज्ञानपिपासु है। इसीलिये यह सच ही कहा गया है कि मानव केवल प्रकृति का ही नहीं स्वयं अपना भी अध्ययन करता है। आकाश, धरती, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, नदी और समुद्र का अध्ययन उसके सम्मुख अनेक आश्चर्यजनक अनुभवों को उपस्थित करता है और उसके ज्ञान-विज्ञान के भण्डार को भरता रहता है, परन्तु स्वयं अपना, अपने समाज का, अपने व्यवहारों का या फिर सामाजिक घटनाओं का अध्ययन मानव के लिये और भी रोचक, अत्यन्त आश्यर्चजनक अनुभवों से भरपूर और अनेक अनाखेपन से समृद्ध होता है। पर यह अध्ययन मनमाने ढंग से नहीं अपितु निरीक्षण, परीक्षण व प्रयोग पर आधारित

---

1. Singh, S.D., (1980), Vaigyanik Samajik Anusandhan Avan Aarvekahan Ke Mool Tatva, Kamal Prakashan, Indoure (M.P.) Page-59.

वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा किये जाने पर ही सत्य को ढूँढा जा सकता है । सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में सत्य की खोज ही सामाजिक शोध है।

"मानव क्रिया के सभी क्षेत्रों में शोध का अर्थ ज्ञान तथा बोध की निरन्तर खोज है । परन्तु वही ज्ञान व बोध वैज्ञानिक होते है जिनमें वैज्ञानिक शोध के दो आवश्यक तत्व विद्यमान हों - इनमें से प्रथम तत्व है निरीक्षण- इसके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से देखकर हम कतिपय तथ्यों के विषय में ज्ञान प्राप्त करते हैं । दूसरा तत्व है- कारण दर्शाता - जिसके द्वारा इन तथ्यों का अर्थ, उनका पारस्परिक सम्बन्ध एवं विद्यमान वैज्ञानिक ज्ञान से उनका सम्बन्ध निश्चित किया जाता है।"[1] यही दोनों तत्व यदि सामाजिक तथ्यों के सम्बन्ध में किये गये अनुसंधान में विद्यमान हैं तो उसे सामाजिक शोध कहते हैं।

इस दृष्टि से सामाजिक शोध किसी सामाजिक समस्या को सुलझाने या किसी उपकल्पना की परीक्षा करने, नवीन घटनाओं को खोजने या कतिपय घटनाओं के बीच नवीन सम्बन्धों को ढूँढने के उद्देश्य से किसी यथार्थ विधि का उपयोग है। यह यथार्थ विधि इस प्रकार की होनी चाहिए जो कि वैज्ञानिक शर्तो का पूरा करती हो तथा जिसकी सहायता से अनुसंधान किये गये विषय का सत्यापन सम्भव हो। दूसरे शब्दों में सामाजिक घटनाओं या विद्यमान सिद्धांतों के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान की प्राप्ति के लिये प्रयोग में लाई गई वैज्ञानिक विधि सामाजिक शोध है।

अतः स्पष्ट है कि सामाजिक शोध वैज्ञानिक नियमानुसार, उसे मानवीय क्रियाकलाप की ओर संकेत करता है जिसके द्वारा सामाजिक जीवन में हमारे ज्ञान की वृद्धि सम्भव होती है तथा अनेक घटनाओं व उनके कारणों में पाये जाने वाले पारस्परिक सम्बन्ध के विषय में हम नवीन जानकारी प्राप्त करते हैं। सामाजिक

---

1. मुखर्जी, आर.एन.(2001), अष्टम संस्करण, सामाजिक शोध व सांख्यिकी, मातृ आशीष तिलक कालोनी, सुभाष नगर,बरेली, पृष्ठ-1

शोध के बारे में सबसे उल्लेखनीय बात यह है कि ज्ञान प्राप्ति की वह विधि है जो कि निरीक्षण, वर्गीकरण, प्रयोग तथा निष्कर्षीकरण की सामान्य वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित होती है यदि उसी पद्धति के द्वारा न केवल अज्ञात सामाजिक घटनाओं को खोजा जा सकता है परन्तु ज्ञात सामाजिक घटनाओं की भी विवेचना या विश्लेषण किया जाता है। इस अर्थ में सामाजिक शोध "एक वैज्ञानिक योजना है जिसका कि उद्देश्य तार्किक तथा क्रमबद्ध पद्धतियों के द्वारा नवीन तथ्यों का अन्वेषण अथवा पुराने तथ्यों की पुनः परीक्षा एवं उनमें पाये जाने वाले अनुक्रमों, अन्तः सम्बन्धों, कारण सहित व्याख्याओं तथा उनको संचालित करने वाले स्वाभाविक नियमों का विश्लेषण करना है।"[1] इसीलिये श्री मौसर (1961:3) ने ठीक ही कहा है कि, "सामाजिक घटनाओं व समस्याओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान की प्राप्ति के लिये किये गये व्यवस्थित अनुसंधान को हम सामाजिक शोध कहते हैं।"[2]

सामाजिक अनुसंधान कोई सरल व सीधा कार्य नहीं है और इसलिये प्रत्येक व्यक्ति इसे कर भी नहीं सकता। केवल कुछ पुस्तकीय ज्ञान ही शोध कार्य के लिये पर्याप्त नहीं है। इसके लिये अन्य अनेक बाह्य तथा आन्तरिक गुणों का होना आवश्यक है। इसका कारण भी स्पष्ट है। सामाजिक शोध सामाजिक घटनाओं से सम्बन्धित होता है और सामाजिक घटनाऐं अमूर्त, परिवर्तनशील, जटिल तथा व्यक्ति प्रधान होती है। इसीलिये इनका अध्ययन प्राकृतिक घटनाओं के अध्ययन से कहीं अधिक कठिन होता है। सबसें बड़ी बात यह है कि समाजिक घटनाओं के अध्ययन का तात्पर्य वास्तव में मानव द्वारा मानव के लिये विषय में अध्ययन है जैसा कि इस शोध का विषय है - "क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का अध्ययन।"

---

1. Pauline V. Young, Scientific Social survey & research, Asia Publishing House, Bombay,1960,p-44
2. C.A. Moser, Survey Methods in social Investigation, Hieneman, London, 1961. p-3

सामाजिक शोध का उद्देश्य सामाजिक घटनाओं का वैज्ञानिक अध्ययन करके उनके विषय में वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना है। इस प्रकार का वैज्ञानिक अध्ययन मनमाने ढंग से नहीं किया जा सकता और न ही काल्पनिक घोड़ा दौड़ाकर अथवा दार्शनिक विचारों का सहारा लेकर किसी यथार्थ और प्रयोगसिद्ध निष्कर्ष तक पहुँचा जा सकता है। श्री अगस्त काम्टे का यह निश्चित मत था कि "वैज्ञानिक अध्ययन में सट्टेबाजी का कोई स्थान नहीं होता।" दूसरे शब्दों में आध्यात्मिक व दार्शनिक चिंतन द्वारा प्राप्त निष्कर्ष सत्य या काल्पनिक होना संयोग की बात है और उनके सत्य-असत्य का निर्णय अगर असम्भव नहीं तो कठिन तो अवश्य ही है। कुछ भी हो वैज्ञानिक अध्ययन संयोग या अनुमान पर कदापि निर्भर नहीं हो सकता और न ही होना चाहिये। इसलिये प्रत्येक विज्ञान अपने प्रयोगसिद्ध अध्ययन कार्य के लिये एक या एकाधिक निश्चिय व व्यवस्थित अध्ययन प्रणालियों को अपनाता है। इन्हीं को शोध पद्धति कहते है और ये विधियां ही वैज्ञानिक अनुसंधान के आधार हैं। ये पद्धतियाँ आधारभूत रूप में सभी विज्ञानों में समान या एक जैसी होती है, केवल अध्ययन वस्तु की प्रकृति के अनुरूप इनके रूप या स्वरूप में कुछ आवश्यक परिवर्तन प्रत्येक विज्ञान में कर लिया जाता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पद्धति वह प्रणाली है जिसके अनुसार कार्य का संगठन, तथ्यों की विवेचना तथा निष्कर्षो का निर्धारण किया जाता है।

अध्ययन क्षेत्र - प्रस्तुत शोध अध्ययन उत्तर प्रदेश राज्य के बुन्देलखण्ड संभाग के झाँसी तथा ललितपुर जनपदों के क्रेशर उद्योगों में कार्यरत श्रमिकों पर आधारित है। झाँसी उ०प्र० के दक्षिण-पश्चिमी पठारी भाग में स्थित है। यह 24°11से 25°57 उत्तरी अक्षांश में तथा 78°10 से 79°25 पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। जनपद झाँसी के पूर्व में मध्य प्रदेश का ग्वालियर जिला, पश्चिम में उ.प्र. का ललितपुर जिला, उत्तर में जिला जालौन तथा दक्षिण में जनपद बाँदा स्थित है।

जनपद का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 5024 वर्ग किमी है जो कि उत्तर प्रदेश की कुल भूमि 204411 वर्ग किमी का 0.7 प्रतिशत है।

झाँसी मण्डल का जनपद झाँसी पथरीला जनपद है जिसके कारण इसके आकार में कोई विशेष परिवर्तन ज्ञान नहीं हुआ है। यह जनपद झाँसी जनपद की पांच तहसीलों तथा आठ विकासखण्डों को मिलाकर बना है जो कि आकार की दृष्टि से बड़ा है। किन्तु जनसंख्यात्मक दृष्टि से छोटा है। सन् 2001 की जनगणना के अनुसार झाँसी की जनसंख्या 1306054 है। कृषि योग्य क्षेत्र 31100 हेक्टेयर में से मात्र 36 प्रतिशत सिंचित है। जहाँ की प्रमुख नदियाँ बेतवा, धसान पहूज, सपरार, उर, सुखनई, लेखौरी आदि हैं। प्रमुख जलाशय पारीछा, सुकवाँ-ढुकवाँ, कमलासागर, स्यावरी झील, पहूज बाँध, बरूआसागर, लहचूरा बाँध आदि हैं। झाँसी उत्तर मध्य रेल्वे का प्रमुख स्टेशन है जो मुम्बई, दिल्ली, चेन्नई आदि नगरों से सम्बद्ध है। कुल 60 स्टोन क्रेशर चालू हैं जिनका वर्णन अग्रलिखित तालिका में दिया गया है -

(अ) जनपद में स्थापित स्टोन क्रैशर की इकाईयाँ

क्रं सं.	इकाई का नाम व पता	उत्पाद	स्थाई पंजीयन संख्या व दिनांक	NOC
1.	श्री जय किशोर प्रो. 104, नानक गंज सीपरी में नानक ग्रेनाइट क० शिवपुरी रोड, झाँसी	स्टोन क्रेशर	01329 27.03.81	संलग्न नहीं
2.	श्री जशपाल सिंह प्रो. मे. पाल स्टोन ट्रेडर्स 198 नानक गंज सीपरी बाजार झाँसी, मैला की टौरिया झाँसी	स्टोन ग्रिट 4.43	01331 28.04.81	संलग्न नहीं

3.	श्री नीरज कुमार राठी, पार्टनर, मैं राठी ग्रनाइट इण्डस्ट्रीज ग्रा. गोरा मछिया, झाँसी	स्टोन ग्रिट 2.25	01398 26.03.83	संलग्न नहीं
4.	श्री बल्देव राज पार्टनर मे. राज ग्रेनाइट इण्ड. 372/8 सी.एल. झाँसी फैक्ट्री, गोरा मछिया, झाँसी	स्टोन ग्रिट 1.76	01418 30.07.82	संलग्न नहीं
5.	श्री केशव नाथ पार्टनर, मे. वसन ग्रेनाइट इण्ड. 98/8, सि.ला. झाँसी, फैक्ट्री बिजौली, झाँसी	स्टोन ग्रिट 0.86	01462 9.02.83	संलग्न नहीं
6.	श्री पवन कुमार पार्टनर 1001/3ए, सी. एल. में लालशानी ग्रेनाइट गोरा मछिया, झाँसी	स्टोन ग्रिट 9.94	01518 31.03.83	संलग्न नहीं
7.	श्री विश्वेश्वर शुक्ला पार्टनर, मे. जय दुर्गा स्टोन इण्डस्ट्रीज, 491/2/2 न्यू रायगंज, झाँसी, फैक्ट्री, बिजौली झाँसी।	स्टोन ग्रिट 1.60	01544 27.08.83	संलग्न नहीं
8.	श्री कमल जीत सिंह दुग्गल प्रो. मे. गुरू हर गोविन्द क्रं. क. 833/2 राम नगर रोड चिरगाँव	स्टोन ग्रिट 8.36 ग्रेनाइट	01704 27.04.84	संलग्न नहीं
9.	श्री भूपेन्द्र कुमार खुल्लर मे. बुन्देलखण्ड मिनरल्स यू.न.2 ललितपुर रोड, झाँसी, फैक्ट्री लहर गिर्द, झाँसी	स्टोन ग्रिट 4.15	01706 16.05.84	संलग्न नहीं

10.	श्री मती अंजली प्रधान प्रो. मे. सौभाग्या इण्टर प्राइजेज, 686/15 टण्डन कम्पाउण्ड सीपरी, खसरा नं. 3486 बिजौली, झाँसी	स्टोन ग्रिट 5.58	01707 24.05.84	संलग्न नहीं
11.	श्रीमती कमला देवी, श्री विजय खत्री, मे. कमला स्टोन इण्डस्ट्रीज पाली पहाड़ी शिवपुरी रोड, कार्य 101 नानक गंज, झाँसी	स्टोन ग्रिट 3.28	01711 18.06.84	संलग्न नहीं
12.	श्री अशोक कुमार पार्टनर टकसाल झाँसी, मे. ममता स्टोन क्रेशिंग क. दिगारा. झाँसी	स्टोन ग्रिट 5.34	01716 12.07.84	संलग्न नहीं
13.	श्री जय प्रकाश घई पार्टनर, 102 रिफ्यूजी कालोनी, में शिव शक्ति एण्ड क. 794/1 राम नगर रोड, चिरगाँव झाँसी	स्टोन ग्रिट 10.44	01767 30.10.84	संलग्न नहीं
14.	श्री भूपेन्द्र हाण्डा, धीरेन्द्र खुल्लर पार्टनर, मे. बुन्देलखण्ड मिनरल्स, शिवपुरी रोड, झाँसी, कार्या० 97/3, सी.एल. झाँसी	स्टोन क्रेशर 2.23	01834 19.03.85	संलग्न नहीं

15.	श्री सेवा राम अग्रवाल पार्टनर, मे. किरन इण्टर प्राइजेज कार्य. 95/11 बी.सी. एल. फैक्ट्री, 1186 सैंयर रोड, बिजौली, झाँसी	स्टोन ग्रिट 5.33	01848 29.03.85	संलग्न नहीं
16.	श्री करतार सिंह, सावित्री देवी, कृष्ण कुमार पार्टनर, में शिव शक्ति स्टोन बैलास्ट कं. चिरगाँव फैक्ट्री ग्रा. खिल्ली, झाँसी	स्टोन ग्रिट बैलस्टिंग 2.00	02033 21.03.86	संलग्न नहीं
17.	श्री विजय, मे. यादव ग्रेनाइट प्लाट नं. 3231,32,33 बिजौली झाँसी	स्टोन ग्रिट 2.85	02069 9.07.86	संलग्न नहीं
18.	श्री किशन लाल खियानी, 191 आजाद गंज, सीपरी बाजार, मे. के.के. ग्रेनाइट क्रं. कां लक्ष्मन पुरा झाँसी	स्टोन ग्रिट 5.891	सी 02223 27.03.87	संलग्न है
19.	श्री राम स्वरूप, श्रीमती कृष्ण देवी, 491/2 न्यू रायगंज, झाँसी, मे. आपो-आप ग्रेनाइट इण्ड. यू.न 2, लक्ष्मनपुरा, झाँसी	स्टोन ग्रिट 5.79	सी 02226 31.03.87	संलग्न है
20.	श्री गोपीचन्द्र गोविन्दानी, गोविन्द राम, मनोहर लाल, मनोज कुमार, मे. गोविन्दानी क्रं,क. रामनगर रोड, चिरगाँव	स्टोन ग्रिट 4.09	सी 02233 14.04.87	संलग्न है

21.	श्री महेन्द्र कुमार सरावगी, 1001/3 सिविल लाइन, झाँसी, मे. झाँसी ग्रेनाइट स्टोन, प्रो. प्रा. लि. लक्ष्मनपुरा, झाँसी	स्टोन ग्रिट 17.81	डी 02242 06.06.87	संलग्न है
22.	अशोक कुमार, 37, नानक गंज, झाँसी, मे. मोहन स्टोन क्रं. क., 10/1 लक्ष्मनपुरा, झाँसी	स्टोन ग्रिट 3.47	सी 02289 11.12.87	संलग्न है
23.	श्री बुद्ध सिंह मडोरा खुर्द, पो. खिल्ली मोंठ, झाँसी, मे. बुद्ध सिंह ग्रेनाइट, मड़ोरा खुर्द पो. खिल्ली, झाँसी	स्टोन ग्रिट 5.891	सी 02290 11.12.87	संलग्न है
24.	श्रीमती आशा शर्मा पत्नी एस. एम. शर्मा 95/6, सिविल लाइन, झांसी, मे. शताब्दी ग्रेनाइट, इण्ड, 1186/2 सैंयर रोड, बिजौली झाँसी	स्टोन ग्रिट 3.38	सी 02332 28.03.88	संलग्न है
25.	श्री ओम प्रकाश तिवारी प्रो. 35/1 सी.एल. झांसी, में. श्री राम स्टोन इण्टर प्रा. गोरा मछिया, झांसी,	स्टोन ग्रिट 8.73	सी 02398 5.12.88	संलग्न है
26.	श्री कश्मीरी सिंह, मोहन सिंह, अजीत सिंह, मे. सिंह स्टोन क्रेशिंग, इण्ड. लक्ष्मन पुरा, झांसी	स्टोन ग्रिट 8.98	02453 28.03.89	संलग्न है

27.	मे. शुभम ग्रेनाइट, डी.-30 औ. क्षेत्र बिजौली, 74/1, सी.पी. मिशन, कम्पाउण्ड, झाँसी	ग्रेनाइट, टाईल्स कटिंग एण्ड पॉलिशिंग 17.76 12.03.96	डी 04759 30.03.96	संलग्न है
28.	श्री पियूश जयसवाल, मे. जयसवाल ग्रेनाइट, बचावली बुजुर्ग, बरुआसागर	स्टोन ग्रिट 8.47	02460 28.04.89	संलग्न है
29.	श्री पातीराम मिश्र, मे. मिश्रा ग्रेनाइट, सांई का कुंआ अमरौला, झांसी	स्टोन ग्रिट 2.47	02512 29.11.89	संलग्न है
30.	श्री रतन लाल पार्टनर, मे. झांसी स्टोन मिनरल्स, रामनगर रोड, चिरगाँव	स्टोन ग्रिट 9.78	सी 02571 22.02.90	संलग्न है
31.	मन्नीलाल, मनोज, भगवानदास मे. यूनाईटेड क्रं., मोंठ	स्टोन ग्रिट 4.23	सी 02584 16.03.90	संलग्न है
32.	श्री यशवन्त सिंह, मे. मारुती ग्रेनाइट इण्ड, 1542/7 अम्बाबाय	स्टोन ग्रिट 9.02	सी 02624 29.03.90	संलग्न है

33.	श्री देवेन्द्र कुमार श्री वास्तव 251 पटेल नगर, उरई, मे. प्रकाश ग्रेनाइट क्रेशिंग इण्ड. मड़ोरा खुर्द, खिल्ली, मोंठ	स्टोन ग्रिट 11.89	डी 02666 03.09.90	संलग्न है
34.	श्री वंशी वलानी, रामप्रसाद, दौलतराम, मे. बलानी स्टोन क्रेशिंग ग्रा. पाली पहाड़ी शिवपुरी रोड, झाँसी	स्टोन ग्रिट 1.04	बी 02696 20.09.90	संलग्न है
35.	श्री वीरेश्वर शुक्ला पार्टनर, मे. जय दुर्गा स्टोन इण्ड, यूनियन, द्वितीय, सैंयर रोड बिजौली, झाँसी	स्टोन ग्रिट 3.63	सी 03050 20.08.91	संलग्न नहीं है
36.	श्री उर्मिला चरण गुप्ता प्रो. चिरगांव, झांसी, मे. सोरभ कंक्रीट वर्क्स स्टोन ग्रिट, गोरा मछिया, प्रो. बड़ागांव, कार्यालय, 944 सिविल लाइन, झाँसी	स्टोन ग्रिट 0.25 26.06.90	ए 03254 17.01.92	संलग्न नहीं है
37.	श्री अनूप अग्रवाल प्रो.,श्री श्यामजी ग्रेनिटिस, ग्रा. रसोई बबीना निकट, पेट्रोल पम्प, झाँसी	ग्रेनाइट टाईल्स, ग्रेनाइट 8.68	सी 04771 28.05.96	संलग्न नहीं है
38.	निरंजन राय प्रो., मे. बेतवा स्टोन पालिशिंग इण्ड., 199 क. बाहर दतिया गेट ग्वालियर रोड, झाँसी	ग्रेनाइट, टाईल्स, कटिंग पोलिशिंग 2.53	बी. 04791 17.06.96	संलग्न है

39.	श्री अतुल शर्मा, 80 सी.एल. झाँसी, मे. पीताम्बरा स्टोन्स, मथुरापुरा बिजौली रेलवे स्टेशन के पास, झाँसी	ग्रेनाइट स्टोन्स, कटिंग, पालिशिंग 46.05 15.12.95	डी 042794 20.06.96	संलग्न है
40.	विश्म्बरनाथ सिंह सेंगर, मे. वी. एस. ग्रेनाइट, मथुरापुरा निकट, बिजौली रेल्वे स्टेशन, झाँसी	ग्रेनाइट टाईल्स, कटिंग एवं पालिशिंग 4.13 1.3.96	बी. 04804 12.7.96	संलग्न नहीं है
41.	एम.के. दुबे पार्टनर, मे. पशुपति ग्रेनाइट डी,-51 औ. दोज बिजौली झाँसी, 22 सूद कालोनी ग्वालियर रोड, झाँसी	ग्रेनाइट टाईल्स, कटिंग एवं पालिशिंग 1173.3 10.8.95	डी. 4848 16.9.96	संलग्न नहीं है
42.	श्री दिनेश चन्द्र सिंघल, मे. शारदा ग्रेनाइट, 162 गुदरी बाजार झाँसी, कार्यस्थल गोरा मछिया झाँसी	स्टोन ग्रिट 5.15 15.2.97	सी. 04930 3.4.97	संलग्न नहीं है

43.	दीपक कुमार अग्रवाल पार्टनर, मे. शांति ग्रेनाइट गोरा मछिया झाँसी, कार्यस्थल 1551/1 सिविल लाइन ग्वालियर रोड, झाँसी	स्टोन ग्रिट 37.78 1.9.96	डी 04953 30.5.97	संलग्न है
44.	श्री मनीष दुबे पार्टनर, नीरज साहू, राजन कुमार श्रीवास्तव, श्री कैलाश नारयन साहू, मे. पशुपति ग्रेनाइट डी 51 औ. क्षेत्र बिजौली कार्यस्थल 22 सूद कालोनी ग्वालियर रोड, झाँसी	ग्रेनाइट टाईल्स कटिंग एवं पालिशिंग 11.35 2.5.97	सी 04956 4.6.97	संलग्न है
45.	आलोक मित्तल प्रो. मे. समरथ ग्रेनाइट इण्ड. बी.-89 औ. क्षेत्र की बिजौली कार्यालय- 473/1 सी.पी. मिशन कम्पाउण्ड, सि.ला. झाँसी	ग्रेनाइट टाईल्स कटिंग एवं पालिशिंग 7.48 31.3.97	ई 05101 29.11.97	संलग्न है
46.	श्री चन्द्रप्रकाश मित्तल प्रो., मे. मित्तल इण्डस्ट्रीज बी.-16 औ. क्षेत्र बिजौली, स्थल 5 झाँसी, फोन नं. 440491	ग्रेनाइट टाईल्स कटिंग एवं पालिशिंग 7.62 26.10.97	सी 02098 26.12.97	संलग्न है
47.	श्री एस.के. शर्मा, मे. महेन्द्र ग्रेनाइट बिजौली, झाँसी	स्टोन ग्रिट 2.10	सी 2098	संलग्न है

48.	श्री मती आशा शर्मा प्रो. कार्यालय 69 करियाप्पा मार्ग झाँसी, मे. राष्ट्रिको ग्रेनाइट इण्ड. औ. क्षेत्र बिजौली झाँसी 1186/2 सैयर रोट, झाँसी	स्टोन ग्रिट 3038 3.6.87	सी 2332 28.3.88	संलग्न है
49.	श्री प्रदीप कुमार साहू पार्टनर, मे. सरोज ग्रेनाइट स्टोन क्रेशिंग कं. 95/18 ए सिविल लाइन झाँसी लक्ष्मनपुरा, झाँसी	स्टोन ग्रिट उत्पाद 9.99 26.4.94	डी 04357 19.9.95	संलग्न है
50.	श्री के.डी. भार्गव पो., मे. माया स्टोन परवारीपुरा, मऊरानीपुर	स्टोन ग्रिट 2.05 15.11.98	बी 05603 24.4.99	संलग्न है
51.	विनोद कुमार यादव, मे. लक्ष्मी स्टोन क्रेशर मैला की टोरिया लहरगिर्द	स्टोन ग्रिट 3.00	बी 05990 24.4.01	संलग्न है
52.	श्री टी.आर. गुप्ता डयरेक्टर, मे. टी.आर.जी. इण्ड. प्रा.लि.निकट श्री निवास कर्टीलाइजर गोरा मछिया, झाँसी	स्टोन ग्रिट 11.00	सी 06025 19.10.01	संलग्न है
53.	श्री बालचन्द्र राय पार्टनर, मे. बालाजी स्टोन क्रेशर मऊरानीपुर रोड, ग्रा. लक्ष्मनपुरा, झाँसी	स्टोन ग्रिट 31.23	सी 06078 2.7.02	संलग्न है

54.	श्री अतुल शर्मा प्रो., मे. पीताम्बरा ग्रेनाइट प्रा. लि. ग्रा. मथुरापुरा झाँसी	ग्रेनाइट टाईल्स एवं 19.06	डी 06142 30.3.03	संलग्न है
55.	श्री सुभाष गुप्ता, मे. सत्यम् स्टोन मिनरल्स कानपुर रोड, गोरा मछिया, झाँसी	स्टोन ग्रिट (निर्माण) 26.40	सी 06195 8.10.03	संलग्न है
56.	श्री भूपेश शाह पार्टनर, मे. श्याम स्टोन इण्ड. ग्रा. दिगारा कानपुर रोड, झाँसी	स्टोन ग्रिट 50.50	डी 06324 2.9.04	संलग्न है
57.	श्री कप्तान सिंह, प्रो. मे. आर्शीवाद ग्रेनाइट गोरा मछिया, झाँसी	स्टोन ग्रिट 23.66	सी 06328 4.9.04	संलग्न है
58.	श्री शिवपाल सिंह, प्रो., मे. साकेत स्टोन क्रेशर ग्रामोद्योग, भूमि/गाटा सं. 272 ग्रा. बसोबई तह. मोंठ जिला झाँसी	स्टोन ग्रिट 26.27	डी 06569 7.3.05	संलग्न है
59.	श्री रवीन्द्र सिंह प्रो., मे. मिथला ग्रेनाइट क्रं., इण्ड. ग्रा. गोरा मछिया, झाँसी	स्टोन ग्रिट 61.86	डी 07011 20.1.06	संलग्न है
60.	श्री उत्तम सिंह यादव प्रो., श्री गनेश स्टोन क्रेशर, ग्रा. पो. खैलार झाँसी	स्टोन ग्रिट 21.80	डी 07171 6.5.06	संलग्न है

(ब) <u>ललितपुर</u>

ललितपुर का अर्थ है सुन्दर नगर। जल की बहुलता, अन्न, साग-सब्जी की सुलभता के कारण कहावत प्रसिद्ध है- "ललितपुर कबहुँ न छाड़ि यें जब तक मिले उधार"। ललितपुर जनपद 24°11-25° 13 अक्षांश तथा 78° 11-78° देशान्तर के मध्य स्थित है। इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 5039 वर्ग किमी. तथा जनसंख्या 7.52 लाख है। इसमें तीन तहसीलें ललितपुर, तालबेहट तथा मेहरोनी हैं तथा छः विकासखण्ड हैं। सन् 1844 ई. में चन्देरी राज्य का मुख्यालय ललितपुर बना। सन् 1991 ई. में इसे झाँसी का उपजिला बनाया गया। सन् 1974 ई. में ललितपुर को पूर्ण स्वतन्त्र जनपद का दर्जा मिला। ललितपुर का संस्थापक दकन का राजा सुमेर सिंह मान था। ललितपुर में प्रवाहित होने वाली नदियां बेतवा, धसान, जामिनी, शहजाद, सजनाम हैं। वनों का क्षेत्रफल 67 हजार हेक्टेयर है। कुआं से सिंचित क्षेत्र 93 प्रतिशत है। नहर प्रणाली के विकास से इसमें कमी आ रही है। रोहणी, शहजाद, गोविन्द सागर प्रमुख बांध हैं। ललितपुर का प्राचीन नाम ताम्रतत्रों में पुरवाल प्राप्त हुआ है। ललितपुर में स्थापित स्टोन क्रेशरों की सूची अग्रलिखित है -

<u>जनपद ललितपुर में कार्यरत स्टोन क्रेशर का विवरण</u>

क्रं. सं.	क्रेशर का नाम	स्थापित स्थान	मालिक का नाम
1.	पायनियर स्टोन क्रेशर	ग्राम अमरपुर	सरदार हरजीत सिंह
2	शिवम् स्टोन क्रेशर	ग्राम हर्षपुर	देवेश तिवारी
3.	वैभव स्टोन क्रेशर	चकनगवास	पवन कुमार
4.	डायमण्ड स्टोन क्रेशर	ग्राम दौरिया	गोपालकृष्ण
5.	विन्ध्यावल स्टोन क्रेशर	ग्राम कल्यानपुरा	गोपालकृष्ण

6.	जयगोपाल स्टोन क्रेशर	ग्राम लखनपुरा	फूलसिंह यादव
7.	तिलक यादव स्टोन क्रेशर	ग्राम युगरवारा	तिलक यादव
8.	जे.के. स्टोन क्रेशर	ग्राम गदयाना	जहीर खान
9.	साहू स्टोन क्रेशर	ग्राम पुरापाचौनी	सीताराम साहू
10.	शंकर स्टोन क्रेशर	ग्राम राखपंचमपुर	पवन कुमार
11.	पारस स्टोन क्रेशर	ग्राम टौरिया	प्रदीप कुमार जैन

अनुसंधान का प्रारूप :-

समाजशास्त्रीय शोध अध्ययनों में कई आधारों पर भिन्नता पाई जाती है। कुछ शोध कार्य किसी जिज्ञासा को शान्त करने के लिये तो कुछ केवल ज्ञान प्राप्ति के लिये किये जाते हैं, कुछ का लक्ष्य उपकल्पनाओं का निर्माण तथा कुछ का किसी उपकल्पना की सत्यता की जांच करना होता है। किसी शोध का लक्ष्य किसी घटना का यथार्थ चित्रण करना, किसी का सामाजिक समस्याओं के निराकरण हेतु विकल्पों का पता लगाना तथा कुछ का सामाजिक नियोजन एवं नियोजित परिवर्तन क प्रभावशीलता का पता लगाना और समाज कल्याण तथा विकास कार्यक्रमों के सफल संचालन में योगदान करना है। इन विभिन्न लक्ष्यों या प्रयोजनों के आधार पर सामाजिक शोध कार्य किया जाता है।

प्रत्येक सामाजिक शोध के कुछ निश्चित उद्देश्य होते हैं और इन उद्देश्यों की प्राप्ति तब तक नहीं की जा सकती तब तक योजनाबद्ध रूप में शोधकार्य का प्रारम्भ नहीं किया गया हो। इसी योजना की रूपरेखा की शोध प्रस्चना कहते हैं। इसका तात्पर्य यह हुआ कि एक सामाजिक शोध की समस्या या उपकल्पना जिस प्रकार की होगी, उसी के अनुसार शोध प्रस्चना का निर्माण किया जाता है जिससे शोध कार्य को एक निश्चित दिशा प्राप्त हो सके और शोधकर्ता इधर-उधर से बच जाये।

जैसा कि पहले ही कहा गया है कि कोई भी सामाजिक शोध बिना किसी लक्ष्य या उद्देश्य के नहीं होता है। इस लक्ष्य का उद्देश्य विकास और स्पष्टीकरण शोधकार्य की अवधि में नहीं होता, अपितु वास्तविक अध्ययन प्रारम्भ होने के पूर्व ही इसका निर्धारण कर लिया जाता है। शोध के उद्देश्य के आधार पर अध्ययन विषय के विभिन्न विषय के कतिपय पक्षों को उद्‌घाटित करने के लिये पहले से ही बनाई गई योजना की रूप रेखा को शोध प्ररचना कहते हैं।

श्री एकॉफ ने प्ररचना का अर्थ समझाते हुऐ लिखा है कि "निर्णय क्रियात्मक करने की स्थिति आने से पूर्व ही निर्णय निर्धारित करने की प्रक्रिया को प्ररचना कहते है।"[1]

अतः यह स्पष्ट है कि सामाजिक शोध प्ररचना के अनेक प्रकार हैं और शोधकर्ता अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सर्वाधिक उपयुक्त समझकर इनमें से किसी एक प्रकार का चयन कर लेता है और वह कौन सा प्रकार है यह ज्ञात होते ही शोधकार्य की प्रकृति व लक्ष्य स्पष्ट हो जाते हैं। जैसे, यदि हमें यह ज्ञात हो जाये कि शोध प्ररचना अन्वेषणात्मक है तो स्वतः ही यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी सामाजिक घटना के अन्तर्निहित कारणों की खोज करना ही उस शोध का उद्देश्य है। इस प्रकार शोधकार्य तथ्यों का विवरण मात्र होगा अथवा नवीन नियमों को प्रतिपादित किया जायेगा, उसका उस शोध कार्य में परीक्षण व प्रयोग का अधिक महत्व होगा, इन सब बातों को ध्यान में रखकर शोध कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व एक रूपरेखा बनाई जाती है, उसी को शोध प्ररचना कहते हैं।

समस्त शोधों का एक ही आधारभूत उद्देश्य ज्ञान प्राप्ति है। परन्तु इस ज्ञान की प्राप्ति विभिन्न प्रकार से हो सकती है और उसी के अनुसार शोध प्ररचना का स्वरूप भी अलग-अलग होता है। समाजशास्त्रीय अध्ययनों में अन्वेषणात्मक, वर्णनात्मक, निदानात्मक तथा परीक्षणात्मक शोध प्ररचनाओं को प्रयोग लाया

---

1. K. L. Ackoff, Design of Social Research, p-5

जाता है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना का प्रयोग किया जाता है। अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना के बारे में श्री सेलटिज व उनके साथियों ने लिखा है "अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना उस अनुभव को प्राप्त करने के लिये आवश्यक है जो कि अधिक निश्चित अनुसंधान के हेतु सम्बद्ध उपकल्पना के निरूपण में सहायक होगा।"[1]

इसी प्रकार के विचार श्री हंसराज ने अभिव्यक्त करते हुऐ प्रगट किये हैं, "अन्वेषणात्मक शोध किसी भी विशेष अध्ययन के लिये उपकल्पना का निर्माण करने तथा उससे सम्बन्धित अनुभव प्राप्त करने के लिये अनिवार्य है।"[2]

मान लीजिये हमें किसी विशेष सामाजिक स्थिति में तलाक प्राप्त व्यक्तियों में यौन व्यभिचार के विषय में अध्ययन करना है तो उसके लिये सबसे पहले उन कारकों का ज्ञान आवश्यक है जो इस प्रकार के व्यभिचार को उत्पन्न करते हैं। अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना इन्हीं कारकों को खोज निकालने की एक योजना बन जाती है।

शोधकर्ता द्वारा अपनाई गई इस शोध प्ररचना की सफलता के लिये शोधकर्ता ने :-

1. सम्बद्ध साहित्य का अध्ययन किया,
2. अनुभव सर्वेक्षण- उन सभी व्यक्तियों से सम्बन्ध स्थापित किया जिनके विषय में उसे यह सूचना मिली कि शोध विषय के सम्बन्ध में उनको पर्याप्त अनुभव या ज्ञान है। ऐसे लोगों का व्यवहारिक अनुभव शोधकर्ता के लिये पथ-प्रदर्शक बना, तथा
3. अन्तर्दृष्टि प्रेरक घटनाओं का विश्लेषण जिससे शोधकर्ता की अध्ययन वस्तु के सम्बन्ध में व्यवहारिक अन्तर्दृष्टि पनपी तथा शोध में अधिक

1. Seltiz, Jahoda, Dautach, cook-Research Methods in social Relations, p-33
2. Hansraj – Theory and Practice in social Research, p-69

सहायता मिली। प्रत्येक समुदाय के जीवन में दृष्टि आकर्षक, कुछ अत्यन्त सरल व स्पष्ट, कुछ व्याधिकीय, कुछ व्यक्तिगत विशिष्ट गुण सम्बन्धी घटनाऐं होती हैं जो कि अर्न्तदृष्टि को प्रोत्साहित करने में सहायक सिद्ध होती है।

'कुछ' को देखकर या परीक्षण कर 'सब' के बारे में अनुमान लगा लेने की विधि को निदर्शन कहते हैं। इस प्रविधि की आधारभूत मान्यता यह है कि इन 'कुछ' की विशेषताऐं 'सब' की आधारभूत विशेषताओं का उचित प्रतिनिधित्व करती हैं। यदि 'कुछ' का चुनाव ठीक तरह से किया जाये। 'सब' की परीक्षा करना या देखना असुविधाजनक, धनसापेक्ष और समय सापेक्ष हो सकता है।''[1] प्रतिनिधित्व करने वाले निदर्शनों का अध्ययन ही श्रेयस्कर है। शोध में निदर्शन प्रविधि का प्रयोग अत्यन्त लोकप्रिय है और वह इस अर्थ में कि रोज के जीवन में एक अनाड़ी आदमी भी इसका डटकर प्रयोग करता है। बाजार में गेहूँ, चावल अथवा दाल खरीदते समय बोरियों को खुलवाकर उनका एक-एक दाना कोई नहीं परखता अपितु बोरी में से एक मुट्ठी भर दाने निकालकर उनकी जाँच कर ली जाती है और फिर उस मुट्ठी भर दाने का मूल्यांकन होता है। वह सम्पूर्ण गेहूँ, चावल अथवा दाल के लिये होता है। पर हम उस मुट्ठी भर दाने को लेने में सावधानी बरतते हैं, ढेर या बोरी के भीतर हाथ डालकर मुट्ठी भर लेते हैं ताकि दुकानदार द्वारा ऊपर ही ऊपर सजाया हुआ माल ही केवल हाथ न लगे क्योंकि वह माल सम्पूर्ण ढेर या बोरी में रखे हुऐ माल का उचित प्रतिनिधित्व नहीं करेगा। इसलिये सावधानी की आवश्यकता है और इस कार्य में हम जितना सफल होंगे उतना ही माल खरीदने में हमें कम धोखा होगा। यही व्यवहारिक सामाजिक शोध की निदर्शन प्रविधि है जिसका प्रयोग परिशुद्ध रूप में वैज्ञानिक शोध करने मे किया जाता है। अनुसंधान कार्य मोटे तौर पर दो पद्धतियों के आधार पर किया जा

1. मुखर्जी, रवीन्द्रनाथ(2001)सामाजिक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन 7यू.ए.जवाहर नगर, दिल्ली,पृ- 279

सकता है । यदि हम केवल अध्ययन विषय की जनसंख्या या इकाईयों को ही पद्धति के चुनाव का आधार बनाये । ये दोनों पद्धतियाँ जनगणना पद्धति एवं निदर्शन पद्धति हैं । जनगणना पद्धति को हम (Census) तथा निदर्शन पद्धति को (Sampling Method) कहते हैं । जैसे एक स्कूल के बच्चों का सामाजिक अध्ययन करना है तो स्कूल के प्रत्येक बच्चे से पूछताछ करेंगे । निदर्शन पद्धति में प्रत्येक कक्षा के कुछ छात्रों को प्रतिनिधि चयन कर पूछ-ताछ करेंगे । निदर्शन के बारे में श्री याटन का मत है कि "निदर्शन शब्द का प्रयोग केवल किसी समग्र चीज की इकाईयों के एक सेट या भाग के लिये किया जाना चाहिये जिसे इस विश्वास के साथ चुना गया है कि वह समग्र का प्रतिनिधित्व करेगा ।"[1] इसी प्रकार के विचार गुडे एवं हाट (1952:209) ने प्रगट किये हैं- एक निदर्शन जैसा कि नाम से स्पष्ट है किसी विशाल सम्पूर्ण का छोटा प्रतिनिधि है ।"[2] शोध कार्य में निदर्शन प्रविधि ही कई तरह से अधिक लाभप्रद सिद्ध हुई है क्योंकि इसके प्रयोग से समय की बचत, श्रम की बचत, अधिक गहन अध्ययन की सम्भावना, निष्कर्षो की परिशुद्धता तथा अन्य अनेक लाभ होते है।

निदर्शन प्रविधि का तात्पर्य उस विधि से है जिसकी सहायता से प्रतिनिधित्व पूर्ण निदर्शन का चुनाव किया जाता है । अध्ययन निष्कर्षो के लिये यह अतिआवश्यक है कि निदर्शन समग्र का उचित प्रतिनिधित्व कर सके । इसलिये निदर्शन चुनाव का काम मनमाने ढंग से नहीं किया जा सकता है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता ने दैव निदर्शन विधि की अनियमित अंकन प्रणाली का उपयोग निदर्शितों के चयन हेतु किया है क्योंकि दैव निदर्शन विधि द्वारा अथवा पूर्वाग्रह की संभावना नहीं होती है एवं प्रत्येक इकाई को समान रूप से चुने जाने का अवसर मिलता है । जिससे निदर्शनों का उचित प्रतिनिधित्वपूर्ण चयन

---

1. Frank yaton.
2. William J.Goode &Poul K.Hatt (1952), Methods in social Research, Mac Graw-Hill Book co.Inc.NewYork, p 209

सुनिश्चित होता है । प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता ने जनपद झांसी एवं ललितपुर के क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों का चयन किया है जिसको निम्न तालिका में दिया गया है :-

चयनित सूचनादाताओं का निदर्श अभिकल्प

क्र. सं.	जनपद	कुल क्रेशरों की संख्या	श्रमिकों की संख्या	चयनित निर्देश	चयनित निदर्श प्रतिशत में
1.	ललितपुर	11	220	68	30.90%
2.	झाँसी	60	1121	332	30.11%

निदर्शन चुनाव में शोधकर्ता द्वारा जिन चरणों का पालन किया गया है वे क्रमशः हैः-

1- समग्र को निश्चित करना। 2- निदर्शन इकाई का निर्धारण।

3- इकाइयों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के साधन सूची बनाना।

4- निदर्शनों के आधार। 5- निदर्शन पद्धति का चुनाव।

6- निदर्शन का चुनाव इत्यादि।

तथ्यों के स्रोत

वास्तविक सूचना या तथ्यों के बिना सामाजिक अनुसंधान या शोध वास्तव में एक अपंग प्राणी की भाँति है। अनुसंधान की सफलता इसी बात पर निर्भर रहती है कि अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन विषय के सम्बन्ध में कितने वास्तविक निर्भर योग्य सूचनाओं और तथ्यों को एकत्रित करने में सफल होता है। यह सफलता सूचना प्राप्त करने के स्रोतों की विश्वसनीयता पर निर्भर करती है। अतः सूचना या तथ्यों के स्रोत के महत्व को सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में कम नहीं किया जा

सकता। साथ ही, ये सूचनाऐं या तथ्य एक ही प्रकार के नहीं होते है। इनमें भी कई प्रकार के भेद हैं और इन प्रकारों के विषय में भी स्पष्ट ज्ञान का होना एक सफल शोधकर्ता के लिये आवश्यक है। किस स्रोत से किस प्रकार की सूचना उसे प्राप्त हो सकती है, इस बात की स्पष्ट जानकारी न होने पर अनुसंधानकर्ता केवल इधर-उधर भटकता ही रहेगा और उसका काफी समय तथा श्रम व्यर्थ चला जायेगा। अतः सूचना या तथ्यों के प्रकार तथा स्रोतों के बारे में ज्ञान अति आवश्यक है।

सामाजिक शोध में विभिन्न प्रकार की सूचनाओं या तथ्यों की आवश्यकता होती है। इन्हें मोटे तौर पर दो भागों में विभाजित किया जा सकता है -(1) प्राथमिक तथ्य या सूचनाऐं तथा (2) द्वितीयक तथ्य या सूचनाऐं। प्राथमिक तथ्य वे मौलिक सूचनाऐं या आंकड़े होते है जो कि एक शोधकर्ता वास्तविक अध्ययन स्थल में जाकर विषय या समस्या से सम्बन्धित जीवित व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अथवा अनुसूची या प्रश्नावली की सहायता से एकत्र करता है अथवा प्रत्यक्ष निरीक्षण के द्वारा प्राप्त करता है जैसा कि श्री पामर (1928:57) ने अपने विचार प्रगट किये है, "ऐसे व्यक्ति न केवल एक विषय की विद्यमान समस्याओं को बताने की योग्यता रखते है अपितु एक सामाजिक प्रक्रिया में अन्तर्निहित महत्वपूर्ण चरण व निरीक्षण योग्य झुकावों के सम्बन्ध में भी संकेत कर सकते हैं।"[1]

श्रीमती यंग (1960:127) ने सूचनाओं के स्रोतों को दो मोटे भागों में विभाजित किया है :- 1. प्रलेखी स्रोत तथा, 2. क्षेत्रीय स्रोत।

इस शोध अध्ययन में शोधकर्ता ने क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों को इकाई मानकर प्राथमिक तथ्यों के स्रोत का चयन किया तथा स्वयं के क्षेत्रीय अवलोकन को भी केन्द्र बनाया। शोध अध्ययन में दितीयक स्रोत- सम्बन्धित पुस्तकें, जीवन इतिहास, प्रतिवेदन, समाचार पत्रों में प्रकाशित विषय वस्तु को भी

1. पालमार, वी.एम.(1928)फील्ड स्टडी इन सोशियोलोजी, यूनिवरसिटी आफ शिकागो,पृष्ठ-57

प्रमाण के तौर पर प्रयोग में लाया गया क्योंकि भारत जैसे देश में जहाँ की सांख्यिकीय सामग्री प्राप्त करने के स्रोत तथा साधन सीमित व दोषपूर्ण है, जनगणना प्रतिवेदनों को नहीं नकारा जा सकता है। इन प्रतिवेदनों द्वारा सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन के अनेक महत्वपूर्ण पक्षों के विषय में विश्वसनीय आंकड़े व सूचनाएँ प्राप्त हो जाती है। जैसे- अपने देश में परिवार का आकार, स्त्री-पुरूष का अनुपात, जाति व धर्म के समर्थकों की संख्या, विभिन्न पेशों में लगी श्रम शक्ति, शिक्षा का स्तर, आयु का वर्गीकरण, जन्म व मृत्युदर, वैवाहिक स्तर तथा जनसंख्या आदि। इसका राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, व्यापारिक बहुत महत्व होता है।

किसी भी सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य एक घटना विशेष के सम्बन्ध में वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना होता है। वैज्ञानिक निष्कर्ष कोई अटकलपच्चू निष्कर्ष नहीं अपितु वास्तविक तथ्यों (Actual Facts) पर आधारित यथार्थ (Exact) व निश्चित निष्कर्ष होता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सामाजिक शोध की बुनियादी शर्त अध्ययन विषय से सम्बन्धित वास्तविक तथ्यों का संकलन करना है।

तथ्य संकलन

वास्तविक तथ्यों को काल्पनिक ढंग से एकत्र नहीं किया जा सकता। इसके लिये तो कुछ प्रमाण सिद्ध तरीकों का होना आवश्यक है। सामाजिक अनुसंधान के लिये आवश्यक वास्तविक तथ्यों को एकत्र करने के लिये काम में लाये गये निश्चित व प्रमाण सिद्ध तरीकों को ही तथ्य संकलन की प्रविधि कहते है। वैज्ञानिक विश्लेषण और व्याख्या के लिये जिन वास्तविक तथ्यों की आवश्यकता होती है उन्हें एकत्र करने के लिये शोधकर्ता जिस विधि या तरीके को अपनाता है वही उसके लिये प्रविधि होती है। प्रो० मोसर (1961:271) ने लिखा है कि, "प्रविधियां एक सामाजिक वैज्ञानिक के लिये वे मान्य तथा सुव्यस्थित तरीके हैं

जिन्हें वह अपने अध्ययन में विषय से सम्बन्धित विश्वसनीय तथ्यों को प्राप्त करने के लिये उपयोग में लाता है।"[1]

इस शोध अध्ययन में शोधकर्ता के द्वारा साक्षात्कार अनुसूची को प्रयोग में लाने से पूर्व अनुसूची का क्षेत्र में परीक्षण किया गया तथा बाद में अनुसूची की त्रुटियों को दूर किया गया। तत्पश्चात् साक्षात्कार अनुसूची को प्रयोग में लाया गया। क्योंकि व्यक्तियों की भावनाओं, मनोवृत्तियों और उद्वेगों का अध्ययन कैसे किया जाये, साक्षात्कार प्रविधि ही इसका निदान प्रस्तुत करती है। सामाजिक अनुसंधान की सर्वाधिक प्रचलित प्रविधियों में सम्भवतः इस प्रविधि का स्थान सर्वोपरि है। प्रो० आलपोर्ट ने इस प्रविधि की उत्पत्ति के बारे में कहा है कि, "यदि हम यह जानना चाहते है कि लोग क्या महसूस करते हैं, क्या अनुभव करते हैं और क्या याद रखते हैं, उनकी भावनाऐं व उद्देश्य क्या हैं, तो उनसे स्वयं क्यों नहीं पूछते"? साक्षात्कार प्रविधि पर प्रकाश डालते हुए श्री वी. एम. पालमर (1928:170) ने कहा है कि, "साक्षात्कार दो व्यक्तियों के बीच एक सामाजिक स्थिति है, जिसमें अन्तर्निहित मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के अन्तर्गत यह आवश्यक है कि दोनों व्यक्ति परस्पर उत्तर-प्रत्युत्तर करते रहें। यद्यपि साक्षात्कार में सामाजिक शोध के उद्देश्य से सम्बन्धित पक्षों से अध्ययन विषय के सम्बन्ध में काफी कुछ उत्तर प्राप्त होने चाहिये।"[2]

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता ने परिस्थितियों से रूबरू होने के लिये निरीक्षण प्रविधि का भी प्रयोग किया है। जिसके बारे में प्रो० गुड एण्ड हाट (1952:119) ने लिखा है कि, "विज्ञान निरीक्षण से प्रारम्भ होता है और फिर सत्यापन के लिये अन्तिम रूप से निरीक्षण पर ही लौटकर आना पड़ता है।"[3] वास्तव में कोई भी शोधकर्ता किसी भी घटना या अवस्था को उस समय तक

---

1. C. A. Moser and C. Kalfon,(1961) survey methods in social investigation, p-271
2. पालमार, वी.एम.(1928)फील्ड स्टडी इन सोशियोलोजी,पृष्ठ-170
3. विलियम, जे.गुड एण्ड पौल, के हाट (1952) मैथड इन सोसल रिसर्च मैक्ग्रोहिल बुक कम्पनी न्यूयार्क पृष्ठ-15

स्वीकार नहीं करता जब तक कि वह स्वयं उसका अपनी इन्द्रियों से निरीक्षण न कर लें।

सामाजिक विज्ञानों के बारे में भी यह तथ्य सत्य है। कोई भी शोधकर्ता तब तक सफलता प्राप्त नहीं कर पाता। जब तक शोध में निरीक्षण विधि का प्रयोग नहीं किया गया हो। इसी निरीक्षण प्रविधि का समाज वैज्ञानिक द्वारा अपने ही साथी एवं स्वजातीय मनुष्यों एवं स्त्रियों तथा संस्थाओं के निरीक्षण हेतु प्रयोग किया जाता है। यदि संक्षिप्त में कहा जाये तो निरीक्षण कार्य कारण अथवा पारस्परिक सम्बन्ध को जानने के लिये स्वाभाविक रूप से घटित होने वाली घटनाओं का सूक्ष्म निरीक्षण है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता ने साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से तथ्य संकलन का कार्य किया है। शोधकर्ता ने अनुसूची में अधिकांशतः संयोजित प्रश्न तथा दोहरे प्रश्नों का ही निर्माण किया तथा खुले प्रश्नों को नहीं रखा गया क्योंकि उनके वर्गीकरण में तथा सारणीकरण में पर्याप्त समय तथा धन की आवश्यकता पड़ती है। इस कार्य के लिये उसने साक्षात्कार की निम्न प्रक्रिया को अपनाया :-

1. साक्षात्कार :- साक्षात्कार में सामाजिक अन्तः क्रिया के द्वारा शोधकर्ता ने उत्तरदाताओं से अध्ययन से सम्बन्धित सूचनाऐं प्राप्त करने के लिये साक्षात्कार किया। शोध की परिशुद्धता बनाये रखने के लिये शोधकर्ता ने स्वयं साक्षात्कार अनुसूची के अनुसार निदर्शनों से आमने-सामने की परिस्थिति में बैठ कर तथ्यों को एकत्र किया तथा किसी उत्तरदाता के अनुपस्थित होने पर दूसरे उत्तरदाता का चयन करके सूचनाऐं एकत्र की।

2. **सहयोग की याचना :-** शोधकर्ता ने शोध के उद्देश्य को निदर्शनों के सम्मुख स्पष्ट किया तथा सहयोग की प्रार्थना की तथा उन्हें विश्वास दिलाया कि उन के द्वारा दी गई सभी सूचनाऐं अत्यन्त गोपनीय रखी जायेंगी और यह भी

बताया कि आपके सहयोग के बिना क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों की सामाजिक आर्थिक तथा राजनैतिक स्थितियों का अध्ययन असम्भव है।

3. साक्षात्कार का प्रारम्भ :- सहयोग की याचना के बाद शोधकर्ता ने साक्षात्कार प्रारम्भ किया। सर्वप्रथम शोधकर्ता ने प्राथमिक प्रश्नों नाम, आयु, शिक्षा, व्यवसाय आदि पूछे उसके बाद अध्ययन से सम्बन्धित प्रश्न पूछे। वास्तव में निदर्शनों से सूचना प्राप्त करना साक्षात्कार का प्रमुख उद्देश्य होता है।

4. उत्साहवर्धक वाक्यों का प्रयोग :- शोधकर्ता ने साक्षात्कार प्रक्रिया की अवधि में "आपकी सूचनाऐं क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की समस्याऐं हल करने में काफी सहायक है" तथा " आपने कई नई बातें बताई जो महत्वपूर्ण है" ऐसे वाक्यों को बीच-बीच में दोहराकर साक्षात्कारदाताओं का उत्साहवर्धन किया।

5. स्मरण कराना :- शोधकर्ता को जब भी ऐसा लगा कि साक्षात्कारदाता अपने अनुभवों व भावना में बह गया है और मुख्य विषय से दूर हो गया है तो शोधकर्ता ने उसे मुख्य विषय का ध्यान दिलाया।

6. सूचना को नोट करना :- साक्षात्कार की स्वतन्त्र प्रक्रिया में शोधकर्ता ने निदर्शनों द्वारा प्रदान की गई सूचनाओं को अनुसूची के प्रश्नों के सम्मुख नोट भी किया ताकि सूचनादाता से वार्तालाप में कोई विघ्न न पड़े।

शोधकर्ता को तथ्यों को एकत्र करने में साक्षात्कार प्रक्रिया के दौरान कुछ कठिनाईयों का सामना भी करना पड़ा :-

1. उत्तरदाता का घर पर न मिलना।
2. कुछ उत्तरदाताओं द्वारा साक्षात्कार के लिये मना कर देना।
3. अधिक समय लगाना तथा
4. व्यक्तिगत मामलों में तथ्यों को छिपाना आदि।

शोधकर्ता ने जो उत्तरदाता घर पर नहीं मिले उनके स्थान पर अगले उत्तरदाता का चयन कर लिया। जिन उत्तरदाताओं ने साक्षात्कार के लिये मना

कर दिया उनके सम्बन्धियों से हस्तक्षेप कराकर राजी कर लिया गया। व्यक्तिगत मामलों में तथ्यों को छिपाने की समस्या को उनकी प्रशंसा करके तथा "उनके अनुभव बहुमूल्य है" कहकर उन्हें यथार्थ व्यक्त करने हेतु प्रेरित किया।

तथ्यों का वर्गीकरण :-

सामाजिक अनुसंधान, शोध का आधार अध्ययन विषय से सम्बधित वास्तविक तथ्य है। इन तथ्यों को निरीक्षण, साक्षात्कार, अनुसूची तथा प्रश्नावली की सहायता से एकत्र किया जाता है, परन्तु इस प्रकार एकत्र तथ्यों के ढेर से कुछ भी निष्कर्ष निकाला नहीं जा सकता और न ही विषय के सम्बन्ध में कुछ भी जाना जा सकता है। तथ्यों का पहाड़ कुछ नहीं कहता जब तक उसे कुछ व्यवस्थित स्वरूप न प्रदान किया जाए और इसके लिये तथ्यों का वर्गीकरण आवश्यक होता है। जब हम तथ्यों को उसमें पाई जाने वाली समानता या भिन्नता के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में व्यवस्थित रूप में विभाजित करते हैं, तो वह वर्गीकरण कहलाता हैं।

तथ्यों के वर्गीकरण पर प्रकाश डालते हुऐ श्री कोनोर (1936:18) ने लिखा है कि, "वर्गीकरण तथ्यों को उनकी समानता तथा निकटता के आधार पर समूहों तथा वर्गों में क्रमबद्ध करने तथा व्यक्तिगत इकाईयों की भिन्नता के बीच पाये जाने वाले गुणों की एकात्मकता को प्रकट करने की एक प्रक्रिया है।"[1]

श्री एलहान्स ने तथ्यों के वर्गीकरण के सम्बन्ध में कुछ ऐसे ही विचार व्यक्त किये है -"सादृश्यताओं व समानताओं के अनुसार तथ्यों को समूहों एवं वर्गों में व्यवस्थित करने की प्रक्रिया पारिभाषिक दृष्टि से वर्गीकरण कहलाती है।"[2]

सामाजिक अनुसंधान में वर्गीकरण का अत्यन्त महत्व है क्योंकि इसके द्वारा जटिल, बिखरे हुऐ, परस्पर असम्बद्ध तथ्यों को थोड़े से, समझने योग्य

---

1. कोनोर, एल.आर.(1936) ए स्टेटिस्टिक्स इन थ्योरी एण्ड प्रेक्टिस, पृष्ठ-18
2. एलहान्स, डी. एन. फण्डमेण्टल ऑफ स्टेटिसटिक्स, पृष्ठ-56

तथा तर्कसंगत समूह में रखना पड़ता है। इकाइयों की समानता तथा असमानता वर्गीकरण के द्वारा स्पष्ट होती है। वर्गीकरण के द्वारा दो वर्गों के तुलनात्मक अध्ययन का कार्य सरल हो जाता है। वर्गीकरण के द्वारा संकलित की गई सूचनाएँ जब वर्गों में रखी जाती है तो वह स्वतः प्रगट हो जाती है। वर्गीकरण तथ्यों को विश्लेषण व व्याख्या के लिये सरल बनाता है तथा वर्गीकरण के द्वारा संकलित तथ्य संक्षिप्त तथा बोधगम्य हो जाते है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में सूचनाओं को एकत्र कर शोधकर्ता ने उन्हें गुणात्मक अर्थात् सरल या विभेदात्मक और बहुगुणी वर्गीकृत किया। उसके साथ-साथ गणनात्मक वर्गीकरण में खण्डित श्रेणी के अनुसार भी तथ्यों का वर्गीकरण किया है। ऐसा करने से सूचनाओं को समझने में बुद्धि पर अनावश्यक जोर नहीं देना पड़ा और इस प्रकार वर्गीकरण सांख्यिकीय दृष्टि से भी शुद्ध हो गया।

तथ्यों का सारणीयन :-

सामाजिक अनुसंधान में वर्गीकरण की प्रक्रिया के पश्चात् सामग्री को और भी स्पष्ट तथा बोधगम्य करने के लिये तथ्यों का सारणीयन किया जाता है। वास्तव में, सारणीयन वर्गीकरण के पश्चात् विश्लेषण कार्य में अगला कदम होता है। इसके माध्यम से तथ्यों में सरलता और स्पष्टता आती है और गणनात्मक तथ्य अधिक व्यवस्थित होकर प्रदर्शन के योग्य बन जाते है। इसके अन्तर्गत तथ्यों को विभिन्न स्तम्भों (Columns) तथा पंक्तियों में प्रस्तुत किया जाता है। जिससे तथ्यों को समझाने में सुविधा व सरलता हो। सर्वश्री जहोदा, ज्यूड्स, कुक आदि ने लिखा है कि, "जिस प्रकार संकेतन (Coding) को तथ्यों के श्रेणीबद्ध करने की प्राविधिक पद्धति कहा जाता है, उसी प्रकार सारणीयन को सांख्यिकीय तत्वों के विश्लेषण

की प्राविधिक प्रक्रिया का अंग माना जाता है।''[1] यही कारण है कि श्री राबर्ट ई0 चाड्डाक (1925:43) ने लिखा है कि, ''सामाजिक विज्ञानों में वर्गीकरण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि सामाजिक घटनाओं में एक परिस्थिति को अनेक कारक प्रभावित करते हैं तथा उन कारकों में अत्यधिक भिन्नताऐं भी होती है।''[2]

सारणीयन के बारे में एम0 के0 घोष तथा एस0 सी0 चतुर्वेदी (1950:94) ने लिखा है कि, ''दो दिशाओं में पढ़ा जा सके इस रूप में कुछ पंक्तियों तथा स्तम्भों में तथ्यों को एक क्रमबद्ध तौर पर व्यवस्थित करने की प्रक्रिया को सारणीयन कहा जाता है।''[3] सारणीयन का सामान्य उद्देश्य तथ्यों को सुस्पष्ट तथा बोधगम्य बनाना, उनकी विशेषताओं को प्रदर्शित करना, तथ्यों को संक्षिप्त रूप प्रदान करना तथा तथ्यों को तुलनात्मक बनाना है। इसलिये श्री सैक्रिस्ट ने लिखा है कि , ''सारणी वह साधन है जिससे वर्गीकरण द्वारा की गई विवेचना को स्थायी स्वरूप प्रदान किया जाता है तथा समान व तुलनात्मक इकाई को उचित स्थान पर रखा जाता है।''[4] यही कारण है कि पी0वी0 यंग ने सांख्यिकीय सारणी को सांख्यिकीय की आशुलिपि (Shorthand) कहते हुऐ बताया कि इससे उनमें आकर्षकता, समुचित आकार, तुलना की सुविधा, स्पष्टता तथा सरलता, उद्देश्य के अनुकूल तथा वैज्ञानिकता का समावेश हो जाता है। प्रो0 थॉमसन ने ठीक ही लिखा है कि, ''एक जंगल को साफ करके उसके स्थान पर एक 'महानगरी' बनाने से सभ्यता व संस्कृति के तत्वों को जिस भांति सुस्पष्टता व सुनिश्चितता प्राप्त होती है, उसी प्रकार संकलित तत्वों के ढेरों का सारणीयन कर लेने से उनके अन्तर्निहित गुण

1. जहोडा डच एण्ड डब्लू रिसर्च मैथड इन सोसल इनवेस्टीगेशन पृष्ठ-270
2. रोवर्ट, इ. चन्ढोक (1925) प्रन्शीपल एण्ड मैथड ऑफ स्टेटिक्स, होगटन मिफिन कम्पनी वोस्टन पृष्ठ-43
3. घोष, एम. के. तथा चतुर्वेदी, एस. सी. (1950) स्टेटिक्स थ्योरी एण्ड प्रक्टिस पृष्ठ-94
4 . होरेश, सैक्रिष्ट सोसल सर्वे एण्ड रिसर्च, पृष्ठ-273

प्रगट हो जाते हैं और सम्पूर्ण विषय के सम्बन्ध में एक सामान्य ज्ञान प्राप्त होता है। वैज्ञानिक अनुसंधान में सारणीयन आवश्यक नहीं अनिवार्य है।''

इस शोध अध्ययन के प्रतिवेदन में शोधकर्ता ने तथ्यों को बोधगम्य बनाने के लिये आवृत्ति सारणी (Frequency Tables) तथा सरल सारणी (Simple Tables) का प्रयोग ही नहीं किया अपितु शोधकर्ता ने सारणी निर्माण के आवश्यक नियम तथा सावधानियाँ भी बरतीं जैसे :-

1. सारणी का शीर्षक लिखना,
2. सारणी के स्तम्भों का आकार उस पेज के आकार के रूप में रखना जिस पर सारणी बनाई गई है,
3. अनुशीर्षक Captions (कालम विशेष में किन आंकड़ों को प्रस्तुत किया गया है)
4. पंक्तियों में सूचना लिखना,
5. स्तम्भों का विभाजन,
6. स्तम्भों को क्रम में लिखना,
7. कुल योग तथा
8. टिप्पणियाँ आदि।

सारणीयन से समस्त संकलित तथ्य एक तर्क पूर्ण ढंग से व्यवस्थित हो जाते हैं, सारणीयन में तथ्यों को एक सरल तथा स्पष्ट स्वरूप मिल जाता है। इससें सांख्यिकीय विश्लेषण में बहुत मदद मिलती है, सारणीयन तुलनात्मक अध्ययन कार्य को सरल बना देता है, सारणीयन से समय तथा स्थान की बचत होती है तथा सारणीयन वैज्ञानिक विश्लेषण तथा व्याख्या के कार्य को सरल बनाता है।

<u>तथ्यों का विश्लेषण तथा व्याख्या :-</u> श्रीमती पी0वी0 यंग (1960:509) ने लिखा है कि वैज्ञानिक विश्लेषण यह मानता है कि तथ्यों के संकलन के पीछे स्वयं तथ्यों से कहीं अधिक महत्वपूर्ण व रहस्योदघाटक (Revealing) और कुछ भी है, यदि सुव्यवस्थित तथ्यों को सम्पूर्ण अध्ययन से सम्बन्धित किया जाये तो उनका महत्वपूर्ण सामान्य अर्थ प्रगट हो सकता है जिसके आधार पर घटना की सप्रमाण

व्याख्यायें प्रस्तुत की जा सकती है।"[1] इस कथन का तात्पर्य यही है कि शोध कार्य में केवल तथ्यों का पहाड़ एकत्र कर लेने से ही अध्ययन विषय का वास्तविक अर्थ, कारण तथा परिणाम स्पष्ट नहीं हो सकता जब तक उन एकत्र तथ्यों को सुव्यवस्थित करके उनका विश्लेषण व व्याख्या न की जाये। प्रख्यात फ्रैन्च गणितशास्त्री श्री प्लेवेन केयर ने उचित ही लिखा है कि, "जिस प्रकार एक मकान पत्थरों से बनता है उसी प्रकार विज्ञान का निर्माण तथ्यों से होता है, पर केवल तथ्यों का एक संकलन उसी भाँति विज्ञान नहीं है जैसा पत्थरों का एक ढेर मकान नहीं है।"[2]

अतः विज्ञान के लिये यह आवश्यक है कि एकत्र तथ्यों का एक संकलन सुव्यवस्थित करके उनका विश्लेषण व व्याख्या की जाये ताकि विषय के सम्बन्ध में सच्चे ज्ञान की प्राप्ति सम्भव हो।

तथ्यों के विश्लेषण व व्याख्या की आधारभूत आवश्यकता यह है कि यदि ऐसा न किया गया तो संकलित तथ्य अर्थहीन ही बने रहेंगे और उनसे अध्ययन का कोई भी परिणाम निकालना हमारे लिये सम्भव नहीं होगा। इस अर्थ में तथ्यों के विश्लेषण तथा व्याख्या के बिना शोध कार्य अपूर्ण ही रह जायेगा। यही कारण है कि श्रीमती यंग (1960:309) ने वैज्ञानिक विश्लेषण को "शोध का रचनात्मक पक्ष" कहा है।[3]

सामाजिक शोधकर्ता किसी भी चीज या घटना को स्वयं सिद्ध नहीं मान लेता। यह तो संकलित तथ्यों, विद्यमान आदर्शों तथा अन्तर्निहित सामाजिक दर्शन को सामयिक मानता है और इसलिये कोई भी प्रयोगसिद्ध परिणाम निकालने के लिये संकलित तथ्यों की सावधनीपूर्वक जाँच, उनके पारस्परिक सम्बन्धों तथा उनका सम्पूर्ण घटना के साथ सम्बन्ध के सन्दर्भ में करना उसके लिये आवश्यक

1. यंग, पी.वी. (1960): साईन्टीफिक सोसल सर्वे एण्ड रिसर्च, एसिया पवलिसिंग हाऊस, बोम्बे,पृष्ठ -509
2. प्लेवेन केयर.
3. पी. वी. यंग (1960): साईन्टीफिक सोसल सर्वे एण्ड रिसर्च, एसिया पवलिसिंग हाऊस, बोम्बे,पृष्ठ -309

हो जाता है। इस प्रकार तथ्यों का विश्लेषण करने के दौरान ही वह पुरानी अवधारणाओं की परीक्षा करने अथवा नवीन चुनौती देने वाली अवधारणाओं को ढूँढ़ निकालने में सफल हो सकता है। साथ ही, इस प्रकार के विश्लेषण से उसे विषय के सम्बन्ध में जो अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती है उसी के आधार पर वह अवधारणाओं की पुर्नपरीक्षा करता है और इस प्रकार तथ्यों की व्याख्या के लिये एक अधिक ठोस आधार को प्राप्त करता है। अतः तथ्यों के उचित विश्लेषण के बिना अध्ययन, विषय की वास्तविक व्याख्या सम्भव नहीं और तथ्ययुक्त व्याख्या के बिना शोधकार्य का कोई परिणाम निकल ही नहीं सकता है।

श्रीमती यंग (1960:310) के अनुसार, "क्रमबद्ध विश्लेषण का कार्य एक ठोस बौद्धिक भवन के विचार के एक संगठन का निर्माण करना है जो कि एकत्रित तथ्यों को उनके उचित स्थान तथा सम्बन्धों को प्रस्थापित करने में सहायक होगा ताकि उनसे सामान्य निष्कर्षो को निकाला जा सके।"[1]

इस प्रकार तथ्यों के विश्लेषण के बिना किसी भी विषय या घटना के कार्यकारण सम्बन्ध की व्याख्या सम्भव नहीं है और इस प्रकार की व्याख्या के बिना न तो विज्ञान की कोई उन्नति सम्भव है और न ही वास्तविक ज्ञान की प्राप्ति। विश्लेषण व व्याख्या के आधार पर ही वास्तविक वैज्ञानिक नियमों को प्रतिपादित किया जा सकता है। पुराने सिद्धान्तों या नियमों की परीक्षा करने, नवीन सिद्धान्तों या नियमों को प्रतिपादित करने अथवा पुराने सिद्धान्तों या नियमों को गलत प्रमाणित करने के लिये एकत्रित तथ्यां का विश्लेषण व व्याख्या आवश्यक है। स्वयं तथ्य मूक होते हैं वे कुछ नहीं कहते पर उनका क्रमबद्ध विश्लेषण व व्याख्या करके उन्हें मुखरित किया जाता है।

इस शोध अध्ययन में शोधकर्ता ने उपरोक्त सभी मार्ग दर्शनों एवं सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर एकत्र तथ्यों को वर्गीकृत कर उनको सारणीबद्ध करके

---

1. यंग, पी.वी. (1960): साईन्टीफिक सोसल सर्वे एण्ड रिसर्च, एशिया पवलिसिंग हाऊस, बोम्बे, पृष्ठ -310

अभिवृत्तियों को प्रतिशतों में विश्लेषण किया है जो सरस, सरल तथा सुबोध भी हो गया। विश्लेषण की व्याख्या जैसी समाज शास्त्र के शोध प्रतिवेदनों में प्रस्तुत की जाती है उसी प्रकार इसमें भी की गई है।

<u>तथ्यों का चित्रमय प्रदर्शन :-</u>

सांख्यिकीय विज्ञान का मुख्य कार्य सांख्यिकीय तथ्यों को सरलतम रूप प्रदान करना है। जिससे कि उन तथ्यों को शीघ्र एवं सरलता से समझा जा सके और उनके विषय में निष्कर्ष निकाला जा सके। प्रायः यह देखा गया है कि तथ्यों का वर्गीकरण और सारणीयन कर लेने से बिखरे हुऐ संकलित तथ्यों के ढेर को क्रमबद्ध, व्यवस्थित व संक्षिप्त रूप मिल जाता है जिसके कारण उन्हें समझना सरल हो जाता है। परन्तु इन संकलित तथ्यों का और भी प्रभावशाली रूप इस का चित्रमय प्रदर्शन है। आधुनिक समय में संख्यात्मक तथ्यों का चित्रों द्वारा प्रदर्शन एक विस्तृत कला बन गई है और इस दिशा में निरन्तर प्रगति करने के सम्बन्ध में प्रयत्नशीलता भी बढ़ती जा रही है। इसका कारण भी स्पष्ट है, साधारण व्यक्ति के लिये संख्याऐं या आंकड़े प्रायः नीरस, जटिल तथा अरुचिकर होते है। इसलिये संख्या की ओर न तो वह ध्यान देता है और न ही संख्याओं में उसकी कोई रूचि होती है। इसके विपरीत चित्र स्वतः ही आकर्षक होते हैं और उन्हें देखकर वह प्रभावित हुऐ बिना नहीं रह सकता है। चित्रों द्वारा तथ्यों के प्रदर्शन की यही सार्थकता और यही चित्रों की बढ़ती हुई लोकप्रियता का रहस्य है। इसलिये वेडिंग्टन को लिखना ही पड़ा कि, " भली प्रकार से रचित एक चित्र आंखों को प्रभावित करता है और मस्तिष्क को भी, क्योंकि चित्र उन व्यक्तियों के लिये व्यवहारिक, स्पष्ट तथा शीघ्र समझने योग्य होता है जो प्रदर्शन की पद्धति से अनभिज्ञ होते है।"[1]

1- Bodington,Statiatics and its application to commerce, P-140

यथार्थ सारणीयन तथ्यों के वैज्ञानिक विश्लेषण तथा व्याख्या में अत्यन्त सहायक सिद्ध होता है। फिर भी साधारण जनता के लिये सारणीयन में दिये गये अंक विशेष अर्थ नहीं रखते। ऐसे व्यक्तियों के लिये सारणी में उल्लेखित तथ्यों की अन्तर्निहित प्रकृति व परिणामों को समझना बहुत कठिन होता हैं। इसके विपरीत इन्हीं अंकों का चित्र में प्रदर्शन करने पर तथ्यों की वास्तविकताओं को समझने में देर नहीं लगती। इतना ही नहीं, चित्रों द्वारा तथ्यों का तुलनात्मक महत्व जितना स्पष्ट रूप में प्रगट होता है उतना ही किसी और साधन द्वारा सम्भव नहीं। इसलिये सामाजिक अनुसंधान के प्रत्येक विद्यार्थी के लिये तथ्यों के चित्रमय प्रदर्शन की कला से परिचित होना आवश्यक है। श्री वाउले ने ठीक ही कहा है कि, "चित्र आँख के सहायक और समय बचाने के साधन मात्र हैं।"

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधकर्ता ने तथ्यों का चित्रमय प्रदर्शन किया है। जिसमें सरल छड़ चित्र (Simple Bar Diagram), बहुगुणी छड़ चित्र (Multiple Bar Diagram) तथा पाई चित्र मुख्य हैं ताकि

1. तथ्यों का आकर्षण तथा प्रभावपूर्ण प्रदर्शन सम्भव हो,
2. तथ्य सरल तथा समझने योग्य बने,
3. समय की बचत हो सके,
4. आसानी से तथ्यों की तुलना हो सके,
5. एक ही दृष्टि में तथ्य स्पष्ट हो जाये,
6. शोध के लिये उपयोगी सिद्ध हो तथा
7. भविष्य की ओर संकेत प्रदान कर सकें।

<u>प्रतिवेदन का प्रस्तुतिकरण :-</u>

प्रत्येक सामाजिक सर्वेक्षण अथवा सामाजिक अनुसंधान में सर्वप्रथम प्राथमिक स्तर पर वैज्ञानिक पद्धति व प्रविधियों द्वारा तथ्यों को संकलित किया जाता है तत्पश्चात् उनका वर्गीकरण व सारणीयन किया जाता है। परन्तु

वर्गीकरण व सारणीयन बिना विश्लेषण व व्याख्या के निरर्थक है। विश्लेषण व व्याख्या की प्रक्रिया भी व्यर्थ चली जायेगी यदि निष्कर्षों को लिखित रूप न दिया जाये। इस दृष्टि से प्रतिवेदन किसी भी शोध कार्य का सर्वाधिक महत्वपूर्ण और अन्तिम सोपान है। अनुसंधान प्रक्रिया के प्रत्येक चरण का संयुक्त परिणाम प्रतिवेदन में निहित रहता है। प्रतिवेदन में प्रारम्भ से अन्त तक की सर्वेक्षण प्रक्रिया, शब्दों तथा धारणाओं की परिभाषा, प्रयुक्त विधियों तथा प्रणालियों का परिचय, आंकड़ों का प्रदर्शन आदि तथा सर्वेक्षण के निष्कर्ष दिये जाते है। प्रतिवेदन ही सर्वेक्षण की सफलता तथा असफलता का आधार है।

शोधकर्ता द्वारा मध्यम वर्गीय परिवारों की सामाजिक, आर्थिक तथा मनौवैज्ञानिक समस्याओं तथा उनके समाधान हेतु उनके विचार जानने की जिज्ञासा एवं इस समस्या के प्रस्तुतिकरण हेतु 'अन्वेषणात्मक पद्धति' को अपनाया गया है ताकि मौलिक निष्कर्ष तार्किक रूप में प्राप्त किये जा सके। चूंकि संकलित प्राथमिक तथा द्वितीयक तथ्यों का निर्वाचन करना शोध का वह आवश्यक तथा सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू होता है जो विश्लेषण के द्वारा परिणाम निकालने से सम्बन्ध रखता है। ऐसा करने के लिये शोधकर्ता ने साक्षात्कार अनुसूची द्वारा संकलित प्राथमिक/क्षेत्रीय आंकड़ों को व्यवस्थित करके प्रकरणतः "मास्टर शीट" निर्मित कर "सांख्यिकीय पद्धति" द्वारा प्राथमिक तथा द्वितीयक आंकड़ों का सारणीयन विश्लेषण तथा तथ्यसम्बन्धित निर्वाचन करके शोध परक वैज्ञानिक निष्कर्ष उद्घाटित किये है। अध्ययन के प्रस्तुतीकरण को सरल, सुगम, ग्राह्यय, तार्किक तथा वैज्ञानिक बनाने के लिये शोध प्रबन्ध में आंकड़ों के यथास्थान आरेखीय चित्र भी दिये गये हैं। शोधकर्ता को आशा ही नहीं बल्कि यह पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत शोध अध्ययन, "मध्यम वर्गीय परिवारों में तनाव तथा विघटन का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन" विषय-विशेषज्ञों तथा शोध अध्येताओं को तो रुचिकर लगेगा ही, साथ ही समाजशास्त्रीय सन्दर्भो में "मध्यम

वर्गीय परिवारों में तनाव व विघटन की समस्याओं" जिन्हें वे लोग वास्तव में अनुभव कर रहे हैं तथा भोग रहे हैं, उनके निराकरण समाधान के लिये सुझाये गये व्यवहारिक सुझाव उपयोगी तथा सार्थक सिद्ध तो होंगे ही, साथ ही यह शोध अध्ययन समाजशास्त्र विषय के क्षेत्र के लिये विभिन्न नवीन उपयोगी आयाम भी उदघाटित करेगा तथा मध्यम वर्गीय परिवारों की विभिन्न प्रकार की समस्याओं को सुलझाने में सहायक सिद्ध होगा।

अध्याय -3

साहित्य का पुर्नावलोकन

निःसंदेह, सामाजिक अनुसन्धान के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक शोध के प्रमुख सोपानों के अन्तर्गत "साहित्य का पुनरावलोकन" तथा पूर्व अध्ययनों की समीक्षाऐं कर ली जाय तो यह जान लेता है कि प्रस्तुत अनुसांधन कार्य अनुभविक रूप में सम्पादित किए जा चुके है, तथा कौन-कौन सी अध्ययन पद्धतियाँ व प्रविधियाँ उन में प्रयोग की गयीं, और किस अनुसंधान-अभिकल्प को अपनाया गया; साथ ही तथ्यसम्बन्धित प्रमुख निदान तथा समस्याऐं क्या-क्या रहीं है? यह निर्विवाद सत्य है कि प्रत्येक सामाजिक समस्या का देश एवं परिस्थियों से घनिष्ठ तथा प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है, अतः इस दृष्टि से भी पूर्व अध्ययनों से सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा करना अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण ही नही होता; अपितु अनिवार्य आवश्यकता होती है। परिवर्ती परिवेश में अपने अनुसंधान कार्य में क्या-क्या समस्याऐं जनित हो सकती हैं? किन पद्धतियों व प्रविधियों से अध्ययन करना उपयुक्त रहेगा? किन-किन पहलुओं, आयामों तथा कारकों का अध्ययन; पूर्व (अतीत) में हो चुका है? और किन पहलुओं का नहीं; तथा किस दृष्टिकोण से अध्ययन करना अवशेष है? अध्ययन किस भाँति (कैसे) किया जाय; कि अनुसंधान कार्य सरलता, सहजता तथा सुगमता से वस्तुनिष्ठ तथा वैज्ञानिक रूप में पुर्ण हो जाय तथा शोधकर्ता को समय,धन तथा श्रम भी कम अपव्यय करना पड़े; इत्यादि यह सब कुछ एक अध्ययनकर्ता को साहित्य के पुनरावलोकन तथा पूर्व अध्ययनों की समीक्षा कर लेने से स्पष्ट हो जाता है। इस प्रसंग में प्रो. बेसिन का कथन विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

बेसिन एफ.एच.1 (1962:42) के अनुसार, "प्रत्येक अनुसंधान कार्य में सम्बन्धित साहित्य एवं पूर्व अध्ययनों की समीक्षा"[1] अनुसंधान योजना का सर्वाधिक महत्वपूर्ण सोपान हुआ करता है क्योंकि प्रत्येक अनुसंधान कार्य, आरम्भ में अस्पष्ट होने के कारण दुरूह एवं जटिल प्रतीत होता है। सम्बन्धित साहित्य के पुनरावलोकन से अनुसंधान की जटिलता एवं अस्पष्टता दोनों ही समस्याऐं लगभग समाप्त हो जाती है। इसका कारण यह है कि साहित्य के पुनरावलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि शोध अध्ययन के लिए विश्वसनीय, तथा वस्तुनिष्ठ अध्ययन-सामग्री किस भाँति तथा कैसे प्राप्त हो सकती है? साहित्य के पुनरावलोकन तथा समीक्षा करने के कुछ अन्य प्रमुख लाभ इस प्रकार है-

1. अध्ययनकर्ता को शोध समस्या के सन्दर्भ में सामान्य ज्ञान विकसित हो जाता है।
2. अनुसंधान कार्य हेतु अनुसंधान प्रारूप एवं उपयोगी तथा प्रविधियां अनुसंधित्सु को स्पष्ट हो जाती है कि अध्ययन कैसे सम्पादित करना है।
3. साहित्य के पुनरावलोकन से अध्ययनकर्ता को अनुसंधान सम्बन्धी भ्रमात्मक तथा सन्देहात्मक स्थितियाँ सुस्पष्ट हो जाती है; सम्प्रति अनुसंधान कार्य के सम्बन्ध में अनुसंधानकर्ता का शोध स्पष्ट हो जाने की बजह से अध्ययन करने में सरलता हो जाती है। इस प्रकार साहित्य के पुनरावलोकन तथा पूर्व अध्ययनों की समीक्षा कर लेने से अध्ययनकर्ता को अनुसंधान हेतु शोध-प्रारूप, अध्ययन-पद्धतियाँ तथा प्रविधियों के ज्ञान के अतिरिक्त, दिशा बोध हो जाता है क्योंकि ऐसा करने से अनुसंधित्सु में अतिरिक्त अभिज्ञान तथा अन्तर्दृष्टि विकसित हो जाती है।

प्रोफेसर बोर्ग जी.पी. (1963:48) के शब्दों में, "सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन किसी भी अनुसंधानकर्ता को इस योग्य बना देता है कि वह पूर्व में

---

1. बेसिन, एफ.एच. (1962): व्यवहारिक विज्ञानों में साहित्य समीक्षाऐं, मैकमिलन कम्पनी (प्रा.लि.)मद्रास,पृष्ठ-40

किए हुए अनुसंधान कार्यों का पता लगा सकें, और उनका अध्ययन करके तथ्यसम्बन्धित समीक्षा कर सके ऐसा करने से अध्ययनकर्ता अपने अनुसंधान कार्य के लिए उपयुक्त उपकरणों तथा पद्धतियों इत्यादि का उचित चयन करके अतिरिक्त ज्ञानार्जन का आधार पर अनुसंधान हेतु स्पष्ट दिशा प्राप्त कर लेता है''।[1]

सर्वश्री पुरूषोत्तम (1991:110) के अनुसार ''सामान्यतः मानव-ज्ञान के तीन पक्ष-(1) ज्ञान को एकत्रित करना (2) एक दूसरे तक पहुँचाना (3) अतिरिक्त ज्ञान में वृद्धि करना, होते हैं। ये तीनों ही मूलभूत तत्व अनुसंधानों में विशेष रूप से महत्वपूर्ण होते है, जो कि वास्तविकता के समीप/निकट आने के लिए निरन्तर प्रयासरत रहते हैं। अतिरिक्त ज्ञान के अर्जन तथा विस्तृत ज्ञान-भण्डार में इनका योगदान, प्रत्येक क्षेत्र में मानव द्वारा किए गए निरन्तर प्रयासों की सफलता को सम्भव बनाता है। उसी भाँति अनुसंधान-प्रक्रिया में ''साहित्य का पुनरावलोकन'' अनुसंधान उपक्रम का एक ऐसा महत्वपूर्ण वैज्ञानिक सोपान होता है; जो कि वर्तमान के गर्त में निहित होता है अर्थात् मनुष्य अपने अतीत में संचरित एवं आलेखित ज्ञान के आधार पर अनुसंधान कार्य के माध्यम से नवीन ज्ञान का सृजन करता है।

सर्वश्री सिंह एस. पी. (1975:14) के अनुसार, किसी भी शोध-समस्या का चयन कर लेने के पश्चात, यह आवश्यक ही नहीं; अपितु शोध की अनिवार्य आवश्यकता होती है कि उस अनुसंधान-विषय से सम्बन्धित उपलब्ध साहित्य का पुरावलोकन कर; तथ्यसम्बन्धित विषयगत समीक्षाएं कर ली जांये क्योंकि ऐसा करने से-

---

1. वोर्ग, जी.वी. (1963): सामाजिक विज्ञानों के अनुसंधानों में साहित्य का सिंहावलोकन, जैन ब्रदर्स एण्ड संस पवलीसर्स एण्ड डिस्ट्री ब्यूटर्स बाम्बे, पृष्ठ-48

1. शोधकर्ता के मन पटल में अध्ययन-समस्या के सन्दर्भ में एक स्पष्ट अन्तर्दृष्टि तथा ज्ञान बोध विकसित हो जाता है।
2. शोधकर्ता को अनुसंधान कार्य हेतु उपयुक्त पद्धतियों तथा प्रविधियों का आभास तथा समुचित ज्ञान हो जाता है।
3. साहित्य की समीक्षा; अध्ययनार्थ निर्मित परिकल्पनाओं/शोध-प्रश्नों के निर्माण में सहायक होती है।
4. विभिन्न शोध-अध्येताओं द्वारा एक ही अनुसंधान कार्य को फिर से दोहराने की गलती नहीं हो पाती और अध्ययन-समस्या से सम्बन्धित उन आयामों (पहलुओं) पर, जिन पर अन्य शोध-अध्येताओं ने ध्यान नहीं दिया अथवा अछूते रह गए, या फिर अज्ञानतावश छूट गए; शोधकर्ता को उन समस्त अछूते आयामों का भी आभास हो जाता हैं।

सर्वश्री स्टॉउफर सेम्युल रिब्यू (1962:73) का कहना है कि सम्बन्धित साहित्य के गहन अध्ययन एवं उसकी समीक्षा के अभाव के अभाव में कोई भी अन्वेषण कार्य करना, "अन्धे के तीर" के तुल्य होता है। साहित्य समीक्षा के अभाव में कोई भी अनुसंधान कार्य एक कदम भी प्रगति पथ पर अग्रसर नहीं हो सकता; जब तक कि अनुसंधानकर्ता को इस बात का ज्ञान तथा जानकारी नहीं है कि प्रस्तुत अनुसंधान के क्षेत्र में किन-किन पक्षों पर कितना कार्य हो चुका है? कौन-कौन से स्रोत प्राप्त है? तब तक वह अध्ययनकर्ता न तो अध्ययन-समस्या का चयन कर सकता है, और न ही उसकी रूपरेखा तैयार कर, अनुसंधान कार्य को गति प्रदान कर सकता है। इसका मौलिक कारण यह है कि प्रत्येक अनुसंधान कार्य का प्रमुख उद्देश्य; किसी समस्या विशेष पर नवीन दृष्टिकोण से चिन्तन तथा विचार करके उसमें नवीनता लाना अथवा समस्या की नवीन ढंग से तार्किक व्याख्या प्रस्तुत करना होता है। उपरोक्त समस्त प्रतिनिधि बिन्दुओं को दृष्टिपथ में

रखकर शोधकर्ता ने अपने अनुसंधान कार्य के सुचारू संचालन तथा सफलता हेतु अध्ययन करने से पूर्व सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन तथा पूर्व अध्ययनों की समीक्षा करने का प्रयास किया है ताकि प्रस्तुत अध्ययन को उचित दिशा एवं वैज्ञानिक स्वरूप प्राप्त हो सके''।[1]

भारत में क्रेशर उद्योग के सम्बन्ध में अनुसंधान कार्य अपेक्षाकृत अत्यन्त ही अल्प हुऐ है फिर भी तत्सम्बन्धित शोध अध्ययनों को निम्नानुसार प्रस्तुत किया गया है :-

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर :-

एल० एल० गुप्ता एवं शर्मा डी०डी० (2001:105) :-

''बेढंग तरीके से बसी हुई, अव्यवस्थित रूप से विकसित और सामान्यतः उपेक्षित क्षेत्र जो कि लोगों द्वारा घना बसा हुआ होता है तथा जिसमें बिना मरम्मत एवं उपेक्षित मकानों की भीड़-भाड़ होती है, संचार के साधन अपर्याप्त होते हैं, सफाई व्यवस्था के प्रति उदासीनता पायी जाती है, भौतिक एवं सामाजिक स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये अनावश्यक सुविधाओं की पूर्ति कम से कम होती है, व्यक्ति एवं परिवार की प्रमुख सामाजिक समस्याओं से निपटने के लिये सामाजिक सेवाओं एवं कल्याण संस्थानों की सामान्यतः अनुपस्थिति होती है। इनमें निम्न स्तर का संवानिस, सी0वी0 एण्ड राव, एम0एन0, (1961): ने खदानों में कार्यरत श्रमिकें की दुर्घटना के कारकों पर प्रकाश डालते हुए उल्लेख किया है कि ''दुर्घटनाओं के अनके कारक होते है जिन्हें दो समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है - (1) मानवीय कारक : अधिकांश लोग पर्यावरण कारकों की

1. सर्वश्री स्टॉउफर सेम्युल रिव्यू (1962:73): ए मैजर स्टैप आफ इन्वेस्टीगेशन इन सोसल साइन्सेज,अमेरिकन सोशियोलोजीकल रिव्यू अंक 23, पृष्ठ-73

तुलना में मानवीय कारकों को 85 प्रतिशत महत्वपूर्ण मानते है तथा अन्य कारक जिनसे 15 प्रतिशत दुर्घटनायें होती है।''[1]

गुप्ता, एम0एन0 (1961) दुर्घटनायें के अध्ययन में पाया कि,''अधिकांश उद्योगों में श्रमिकों की दुर्घटनायें सामान्य घटना होती है। यथार्थ में कुछ उद्योग तो दुर्घटना के लिए सहज जाने जाते हैं। उदाहरण के लिए कोयला खान तथा अन्य खाने जो उद्योग चलाती है। जिनकी क्षतिपूर्ति की जाती है। 91.86 प्रतिशत इन दुर्घटनाओं से अस्थाई विकलांगता, 5.86 प्रतिशत स्थाई विकलांगता तथा 2.28 प्रतिशत श्रमिकों की इन दुर्घटनाओं के परिणाम स्वरूप मृत्यु हो जाती है। इस प्रकार योगिक रूप से विधि उद्योगों में से सर्वाधिक दुर्घटनाऐं खाद्यानों में होती है जो कि 49.39 प्रतिशत से 58.00 प्रतिशत है।[2]

विश्व स्वास्थ्य संगठन (1962) के अध्ययन : में बताया कि, ''यदि एससेस्टास (एक व्यापारिक नाम जो विशेष प्रकार के फिव्रोस पदार्थ) को दिया गया है। ये सिलीकेट्स के विविध मिश्रण होता है। सिक्का जो मैगनीशियम लोहा, कैल्शियम, सौडियम एवं अलमोनिय का मिश्रण होता है। एसवेस्टास का प्रयोग एवेस्ट सीमेन्ट के निर्माण में अग्नि समन टेक्सायल, छत सुरक्षा तथा गासकेट्स आदि के किया जाता है। यह आन्ध्र प्रदेश (कुडप्पा), बिहार, कर्नाटक तथा राजस्थान की खदानों में पाया जाता है परन्तु अधिकांश इसका स्वदेश में रूस, कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा दक्षिणी अफ्रीका से किया जाता है।[3]

गार्वमेन्ट ऑफ इण्डिया (1965) : व्यवसायिक स्वास्थ्य के मार्गदर्शन में बताया कि ''राष्ट्रीय कानून तथा कारखाना अधिनियम 1976, खान अधिनियम, 1952 के अनुसार व्यवसायिक रोगों की सूचना जारी की जानी चाहिए क्योंकि

---

1. सी.वी. एण्ड राव, एम.एन.(1961)'स्वास्थ्य हिन्द' 5,81,सी.एच.ई.वी. न्यू दिल्ली।
2. गुप्ता, एम.एन, (1961) स्वास्थ्य हिन्दू, 5,74, केन्द्रीय स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो न्यू दिल्ली।
3. डब्लू.एच.ओ. (1962) हेल्थ हेजार्डस आफ द हूमन इन वायरनमेंट, जिनेवा.

कारखाना अधिनियम में 22 व्यवसायिक रोगों का उल्लेख किया गया है तथा खान अधिनियम में 3 रोगों का। इन रोगों का अन्तर राष्ट्रीय स्तर पर श्रमिक क्षतिपूर्ति हेतु चयन किया गया है। इन सबका मुख्य उद्देश्य इन अधिनियमों द्वारा श्रमिकों की रोगों से बचाव तथा सुरक्षा को व्यवहार में लाना है, साथ ही कार्य दशाओं तथा अन्य परिस्थितियों का सर्वेक्षण करना जिनके कारण व्यवसायिक रोग होते हैं।"[1]

थकर, पी0वी0 (1967): ने जन स्वास्थ्य समिति के 12 वी वार्षिक सम्मेलन पूना में बताया कि बिहार की मायका खान में 329 खनन श्रमिकों के स्वास्थ्य जाँच में पाया गया कि 34.1 प्रतिशत श्रमिक सिल्कासिस रोग से पीड़ित थे। सेरामिक एवं मुर्गी पालन उद्योग में सिल्कोसिस रोग से पीड़ितों की संख्या 15.7 प्रतिशत पायी गई।[2]

आइ0एल0ओ0 (1967) : अपनी दुर्घटना बचाव के अध्ययन में पाया कि मानवीय कारकों में मानव भौतिक : कभी-कभी निष्पादन अक्षमता जिसमें श्रमिक उद्योग कार्य को भली-भांति नहीं कर पाता, दृष्टि की दोषपूर्णता तथा अनुउपर्युक्त श्रवण शक्ति के कारण दुर्घटना हो जाती है। दूसरा कारण जैवकीयः जिसमें अनेक शोध अध्ययनों से ज्ञात होता है। कि महिलाऐं पुरूषों की तुलना में कम दुर्घटना ग्रस्त होती है। आयु की दृष्टि से युवक, प्रोढ़ों की तुलना में अधिक दुर्घटना ग्रस्त होते हैं। समय के सन्दर्भ में, कार्य प्रारम्भ के समय कम तथा कार्य समाप्त की अवधि में अधिक दुर्घटनायें होती है। अनुभव के प्रसग में 50 प्रतिशत श्रमिक अपने प्रथम 6 माह के अनुभव में दुर्घटनाग्रस्ता होती है। 23 प्रतिशत अगले 6 माह में तथा मात्र 3 प्रतिशत अन्तिम कार्य काल में कार्य समय जब श्रमिकों के कार्य समय में वृद्धि कर दी जाती है तो अधिक दुर्घटनायें होती हैं। मनोवैज्ञानिक कारकों में दुर्घटना के

---

1. गार्वमेन्ट ऑफ इण्डिया (1965) : व्यवसायिक स्वास्थ्य मार्गदर्शिका
2. थकर, पी.वी. (1967): जन स्वास्थ्य समिति पूना.

लिए लापरवाही, अज्ञानता ध्यानहीनता, कार्य कुशलता में अधिक विश्वास, आदि भौतिक कारकों से अधिक उत्तरदाई होते हैं।"[1]

सेन, जे0आर0 (1968) ने अपने निबन्ध में खनन में काम करने वाले श्रमिकों के स्वास्थ्य बचाव पर प्रकाश डालते हुए अभिव्यक्ति किया है कि सिलकोसिस का कोई प्रभावी उपचार नहीं है। केवल एक ही मार्ग है सिलकोसिस रोग को नियंत्रण करने का (अ) धूल को वृहत पैमाने पर नियंत्रण किया जाय जैसे- सबस्टीटयूशन, पूर्ण नियंत्रण, पृथक्कीकरण, हायड्रोव्लासटिंग, घर का सही ढंग से रख रखाव, वैयक्तिक स्तर पर सुरक्षात्मक कवर का तथा नियमित भौतिक जांच पड़ ताल।"[2]

बेनचू, एन0एन0 (1969) : खद्यानों में श्रमिक अनुपस्थिति के शोध अध्ययन में पाया कि रोग ग्रस्तता में श्रमिको की अनुपस्थिति एक महत्वपूर्ण स्वास्थ्य समस्या है। यह गम्भीर रूप से उत्पादन को प्रभावित करती है प्रत्यक्ष एवं अप्रयत्क्ष रूप से जैसा कि उत्पादन प्रौद्योगिकी कुछ अधिक जटिल हो जाती है। यद्यपि श्रमिकों की कार्य पर अनुपस्थिति उद्योग में लाभदायक संकेत भी होते हैं विशेषकर श्रमिक स्वास्थ्य की समीक्षा के सन्दर्भ में ताकि उनकी शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक कुशलक्षमता बनी रहे।"[3]

बनर्जी, वी0एण्ड चक्रवर्ती, एस (1969) : ने खदानों में कार्यरत श्रमिकों में अनुपस्थिति के अध्ययन में रूग्णता अनुपस्थिति के निम्न कारणों की पहिचान की। रोग के कारण, खदानों के श्रमिक पूर्णरूप से कार्य पर अनुपस्थिति नहीं रहते अपितु (अ) आर्थिक कारक : यदि श्रमिक रोग के कारण अवकाश ले सकता है तो बिना कार्य के वेतन की प्रेरणा के कारण अनुपस्थिति करता है फिर चाहे वह अस्वस्थ हो या न हो यह उसकी मर्जी 1 (ब) सामाजिक कारक : कुछ सामाजिक

---

1. आइ.एल.ओ. (1967) : ऐक्सीडेन्ट प्रीवेन्सन, ए वर्क्स एजूकेशन मेनूआल जिनेवा.
2. सेन, जे.आर. (1968) : भारतीय उद्योग चिकित्सा जर्नल, 14, 186.
3. बेनचू, एन0एन0 (1969) : 'स्वास्थ्य हिन्दू' 13,90

करके रोग दिखाकर भारत में श्रमिक कार्य पर अनुपस्थिति रहता है जिसमें, विवादों में सहभागिता, आवास निर्माण, त्योहार मनाने, फसल बुवाई मुख्य है।''[1]

घोस, पी0के0 (1969) : भारतीय उद्योग मेडीकल जर्नल के पृष्ठ 15 कालम-1 में लिखा है कि, ''वर्तमान वर्षो में यह भ्रांति बनी हुयी है कि खनन में कार्यरत कामदारों में सिलकोसिस टी0वी0 तथा यथार्थ में टी0वी0 रोग है अथवा पूर्ण रूपेण सिलकोसिस है। ऐसा इसलिए क्योंकि सिलकोसिस रोगी को बलगम में टी0वी0 रोग के कीटाणु नहीं पाये जाते, द्वितीय जो बच्चे या स्त्रियाँ खदानों में कार्य करती है उनमें टी0वी0 नहीं पायी जाती। मृत्यु उपरान्त सिलकोसिस टी0वी0 के रोगियों की पोस्ट मार्टम रिपोर्ट में उन्हें टी0वी0 नहीं पायी गई तथा उसके रोग के पूर्ण रूपेण सिलकोसिस ही माना गया। रेडियोलॉजीकल रिपोर्ट में गलती से सिलकोसिस रोग को कभी-कभी टी0वी0 रिपोर्ट कर दिया जाता है वह भी फैफड़ों की क्योंकि धूल फेफड़ों में जा जमा होती है।''[2]

मेनडोनका, लोवो (1970) : द एन्टीसेप्टिक नामक पत्रिका में औद्योगिक केन्सर के नियंत्रण के आठ उपायों की व्याख्या की है- (1) औद्योगिक कारसीनोजेन्स की समाप्ति या उस पर नियंत्रण तथा उत्पादन की आन्तरिक व्यवस्था, (2) श्रमिकों के चिकित्सकीय परीक्षण, (3) उद्योगों के निरीक्षण, (4) घटना की सूचनाकरण, (5) उद्योग का परिमिटीकरण, (6) वैयक्तिक स्वच्छता के उपाय, (7) प्रबन्धन व श्रमिकों को स्वास्थ्य शिक्षा तथा समय-समय पर अनुसंधान करना।''[3]

सम्पादकीय (1970) : विट्रिस मेडीकल जर्नल में उद्योग जिनसे धूल उड़ती है कि नियंत्रण के उपायों पर प्रकाश डाला कि, धूल को दवाने हेतु पानी की प्रक्रिया

---

1. बनर्जी, वी.एण्ड चक्रवर्ती, एस (1969) : इन्डियन जर्नल आफ इन्डस्ट्रीयल हेल्थ, 15,85
2. घोस, पी0के0 (1969) : भारतीय उद्योग
3. मेनडोनका, लोवो (1970) : द एन्टीसेप्टिक नामक पत्रिका, दिल्ली ,67,455.

जिसमें अपराद्स तथा एग्झोस्ट आदि होते हैं। इसके अलावा वैयक्तिक बचाव के कवच जैसे- मास्ट अथवा सांस लेने हेतु यांत्रिक फिल्टर आक्सीजन के साथ प्रयोग में लाये जा सकते है, अति अनिवार्य होते है (3) चिकित्सकीय नियंत्रण जिसमें समय-समय पर शारीरिक परीक्षण तथा श्रमिकों की स्वास्थ्य जांच आवश्यक है तथा (4) वेगैस नियंत्रण जिसके द्वारा पानी के माध्यम से 20 प्रतिशत मोस्टर बनाये रखना तथा 2 प्रतिश प्रोपायनिक ऐसिड का फुव्वार करना विशेषकर वेगैस के साथ क्योंकि यह उत्पादन के प्रयोग में सुरक्षित होती है।''

वायट, जे0पी0 (1971) : अमेरिकन जर्नल के निबन्ध में एन्थरा कोसिस (कोयला की धूल से होने वाला रोग) बताया कि प्रारम्भ में इसे फेफड़े का रोग माना जाता था। परन्तु आधुनिक अनुसंधान से पता चला कि इसके उद्भव के दो घटक होते हैं प्रथम जिसमें श्वसन का प्रथम दृष्टि में रूकावट आती है उसे निमोकोनीसिस कहते है। इस घटक को खदानों लगभग 12 वर्ष तक लगातार कार्य करने से पूरा होता है। द्वितीय घटक जिसमें एन्थरा कोशिश में वृद्धि होती है जिसके कारण श्वसन तंत्र में पंगुता आ जाती है और श्रमिक की अपरिपक्तव आयु में मृत्यु हो जाती है। यदि एक बार श्रमिक कोयला खदानों में प्रथक घटक कार्य कर लेता है तो उसमें द्वितीय घटक बिना खदान में कार्य किए भी विकसित हो जाता है। संक्रमण विज्ञान के अनुसार खदानों में कार्यरत श्रमिकों में सामान्य जनसंख्या से दो गुनी मृत्यु दर पाई जाती है। यही कारण है कि न्यूमोकोनीओसिस रोग को नोटीफाइट रोग के रूप में घोषित किया गया है खान अधिनियम 1952 में साथी क्षतिपूर्ति अधिनियम 1959 में ताकि श्रमिक की मृत्यु के बाद क्षतिपूर्ति की जा सके।''[1]

गुप्ता, ए0के0 (1995:15) : स्टोन क्रेशर का श्रमिकों पर प्रभाव के लघु शोध पाया कि क्रेशर उद्योग द्वारा जनित प्रदूषण से श्रमिकों पर पड़ने वाले प्रभाव के

---

1. वायट, जे0पी0 (1971) : अमेरिकन जर्नल, पैथोलोजी, 64, 197.

उल्लेख में कहा गया है कि स्टोन क्रेशर पर कार्यरत श्रमिकों पर बुरा प्रभाव पड़ता है क्योंकि वहां तो वहीं कार्य करते है जिसके कारण उन्हें सबसे ज्यादा धूल का सामना करना पड़ता है तथा प्रदूषण से लड़ना है जिसकी बजय से उनको बीमारियाँ हो जाती है श्रमिक परेशान रहते हैं लेकिन रोजगार के लालच में तथा पेट की भूख के कारण उनको मजबूर होकर कार्य करना पड़ता है। जो श्रमिक पहाड़ों पर कार्य करते हैं उन्हें तो अपनी जान पर खेल कर कार्य करना पड़ता है क्योंकि वहाँ ब्लास्टिंग होती है और उनसे छिटकने वाले पत्थरों के टुकड़े बहुत ही जोखिम भरे होते है।[1]

डॉ0 अनवर इकवाल कुरेशी (1996:37) : कोयला खान श्रमिक धनबाद अपने अध्ययन भारतीय श्रमिकों का जीवन स्तर के अध्ययन में पाया कि, "भारत में केवल 39 प्रतिशत लोगों को पूर्ण भोजन मिलता है और शेष व्यक्ति आधे भूखे रहते हैं। जो व्यक्ति पेट भर भोजन करते हैं उनके सम्बन्ध में ऐसा कहा जाता है कि उनके भोजन में पौष्टिक पदार्थो का अंश बहुत कम होता है। फलतः अधिकांश देशवासी मैले कुचैले वस्त्रों में देखे जाते हैं। अपने आपका 7 प्रतिशत भाग वस्त्रों पर व्यय करते हैं। अधिकांश श्रमिक साधारण धोती, अथवा नेकर का प्रयोग करते है। औद्योगिक श्रमिकों की आवासीय दशा भी अत्यन्त दयनीय है। ने इतनी गन्दी होती है उनसे गुजरने में भी घृणा अनुभव होती है।"[2]

प्रो0 सिंह, एस0डी0 (1997:21) : खदानों के श्रमिकों की समस्याऐं के अध्ययन में पाया कि, "ये श्रमिक कतिपय सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं के शिकार हैं जिसमें (अ) मजदूरी सम्बन्धी समस्याऐं जैसे कम मजदूरी, अंशों भुगतान, स्त्री पुरूष की मजदूरी में भेद तथा कार्यकुशलता तथा अकार्य कुलशता का कोई ध्यान

---

1. गुप्ता, ए0के0 (1995:15) : 'स्टोन क्रेशर का श्रमिकों पर प्रभाव', एक लघु शोध महोबा, यू.पी. कबरई के विशेष सन्दर्भ में।
2. डॉ0 अनवर इकवाल कुरेशी (1996:37) : 'कोयला खान श्रमिक धनवाद' दरभंगा, पवलीकेशन, दरभंगा बिहार।

रखना (ब) संघवाद सम्बन्धी समस्याऐं असंगठित क्षेत्र में श्रमिक यत्र-तत्र बिखरे होने के कारण अपनी कठिनाइयां दूर कराने में सफल नहीं हुए और न इनके लिए सुधार ही किया गया है, (स) रोजगार सम्बन्धी समस्याऐं- जनसंख्या वृद्धि, ग्राम उद्योग की उपेक्षा, संगठित क्षेत्र में रोजगार का अभाव के कारण बेकारी, अर्द्ध बेकारी, छिपी हुई बेकारी और रोजगार ये सब औद्योगिक समस्याऐं है तथा (द) सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी समस्याऐं जिनसे श्रमिकों के बीमे, सामाजिक सहायता तथा वाणिज्य बीमों का अभाव शामिल है।''[1]

सुभाषचन्द्र, शुक्ल (2000:77) : महोबा में क्रेशर उद्योग के आर्थिक तात्पर्य का उल्लेख करते हुए कहते है कि ''क्रेशर उद्योग मानव के विकास में सहायक है क्योंकि उद्योग लगने से आर्थिक विकास तो होता है साथ ही सरकार की आय में वृद्धि होती है। खनिज विभाग को कवरई उद्योग से 3.50 करोड़ रूपया मासिक जमा होता है। इसके अलावा हजारों लोगों को रोजगार प्राप्त होता है।''[2]

त्रिपाठी, सतीश कुमार (2000:45) : महोबा जनपद में स्टोन क्रेशर उद्योग के सिहाव लोकन में स्ट्रोन उद्योग से होने वाले प्रदूषण के नगरी वातावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का चित्रण निम्न शब्दों में किया है- ''शहर में लोगों के वातावरण पर प्रभाव पड़ता है और उनकी शान शौकत धूमिल होती है। लोगों को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है तथा सम्पूर्ण नगर में धूल का वातावरण बना रहता है। पर्यावरण प्रदूषण जो केवल धूल के कारण होता है उससे नगर के प्राकृतिक सौन्दर्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। रात्रि के समय जब यहाँ विद्युत प्रकाश होता है तब सम्पूर्ण नगर में क्रेशर उद्योग कार्य करना प्रारम्भ करते हैं तो यंत्रों से होने

1. प्रो. सिंह, एस.डी. (1997:21) : 'खदानों के श्रमिकों की समस्याऐं' सरस्वती पवलीकेशन शिकोहाबाद,मैनपुरी,यूपी.
2. सुभाषचन्द्र, शुक्ल (2000:77) : 'महोबा में क्रेशर उद्योग के आर्थिक तात्पर्य' सुभाषप्रेस, महोबा।

वाली लगभग 100 से 120 डी0वी0 शोर शयन बाधा पहुँचाता है तो शहर में प्रातः तक धूल की चादर बिछ जाती है।''[1]

प्रो0 वर्मा, एस0पी0 (2000:71) : भूगर्भ सर्वे रिपोर्ट आफ यू0पी0 बुन्देलखण्ड के प्रतिवेदन में बताया कि जो श्रमिक महोबा, ललितपुर तथा झांसी की विभिन्न खदानों में कार्य करते थे वे रू. 2000 से लेकर रू. 10000/- के ऋणदाता थे। ये ऋण उन्होंने रू. 5 प्रतिशत प्रतिमाह की ब्याज पर क्रेशर मिल-मालिकों से लड़कियों की शादी करने हेतु लिया था। उनका शैक्षिक स्तर परिवार के आकार बड़े तथा उनके बच्चों में कुपोषण तथा खांसी से सवंमित थे। वे खदानों के नीचे गड्डों में तिरपाल डालकर रहते थे। ने 10 से 12 घण्टे (7 बजे शाम से 6 बजे प्रातः) कार्य करते थे। पुरूषों का रू0 50/- तथा स्त्रियों का रू0 40/- दैनिक मजदूरी दी जाती थी तथा बच्चे मुफ्त में कार्य करते और पढ़ने नहीं जाते थे श्रमिकों में मद्यपान का चलन था।''

के0 पार्क0(2002:40) पर्यावरण स्वास्थ्य के महत्व पर प्रकाश डालते हुए उल्लेख किया है कि भारत में अधिकांश बीमारियों का कारण खराब पर्यावरण स्वच्छता है अर्थात अस्वच्छ जल, दूषित मिट्टी, मानव मल और कचरे को ठीक से न समेटना या फैकना, खराब मकान, कीट और कृन्तक। अनेक शहरों में वायु प्रदूषण चिन्ताजनक है। वास्तव में ऊँची मृत्युदर, शिशु मृत्युदर, रोजदर और स्वास्थ्य के निम्न स्तर का बड़ा कारण दोषपूर्ण पर्यावरण स्वच्छता है। अतः व्यक्ति और समुदाय के स्वास्थ्य में सुधार निर्णायक घटक है। चूंकि भारत की जनसंख्या का 74 प्रतिशत ग्रामों में निवास करता है अतः ग्रामीण क्षेत्रों की

1. त्रिपाठी, सतीश कुमार (2000:45) : महोबा जनपद में स्टोन क्रेशर उद्योग और वर्यावरण प्रदूषण, सिहाव लोकन, सुभाष प्रेस, महोबा।

स्वच्छता एक समस्या है। किसी भी स्वास्थ योजना को नियंत्रित करना है जो स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है।''[1]

जे0 ई0 पार्क (2005: 35) : अपनी टेक्स बुक प्रिविन्टिस सोसल मेडीसिन में औद्योगीकरण कारण होने वाली निम्न स्वास्थ्य समस्या का उल्लेख में बताया कि समुदाय में फैक्टरियों और उद्योगों का पनपना लोगों के स्वास्थ्य पर बिना प्रतिकूल प्रभाव के नहीं है। मुख्य समस्याऐं है -

(1) वायु प्रदूषण : सब औद्योगिक क्षेत्रों में यह महत्वपूर्ण समस्या है। फैक्टरियों से विशैला धुआं, धूल, ध्वनि तथा धूल निकल कर वातावारण में फैलती हैं। चिरकारी श्वसनी शोध से रोग और फुफ्फुस केन्सन वायु प्रदूषण के कारण ही होते हैं। इन खतरों को समाप्त करने के लिए कम से कम आंशिक रूप से ही सही, उचित नगर नियोजन और उद्योगों को सही स्थान पर लगाना आश्वयक है।

(2) जल प्रदूषण : यह नदी नालों में उद्योग के गन्दे पानी के छोड़ने से होता है। उद्योगों से निकले गन्दे जल में स्वास्थ्य के लिए हानिकारक अम्ल क्षार और अनेक विषैले पदार्थ होते हैं। केवल मानव स्वास्थ्य ही नहीं वरन् जलजीवों को भी जल प्रदूषण से खतरा है।

(3) मिट्टी प्रदूषण : समुचित योजना अभाव में इसकी भी सम्भावना है।

(4) आवास गृहों की कमी : औद्योगिक क्षेत्रों में आवास ग्रहों की कमी सर्व विदित है। इससे औद्योगिक क्षेत्रों में मालिन बस्तियों की बाड़ आ जाती है।

(5) संक्रामक रोग यक्ष्मा, यौन रोग और जल वाहित संक्रमण क्षेत्रों में अधिक होते है

(6) सामाजिक समस्याऐं : मद्यपान अपराध, हिंसा, वैश्यावृत्ति और बाल आपराध सब औद्योगिक क्षेत्रों में होने वाली सामान्य सामाजिक समस्याऐं है।''[1]

---

1. के. पार्क.(2002:40): सामुदायिक स्वास्थ्य विज्ञान (परिचारिकाओं के लिए) सूर्याआफसेट, नागपुर।

<u>विश्व स्वास्थ्य संगठन (2007) :</u> कल कारखानों में काम करने वाले बहुत से श्रमिक काम के दौरान खतरनाक पदार्थों के सम्पर्क में आने से फैफड़े और मूत्राशय केन्सर के शिकार होते हैं। हर वर्ष कम से कम दो लाख लोगों की कार्य स्थल पर होने वाले केन्सर से असमय मौत हो जाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की ताजा रिपोर्ट के अनुसार कार्य स्थलों से खतरनाक पदार्थों को हटाकर केन्सर से होने वाली इन मौतों को रोका जा सकता है। डब्लू0एच0ओ0 द्वारा इस सम्बन्ध में किए गये अध्ययन से बात सामने आई है कि दुनिया भर में हर साल करीबन साढे बारह करोड़ लोग कार्य स्थल पर काम के दौरान एस्वेस्टास के सम्पर्क में आते हैं और हर साल कम से कम 90 हजार लोग एस्वेसटास के कारण होने वाली बीमारियों से मर जाते हैं। हजारों लोग वेजीन के सम्पर्क के कारण होने वाली बीमारियों से मर जाते हैं यह एक कार्बन घोल है और रसायनिक और जवाहरात उद्योग के श्रमिक अक्सर इस्तेमाल करते है। डब्लू0एच0ओ0 की जन स्वास्थ्य एवं पर्यावरण निदेशक मारियानियग का कहना है कि एस्वेसटास, वेंजीन और केन्सर फैलाने वाले अन्य पदार्थों- सिलकासिस आदि पदार्थों को इस्तेमाल करते समय ऐसे तरीके अपनाने चाहिए जिससे कामगारों पर इनके दुष्परिणामों को कम किया जा सके। यह त्रासद स्थिति इसलिए आयी क्योंकि 20-30 साल पहले कैन्सर फैलाने वाले पदार्थों का बहुत अधिक प्रयोग किया जा रहा है।[2]

♣♣♣

---

1. जे0 ई0 पार्क (2005: 35) : प्रिविन्टिस सोसल मेडीसिन, 20 वां संस्करण मैसर्स बनारसीदास पबलीसर,1167 प्रेमनगर रोड जबलपुर, 482001.
2. विश्व स्वास्थ्य संगठन (2007) : पर्यावरण प्रदूषण प्रतिवेदन, वर्ष-2007, जनेवा.

अध्याय - 4

जिला झाँसी एवं ललितपुर की सामाजिक स्थिति

भौतिक संरचना

जनपद की स्थिति एवं भौगोलिक परिचय -

झाँसी जनपद उत्तर प्रदेश की दक्षिणी पश्चिमी सीमा पर 25°.30" और 24°.57" उत्तरी अक्षांश एवं 78°.40" और 79°.25" देशान्तर के मध्य स्थित है। इसके उत्तर में जिला जालौन पूर्वी सीमा पर हमीरपुर व महोबा जनपद दक्षिण में ललितपुर जनपद तथा सम्पूर्ण पश्चिमी-भाग और दक्षिणी का कुछ भाग मध्य प्रदेश से घिरा हुआ है।

जनपद में 760 आबाद ग्राम, 440 ग्राम पंचायतें, 65 न्याय पंचायतें, 6 नगरपालिकायें, 7 नगर पंचायतें, 2 छावनी क्षेत्र तथा 1 नोटीफाइड एरिया है। प्रशासनिक दृष्टिकोण से झांसी जनपद 4 तहसीलों क्रमशः झांसी, मोंठ, मऊरानीपुर एवं गरौठा विभाजित है। विकास की दृष्टि से जनपदां 8 विकास खण्डों में विभक्त किया गया है। प्रत्येक तहसीलों में दो-दो विकास खण्ड है। झांसी तहसील में बबीना, बड़ागाँव, मऊरानीपुर तहसील में बंगरा, मऊरानीपुर, गरौठा तहसील में बामौर, गुरसरांय तथा मोंठ तहसील में चिरगांव, मोंठ विकास खण्ड है।

भौगोलिक परिचय -जनपद झाँसी का कुछ भौगोलिक क्षेत्रफल 5024 वर्ग किमी है। जिसे दो पृथक-पृथक भौतिक इकाईयों में बाँटा जा सकता है। उत्तर में निचला स्तर एवं उपजाऊ भूमि का भूभाग और दक्षिण में पठारी भूभाग। उत्तरी भूभाग की अधिकांश भूमि समतल मैदानी है, जिसमें कहीं-कहीं छोटी-छोटी पहाड़ियाँ

फैली है। इस क्षेत्र मे झासी, मौठ गरौठा तथा मऊरानीपुर तहसील का उत्तरी भाग आता है । इस क्षेत्र की प्रमुख नदियाँ पतराई तथा छेद्र है जो अपनी सहायक नदियों के साथ मऊरानीपुर तथा गरौठा तहसीलो की भूमि सिचाई करती हुई धसान नदी मे मिल जाती है । इस क्षेत्र मे मात्र काबर एव पडुवा किस्म की मिट्टी पायी जाती है । जो कि कृषि की दृष्टि से उपजाऊ क्षेत्र है । मोठ तहसीलो मे कई छोटी-छोटी धारायें बेतवा नदी में मिलती है । मोंठ एवं गरौठा तहसीलों में फैली छिटकी पहाड़ियों के अलावा दो प्रमुख पर्वत श्रृखलाये है, इसमे से एक श्रृखला बरुआसागर के पास से शुरू होकर झासी-मोठ तहसीलो से होती हुई उत्तर पूर्व की ओर जाती है तथा दूसरी मऊरानीपुर तहसील के बिल्कुल दक्षिण मे स्थित कटेरा ग्राम से प्रारम्भ होकर कचनेव, मगरवारा झीलो से होती हुई उत्तर की ओर जाती है । इस भाग की समुद्र तल से ऊँचाई गढमऊ मे 677 फीट, मोठ मे 575 फीट और पूछ मे 540 फीट है । भूभाग के उत्तरी भाग मे बेतवा नदी के किनारे की भूमि टूटी चट्टानो से युक्त है, जिसमे खेती करना सभव नही हो पाता । बेतवा धसान नदियो के सगम के कारण भारी मात्रा मे कटाव हुआ है । भूभाग की सामान्य ढलान उत्तर-पूर्व की ओर है । बेतवा नदी का पूर्वी भाग उसके पश्चिमी भूभाग की अपेक्षा नीचा है ।

दक्षिणी भूभाग मे झासी और मऊरानीपुर का दक्षिणी भाग सम्मिलित है, जिसमे उपलब्ध चट्टानी पहाड़ियाँ अपने आप मे विविधता उत्पन्न करती है । इन पहाड़ियो का झुकाव उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर है । पहाड़ियो पर कोई वनस्पति आदि नही उगती है । उत्तर भूभाग की मिट्टी चिकनी काली है जिसमे पानी सूखने के पश्चात् दरारे पड़ जाती है । दक्षिणी भू-भाग मे मिट्टी मोटी किस्म की हैं, जो प्रायः रंग में लाल और कम उपजाऊ हैं ।

जनपद झाँसी में खनिज संपदा के रूप में ग्रेनाइट, पायरोफलाइट एवं डायस्फोर नदियों के बेसिन में बहुत अच्छी बालू प्राप्त होती हैं, जो कि काफी दूर तक भेजी जाती है। विशेष रूप से पायी जाती है।

जनपद मुख्यतः तीन नदियाँ बेतवा, धसान और पहूज बहती है, जिनका बहाव पूर्वोत्तर की ओर है। बेतवा जनपद की सबसे लम्बी नदी है तथा राजघाट माताटीला पारीक्षा होते हुए जनपद जालौन में प्रवेश करती है। पहूज नदी विकास खण्ड बबीना के मध्य प्रदेश के साथ सीमा बनाती है, तथा जनपद के पश्चिमी भाग में बहती हुई मध्य प्रदेश में प्रवेश करती है। धसान नदी जनपद झाँसी एवं हमीरपुर के मध्य सीमा निर्धारित करती है। बेतवा नदी पर तीन बांध हैं। पारीछा सिंचाई बांध हैं, जिससे पारीक्षा एवं गुरसरांय नहरें निकाली गई है। दूसरा बांध सुकवां-ढुकवां है। यह पारीक्षा की फीडिंग रिजर्वायिर है। बेतवा नदी पर सबसे बड़ा बांध माताटीला है जो इस समय ललितपुर जनपद में स्थित है। धसान नदी पर पहाड़ी बांध, मऊरानीपुर-नौगांव सड़क पर स्थित है। लहचूरा बांध, जिससे धसान नहर निकली है। परस्पर नदी पर कमला सागर बांध, जिससे रानीपुर नहर निकाली गई है।

जनपद की मिट्टी मुख्यतः लाल व काली का मिश्रण है जिसे मार, कांवर पडुवा एवं कांवर के नाम से जाना जाता है। जनपद के प्रथम खण्ड जिसमें विकास खण्ड चिरगांव, मोंठ, बामौर एवं मऊरानीपुर हैं, 50 प्रतिशत भाग में मार30 प्रतिशत भाग से कांवर एवं शेष 20 प्रतिशत में पडुवा मिट्टी पायी जाती है। पडुवा मिट्टी धसान, बेतवा नदी के कछार में पायी जाती है। राकर मिट्टी कड़ी होने के कारण कम उपजाऊ है। पडुवां मिट्टी उपजाऊ तो है लेकिन बिना खाद एवं सिंचाई के अधिक प्रकार की फसलें नहीं उगाई जा सकती है। राकर मिट्टी पहाड़ी ढलान पर खारों में पाई जाती है जो कि कमजोर किस्म की मिट्टी होती है और

लगातार खेती की जाये तो यह अनुपयुक्त है। जनपद के काफी हिस्से में हल्की मिट्टी और सिंचाई सुविधाओं की कमी के कारण उन पर अच्छी खेती नहीं हो पाती है।

जनपद झांसी के भूमि पथरीली और कम गहराई वाली है। यहाँ गर्मी में बहुत अधिक गर्मी और वर्षा ऋतु में कम वर्षा होती है। थोड़े समय के लिये अधिक जाड़ा पड़ता है जो वनों के विस्तार के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

धसान नदी के किनारे सागरै वृक्ष पाये जाते हैं। महुवा इस जनपद के वनों में काफी पाया जाता है। वनों की क्षति रोकने के लिए शासन द्वारा आम, नीम, पीपल, बरगद, तथा साल के वृक्षों को काटने पर रोक लगा दी गई है। यहाँ के पठारी ढलानों पर बांस होता है। जनपद के 327.7367 वर्ग किमी. क्षेत्रफल में वन हैं जो कि कुल प्रतिवेदन क्षेत्रफल का 6.5 प्रतिशत है। वन विभाग के अंतर्गत 257.9624 वर्ग किमी. क्षेत्रफल है। यहाँ के जंगलों में बबूल, महुवा, तेन्दु, सलाई तथा ढाक बहुत पाया जाता है। तेन्दू की पत्ती बीड़ी बनाने में प्रयोग होती है। जंगल की पचास प्रतिशत से अधिक मात्रा ईंधन की लकड़ी वाले वृक्षों के अंतर्गत है।

जलवायु -

जनपद की जलवायु सम शीतोष्ण है। जिसके कारण ग्रीष्म काल में काफी गर्मी और शीतकाल में काफी ठण्डक रहती है। मध्य नवम्बर से जनवरी तक अधिक ठण्ड पड़ती है गर्मियों में आद्रता 20 प्रतिशत से भी कम हो जाती है और गर्म हवायें चलती हैं जिले में वर्षा का सामान्य औसत 850 मि.मी. हैं परन्तु वास्तविक रूप से वर्षा किसी वर्ष काफी अधिक और किसी वर्ष बहुत कम होती हैं। वर्षा की असमानता प्रायः 600 मि.मी. से 1300 मि.मी. के मध्य रहती हैं। जनपद में दक्षिण-पश्चिम मानसून जून के तीसरे सप्ताह से प्रारम्भ होकर सितम्बर के अंत तक रहता है तथा जुलाई माह में वर्षा की सघनता सबसे अधिक होती है वर्षा

की असमानता तापमान में वृद्धि तथा ढालू व पठारी भूमि होने के कारण मैदानी क्षेत्र में भू-संरक्षण की प्रक्रिया काफी गंभीर है। जनपद में कुल प्रतिवेदन क्षेत्रफल का लगभग 19 प्रतिशत क्षेत्र बंजर व अकृषि योग्य है। यहाँ शीतकाल की तुलना में ग्रीष्मकाल शीघ्र प्रारम्भ होकर देर तक रहती है। परन्तु ग्रीष्मकाल में रात ठण्डी रहती है।

जनपद का न्यूनतम औसत तापमान 17.86 डि. सैलसियस से.ग्रे. तथा अधिकतम औसत तापमान 32.84 डि.से.ग्रे. तक पहुँच जाता है तथा न्यूनतम 3 डि. से.ग्रे. तक आ जाता है।

2. कृषि क्षेत्र - देश एवं प्रदेश की भाँति जनपद झांसी भी कृषि पर आधारित है। यहाँ की कुल कार्य शक्ति करीब 62 प्रतिशत कृषि पर आधारित है। यहाँ की भूमि उपयोगिता का मुख्य विश्लेषण निम्नवत-

भूमि सम्बन्धी मुख्य आधारभूत आंकड़े (2001-02)

1.	भूमि उपयोगिता के लिए प्रतिवेदन क्षेत्रफल	499393 हे.
2.	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	343209 हे.
3.	एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल	70720 हे.
4.	वनों के अन्तर्गत क्षेत्रफल	33638 हे.
5.	कृषि योग्य बंजर भूमि क्षेत्रफल	15488 हे.
6.	वर्तमान एवं अन्य पर्ती भूमि	32581 हे.
7.	ऊसर एवं कृषि आयोग्य भूमि क्षेत्रफल	31569 हे.
8.	उद्यानों/वृक्षों की फसलों का क्षेत्रफल	1018 हे.
9.	शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल	196926 हे.

उक्त जानकारी से इस जनपद की फसल सघनता 120.6 प्रतिशत की दिखती है अर्थात अधिकांश वर्ष भर में एक ही फसल ली जाती है। एवं शुद्ध बोए गए

क्षेत्रफल में शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का प्रतिशत भी करीब 57.38 है अर्थात यहां की करीब-करीब आधी खेती वर्षाधारित है। यहाँ की मुख्य फसलें, गेहूं, चना, मटर, मसूर, राई/सरसों, अलसी एवं मूँगफली, सोयाबीन, उर्द, मूंग, तिल है। इसके अलावा जायद में नदियों के किनारे जहाँ-तहाँ खरबूजा, तरबूज एवं अन्य कुकर-बिट्स सब्जियाँ भी उगाई जाती है। झाँसी जनपद में 4 बीज सम्बर्न्धन फार्म है। जहाँ उन्नत बीजों का उत्पादन किया जाता है।

जनपद में जोतवाद कृषकों का विश्लेषण (1995-96)

जोत श्रेणी	जोत दारों की संख्या	श्रेणी का कुल क्षेत्रफल हे.
0.5	54163	14462
0.5से 1.0 हे. तक	45533	32381
1.0 से ऊपर 2.0 हे. तक	54032	87736
2.0 से ऊपर 4.0 हे. तक	34984	103483
4.0 से ऊपर 10.0 हे. तक	17986	104809
10.0 हे. से ऊपर	1270	19033
योग	207968	362104

सिंचाई व्यवस्था - जनपद में फसल सघनता कम होने के प्रमुख कारणों में से सिंचाई सुविधा कम होना है जिससे सिंचित क्षेत्र कम रहता है एवं साल के अन्दर फसलों की संख्या भी कम रहती है। यहाँ साधन वार सिंचाई सुविधा निम्नवत है।

मंडल की संख्यकीय पुस्तिका 2001-02 से संकलित

	साधन	संख्या	माप
1.	नहर	--	1196 किमी
2.	राजकीय नलकूप	89	--
3.	निजी नलकूप	2525	--
4.	बोरिंग पर लगे पम्पसेट	15030	--
5.	भूस्तरीय पम्प सेट	11653	--
6.	पक्के कुएँ	15231	--
7.	रहट	10267	--

नहरें एवं नलकूप सिंचाई के प्रमुख साधन है जिनके अन्तर्गत करीब आधा-आधा सिंचित क्षेत्रफल आता है। नहरें तो सरकारी योजनाओं एवं वित्तीय व्यवस्थाओं पर आधारित है पर निजी नलकूप वगैरह में बैंकों का योगदान हो सकता है।

कृषि उत्पादों का संग्रहण एवं विपणन -

कृषि उत्पादों के संग्रहण एवं भण्डारण हेतु खाद्यान्न भण्डारों की सुविधा निम्नवत है - (2002-03)

	खाद्य निगम भण्डार	सं.	भण्डारण क्षमता मी.ट.
1.	भारतीय खाद्य निगम	08	30340
2.	केन्द्रीय भण्डार निगम	10	15800
3.	राज्य सरकार भण्डारगार	73	7300
4.	सहकारिता विभाग भण्डार ग्रह	21	5814
5.	ग्रामीण गोदाम	87	25400
6.	शीत भण्डार	02	5680

जनपद झाँसी में 6 क्रय-विक्रय सहकारी समितियां एवं इसके अतिरिक्त प्रत्येक स्तर पर स्थानीय बाजार है जहाँ दिन-प्रतिदिन क्रय-विक्रय का कार्य होता है। पुरानी विषणन व्यवस्था में अनेक कमियाँ है जिससे कृषकों को उनके उत्पादों का सही मूल्य नहीं मिल पाता अतः व्यवस्था सुधार के उद्देश्य से 6 मण्डी समितियों, झाँसी, बरूआसागर, मऊरानीपुर, गुरसराँय, मोंठ, चिरगाँव की स्थापना की गई।

3. ऐतिहासिक स्थिति

झाँसी जनपद का इतिहास -

ब्रिटिश शासन को पूर्व झांसी जनपद की प्रशासनिक व्यवस्था की सही जानकारी प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है किन्तु यह निश्चित है कि यह जनपद चेदि देश, चेदि राष्ट्र, जेजाकभुक्ति, जजहोति तथा बुन्देलखण्ड नाम से विख्यात क्षेत्र के अन्तर्गत ही शामिल था। झांसी की स्थापना ओरछा के बुन्देला राजा वीरसिंह द्वारा की गई थी, जिसको मुगल सम्राट जहाँगीर ने सन् 1611 में ओरछा का राजा बना दिया था। ओरछा से 6 मील पश्चिम में स्थित "बलवन्त नगर" नामक क्षेत्र पर भी वीरसिंह का अधिकार था, इसके पास में ही स्थित पहाड़ी पर राजा वीरसिंह ने सन् 1613 में एक किला बनवाया जो झांसी नाम से विख्यात है। एक किंवदन्ती के अनुसार जिस समय झाँसी के किले का निर्माण कार्य चल रहा था, उसी समय एक दिन वीरसिंह जू देव ने जैतपुर के राजा को ओरछा महल की छत से इस नई इमारत की ओर इशारा करते हुए पूँछा, कि क्या आपको वह इमारत दिख रही है? राजा जैतपुर ने कहा, कि हां झांई-सी दिखाई पड़ रही है। तभी से इस स्थान का नाम झाँई-सी पड़ गया। कालान्तर में जिसका नाम झाँसी हो गया।

वीरसिंह की मृत्यु के पश्चात मुगलों एवं बुन्देलों के बीच संघर्ष प्रारम्भ हुआ औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् कमजोर उत्तराधिकारों के कारण मुगल साम्राज्य का भी विघटन होने लगा था। ऐसी परिस्थिति में पन्ना नरेश छत्रसाल ने शिवाजी से भेंटकर बुन्देलखण्ड को मुगल शासन से मुक्ति दिलाने का संकल्प लिया। मुगल सम्राट फर्रूख सियर ने छत्रसाल का दमन करने के लिये सेनानायक मुहम्मद खांन बंगश को भेजा जिसने छत्रसाल को जैतपुर के किले में घेर लिया, किन्तु उसी समय पेशवा बाजीराव ने छत्रसाल की सहायता कर मुगलों को परास्त किया। इससे प्रसन्न होकर ही छत्रसाल ने अपने साम्राज्य का 1/3 भाग बाजीगर को दिया जिसमें झांसी का भी भाग शामिल था। अब झांसी का सूबेदार नियुक्त किया नारोशंकर के पश्चात् महादजी गोविन्द काकिरदे, बाबूराम कोल्हातकर, विश्वासराव लक्ष्मण तथा रघुनाथ हरि नेवालकर ने झाँसी के सूबेदार का पद सम्भाला। बाद में नेवालकर परिवार के लिये सूबेदार का पद वंशानुगत हो गया। इसकी अन्तिम शासक महारानी लक्ष्मीबाई थीं।

सन्1803 में मराठों और अंग्रेजों के बीच बेसिन की संधि हुई, जिसमें मराठों ने बुन्देलखण्ड को अंग्रेजी हुकूमत को हस्तान्तरित कर दिया। अब झाँसी के सूबेदारों को पेशवा के साथ ही ईस्ट इंडिया कम्पनी की सत्ता को भी स्वीकार करना पड़ा। सन् 1815 में शिवराज भाऊ का पौत्र रामचन्द्र राव झांसी का सूबेदार बना। निःसंतान रामचन्द्रराव की मृत्यु के पश्चात् उसका उत्तराधिकारी उसका चाचा रघुनाथ राव हुआ। दुर्भाग्यवश रघुनाथराव भी निःसंतान थे। सन् 1838 में उनकी मृत्यु के पश्चात उसके छोटे भाई गंगाधर राव को अंग्रेजों ने झाँसी की गद्दी पर बैठाया। गंगाधर राव का विवाह मोरोपन्त ताम्बे की पुत्री मणिकर्णिका के साथ सन् 1842 में हुआ। विवाहोपरान्त मणिकर्णिकार झाँसी की महारानी लक्ष्मीबाई कहलायी। सन् 1851 में गंगाधर राव को एक पुत्ररत्न प्राप्त

हुआ किन्तु 3 महीने बाद ही उसकी मृत्यु हो गई। गंगाधर राव इस घटना से अत्यन्त दुःखी हुऐ और 21 नवम्बर, 1853 में उनकी मृत्यु हो गई। अपनी मृत्यु से एक दिन पूर्व उन्होंने दामोदर राव को गोद लिया तथा लक्ष्मीबाई को झांसी रियासत का रीजेण्ट नियुक्त कर दिया। किन्तु लार्ड डलहौली की राज्य हड़प नीति के अन्तर्गत झांसी ब्रिटिश साम्राज्य में शामिल कर ली गयी तथा महारानी लक्ष्मीबाई द्वारा गोद लिये पुत्र दामोदर राव को भी दत्तक पुत्र की मान्यता नहीं दी और मार्च, 1854 में महारानी को साठ हजार वार्षिक पेंशन देकर उन्हें दुर्ग छोड़ने को मजबूर कर दिया। महारानी ने सरकारी महल (रानी महल) में रहकर निरंतर प्रयास किया कि दामोदरराव को झाँसी का उत्तराधिकारी मान लिया जाये, लेकिन जब इंग्लैण्ड के बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स की तरफ से भी वैधता स्वीकार नहीं की गई तब अंत में महारानी ने तलवार की दम पर अपना राज्य वापस लेने का दृढ़ संकल्प किया।

10 मई 1857 में मेरठ की तीसरी केवेलरी ने अंग्रेज सरकार के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया और मेरठ पर अधिकार कर दिल्ली की ओर कूच किया। दिल्ली के अंतिम मुगल बादशाह बहादुर शाह द्वितीय को अपना नेता बनाकर विद्रोह और तेज कर दिया। इस विद्रोह की लपटें बरेली, मुरादाबाद, शाहजहाँपुर, लखनऊ, फिरोजपुर, कानपुर तक फैल गई। झाँसी में भी 5 जून 1857 के दिन स्टारफोर्ट में गुरुबख्श के नेतृत्व में विद्रोह भड़क उठा। 4 लाख का खजाना तथा तमाम युद्धोपयोगी सामान हस्तगत करके विद्रोहियों ने अंग्रेज अधिकारियों तथा उनके परिजनों को मार डाला और महारानी लक्ष्मीबाई को दुर्ग में ले जाकर पुनः झाँसी की महारानी घोषित कर दिया। महारानी की सेना में गुलाम गौस खां, दोस्त खां, खुदाबख्श, लाला भाऊ बख्शी, मोतीबाई, मुन्दर-सुन्दर, काशीबाई जैसे शूरवीर थे। अब महारानी ने अंग्रेजों से लोहा लेने के लिये अपनी सैन्य

शक्ति को और अधिक विकसित व सुदृढ़ करने का प्रयास प्रारम्भ किया। उन्होंने नये सैनिकों की भर्ती की, 18 नये कारखाने खुलवाये, किले के प्रत्येक बुर्ज पर तोपें रखवाई। जिनमें कड़क बिजली, भवानीशंकर, घनगर्ज, महाकाली जैसी विशाल तथा भयंकर तोपें थी। अंग्रेजों ने क्रीमिया युद्ध के विजेता सर ह्यूरोज को झाँसी पर पुनः अधिकार करने हेतु बहुत बड़ी फौज लेकर भेजा जो 20 मार्च 1858 को झांसी में छावनी के पास सैन्य दल के साथ आ पहुँचा तथा उसने महारानी को स्वयं आकर उपस्थित होने अथवा युद्ध के लिये तैयार रहने का संदेश भिजवाया। महारानी ने युद्ध करना स्वीकार किया। महारानी लक्ष्मीबाई ने अद्वितीय साहस व वीरता का परिचय दिया जिससे अंग्रेज जनरल भी प्रभावित हुआ। परन्तु अल्प साधनों व अपने एक रिश्तेदार दूल्हा जू द्वारा दुर्ग का फाटक खोल देने के कारण वे अधिक समय तक विस्तृत अंग्रेजी सेना का सामना लम्बे समय तक न कर पायीं, फिर भी उन्होंने आत्मसमर्पण नहीं किया और अंग्रेजों से लड़ती हुई रक्तरंजित अवस्था में पीठ पर पुत्र दामोदरराव को बांधे दुर्ग से निकल गई। अंग्रेजी सेना उनका पीछा कर रही थी। बुरी तरह घायल होने के समीप 18 जून 1858 को वीरगति को प्राप्त हुई तथा अपने शौर्य व पराक्रम का लोहा मनवाकर झाँसी का नाम इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित कर गई।

भारत का स्वतंत्रता और झाँसी एवं ललितपुर का विवरण

क्र.सं.	आन्दोलनों का नाम	अवधि	सहभागी/स्वतंत्रता सैनानी
1	खिलाफत आन्दोलन	30.11.1920	श्री रघुनाथ धुलेकर एवं आत्माराम गोविन्द खरे व पं. कृष्ण गोपाल शर्मा
2	मेरठ षड़यंत्र में फांसी	04. 192	श्री अयोध्या प्रसाद व श्री लक्ष्मण राव कदम

3	नमक सत्याग्रह	06.04.1930	श्री रघुनाथ विनायक धुलेकर श्री सीताराम भास्कर तथा श्री कुंज बिहारी शिवानी
4	झन्डा आन्दोलन		श्री घासीराम व्यास श्री दुर्जनलाल रावत तथा राजाराम शास्त्री
5	कांग्रेस की सक्रियता	1936-37 1938-39	श्री कुंज बिहारी लाल शिवानी श्री बाबू कालिका प्रसाद अग्रवाल श्री गंगाधर राव जोंशी व मु. हाफिज सूर इलाही
6	श्रम जी की संगठनों का योगदान	1938-39	श्री वेन्जामिन, शंकरराव चौहान श्री सुखनन्दन व्यास
7	व्यक्तिगत सत्याग्रह		असफाक उल्ला, पं. राम सहाय शर्मा लमन एवं कदम श्री कालिका प्रसाद अग्रवाल
8	भारत छोड़ो आन्दोलन	8/1942	श्री आत्माराम गोविन्द खैर श्री कुंज बिहारी लाल शिवानी तथा लक्ष्मन एवं कदम रामेश्वर प्रसाद शर्मा, मुरलीधर अग्रवाल, सीताराम राव, श्री राम शरन लाल श्री हरिदास वर्मा, श्री कन्हैया लाल श्री बाबू लाल चौधरी, श्री पंचम लाल जैन, श्रीमती पिस्ता देवी, क्रांति देवी पंगोरिया, सावित्री बाई शिवानी चाची आदि।

4. जनसंख्यात्मक स्थिति -

तालिका संख्या -1

जनपद झांसी एवं ललितपुर के जनसंख्यात्मक आधारभूत आंकड़

	झांसी	ललितपुर
क्षेत्रफल	5024	5039
जनसंख्या	174715	977734
पुरूष	767630	519413
स्त्री	662268	458321
जनघनत्व	347.53	149
लिंगानुपात	86.3	86.3

स्रोत - जनगणना (2001) फाइनल पॉपुलेशन टोटल सीरिज 1 वॉल्यूम 2 पेपर-1

तालिका संख्या-2

जनपद झांसी एवं ललितपुर की ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या का विवरण

	झांसी	ललितपुर
1. ग्रामीण :-		
जनसंख्या	646495	863342
पुरूष	347791	519413
स्त्री	298704	397116
प्रतिशत	85.97 %	66.39 %
2. नगरीय :-		
जनसंख्या	105548	566356
पुरूष	55894	301204
स्त्री	49654	265152
प्रतिशत	14.13%	59.61%

स्रोत - जनगणना (2001) फाइनल पॉपुलेशन टोटल सीरिज -1वॉल्यूम- 2 पेपर-1

तालिका संख्या-3

जनपद ललितपुर एवं झांसी में अनुसूचित जाति-जनजाति जनसंख्या का विवरण

	झांसी	ललितपुर
1. अनुसूचित जाति :-		
जनसंख्या	411788	188927
प्रतिशत	28.80%	25.12%
नगरीय	134491	15049
ग्रामीण	277297	173878
2. अनुसूचित जनजाति :-		
जनसंख्या	187	349
प्रतिशत	0.01%	0.05%
नगरीय	141	10
ग्रामीण	46	339

स्रोत - जनगणना (2001) फाइनल पॉपुलेशन टोटल सीरिज 1 वॉल्यूम 1, पेपर-1

तालिका संख्या-4

जनपद ललितपुर एवं झांसी की लिंगवार साक्षरता दर का विवरण

साक्षरता दर	ललितपुर	झांसी
1. प्रतिशत :-		
योग	32.12	51.60
ग्रामीण	26.41	41.09
नगरीय	66.10	66.39
अ- नगरीय	45.22	66.76
पुरूष	39.79	59.05
स्त्री	16.62	33.76
ब- ग्रामीण	10.47	19.61
पुरूष	78.37	78.56
स्त्री	52.22	54.56

स्रोत - जनगणना (2001) फाइनल पॉपुलेशन टोटल सीरिज, पेपर-2

5. आर्थिक स्थिति :-

तालिका संख्या-5

जनपद ललितपुर एवं झांसी में मुख्य श्रमिकों का आर्थिक वर्गीकरण

	ललितपुर	झांसी
1. प्राईमरी श्रमिक		
पुरूष	174832	227687
स्त्री	29995	45608
2- सेकेण्डरी श्रमिक		
पुरूष	10421	41192
स्त्री	1765	7073
3- टरटियरी श्रमिक		
पुरूष	27054	101116
स्त्री	2043	8342
4- योग	249110	430998
पुरूष	215307	369995
स्त्री	33803	60993

स्रोत - जनगणना (2001) यू.पी. प्राईमरी सेन्सस एब्सट्रेक्ट सीरिज, पेपर-2

तालिका संख्या-6

जनपद ललितपुर एवं झांसी में औद्योगिक इकाइयों एवं कार्यरत श्रमिकों का विवरण

उद्योगिक इकाईयां	ललितपुर	झांसी
1. सरकारी		
पब्लिक	-	-
प्राईवेट	-	2
2. गैर सरकारी		
पब्लिक	-	1
प्राईवेट	7	67
योग	7	70
3. लिमिटेड कम्पनियों में कार्यरत श्रमिक	250	14058
4. स्माल स्केल इण्डस्ट्रीज	3373	5480
5. श्रमिक	16190	28678
पुरूष	215307	369995
स्त्री	33803	60993

स्रोत - अर्थ एवं सांख्यिकीय विभाग स्टेट प्लानिंग इन्स्टीट्यूट, सांख्यिकीय सर्वे 2001 डिसक्रियेटोटेरिफ ऑफ इण्डस्ट्री कानपुर (कालम-6,7,8)

तालिका संख्या-7

जनपद ललितपुर एवं झांसी में कोओपरेटिव सोसायटी एवं स्वैच्छिक अभिकरण

अभिकरण	ललितपुर	झांसी
1. मिल्क कोओपरेटिव	-	99
2. हाऊसिंग कोओपरेटिव	3	12
3. प्राईमरी एन.जी.आर. कोओपरेटिव	41	68
4. पी.ए.सी. मैम्बर्स	87660	149000
5. कैन कोओपरेटिव	-	-
6. स्वैच्छिक संगठन	-	4

स्रोत - कमिश्नर कम रजिस्ट्रार ऑफ कोओपरेटिव सोसायटीन लखनऊ (कॉलम134) आवास कोओपरेटिव फेडरेशन लखनऊ (कॉलम 12) कमिश्नर कैन एण्ड शुगर कोओपरेटिव सोसायटी लखनऊ (कॉलम 567) डिफरेण्ट वालेण्ट्री एजेन्सी लखनऊ (कॉलम 8)।

तालिका संख्या-8

जनपद ललितपुर एवं झांसी में उपभोक्ता केन्द्र तथा सस्ते गल्ले की दुकानों का विवरण

उपभोक्ता केन्द्र	ललितपुर	झांसी
1. प्राईमरी कन्ज्यूमर स्टोर		
श्रमिक	-	-
कॉलेज/संस्था	-	1
अन्य	-	4
2. ग्रामीण		
कन्ज्यूमर स्टोर	51	81
3. फेयर प्राइम शॉप्स		
ग्रामीण	16	26
शहरी	10	17

स्रोत - रजिस्ट्रार कम कमिश्नर ऑफ कोओपरेटिव सोसायटीन लखनऊ (उ.प्र.)-2001

6. स्वास्थ्य स्थिति :-

तालिका संख्या-9

जनपद ललितपुर एवं झांसी के पब्लिक सेक्टर में चिकित्सकों का विवरण

चिकित्सक	ललितपुर	झांसी
1. एलोपैथी :-		
स्वीकृत	70	85
कार्यरत	50	78
2. आयुर्वेदिक/यूनानी :-		
स्वीकृत	26	21
कार्यरत	21	20
3. होम्योपैथिक :-		
स्वीकृत	21	06
कार्यरत	06	03
4. योग		
स्वीकृत	112	112
कार्यरत	84	101

स्रोत- डी0एच0एस0 स्वास्थ्य भवन, लखनऊ (कॉलम 1,2) डायरेक्टर ऑफ आयुर्वेदिक एवं यूनानी लखनऊ (कॉलम 3,4) डायरेक्टर ऑफ होम्योपैथी लखनऊ- 2001 (कॉलमम 5,6)

तालिका संख्या-10

जनपद ललितपुर एवं झाँसी में प्राईवेट सेक्टर में चिकित्सकों का विवरण

प्राइवेट सेक्टर में चिकित्सक	ललितपुर	झांसी
1. एलोपैथी :-		
पंजीकृत	32	583
गैर पंजीकृत	-	505
2. आयुर्वेदिक/यूनानी :-		
पंजीकृत	29	488
गैर पंजीकृत	53	486
3. होम्योपैथिक :-		
पंजीकृत	05	159
गैर पंजीकृत	-	156
4. योग		
पंजीकृत	116	1230
गैर पंजीकृत	53	1129

स्रोत - रजिस्ट्रार कम सेक्रेटरी इण्डियन मेडीकल काउंसिल लखनऊ-2001

रजिस्ट्रार बोर्ड ऑफ इण्डियन मेडीसन लखनऊ-2001

रजिस्ट्रार होम्योपैथी मेडीसन बोर्ड लखनऊ - 2001

तालिका संख्या-11

जनपद ललितपुर एवं झाँसी में सरकारी चिकित्सा सेवा संस्थानों का विवरण

चिकित्सा संस्थान	ललितपुर	झांसी
1. एलोपैथी		
अ- सरकारी	39	69
ब- गैर सरकारी	5	5
2. आयुर्वेदिक		
अ- सरकारी	5	20
ब- गैर सरकारी	3	1
3. यूनानी		
अ- सरकारी	20	5
ब- गैर सरकारी	2	1
4. होम्योपैथिक		
अ- सरकारी	26	20
ब- गैर सरकारी	3	1
5. योग		
अ- सरकारी	110	114
ब- गैर सरकारी	15	8

स्रोत - अर्थ एवं संख्या विभाग, स्टेट प्लानिंग इन्स्टीट्यूट स्टैस्टिकल एब्सेटैण्ट 2001

तालिका संख्या-12

जनपद ललितपुर एवं झांसी में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं समेकित बाल विकास योजना का विवरण

स्वास्थ्य केन्द्र	ललितपुर	झांसी
1. सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र	2	4
2. प्रा. स्वा. केन्द्र	31	48
3. योग	33	52
4. औसतन ग्रामीण जनसंख्या	19591	16928
5. उपकेन्द्र	186	251
6. औसतन ग्रामीण जनसंख्या	3592	3440
7. आई.सी.डी.एस. ब्लॉक	6	8

सी0एच0सी0, सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र पी0एच0सी0, प्राथमिक स्वास्थ केन्द्र

स्रोत - डायरेक्टरेट ऑफ हैल्थ्ज सर्विसेज, स्वास्थ्य भवन लखनऊ (उ0प्र0) कॉलम-1 डायरेक्टरेट ऑफ मैजी वेलफेयर लखनऊ (कॉलम-2,5,7)

7. प्रशासनिक स्थिति :-

तालिका संख्या-13

जनपद ललितपुर एवं झांसी में की प्रशासनिक संरचना का विवरण

प्रशासनिक संरचना	ललितपुर	झांसी
1. तहसील	3	5
2. ब्लाक	6	8
3. न्याय पंचायत	75	83
4. ग्राम पंचायत	752	800
5. ग्राम संख्या	1508	2109

स्रोत - इयरबुक ऑफ डिप्टी डायरेक्टर ऑफ अर्थ एवं संख्या झांसी मण्डल झांसी

8. शैक्षिक स्थिति :-

तालिका संख्या-14

जनपद ललितपुर एवं झाँसी में शैक्षिक संस्थानों का विवरण

शैक्षिक संस्थान	ललितपुर	झांसी
1. इन्जीनियरिंग कॉलेज		
अ- सरकारी	-	1
ब- गैर सरकारी	-	1
2. मेडीकल कॉलेज		
अ- एलोपैथिक	-	1
ब- आयुर्वेदिक	-	1
3. विश्वविद्यालय	-	1
4. महाविद्यालय	2	13
5. इण्टर कॉलेज	11	21
6. हाई स्कूल	63	126
7. जू. हाई स्कूल	193	393
8. प्राईमरी स्कूल	658	1258
9. पॉलीटेक्नीक	1	2
10. आई.टी.आई.	2	2

9. साहित्यक स्थिति :-

राष्ट्र कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त :

झांसी जनपद के चिरगांव नाम ग्राम में अपने संयम के सुप्रसिद्ध व्यवसायी एवं काव्य-प्रेमी रामभक्त श्री रामचरण के यहां 1886 में जन्में मैथिलीशरण गुप्त ने काव्य क्षेत्र में अपनी कृतियों से जो झांसी जनपद के साथ-साथ बुन्देलखण्ड का गौरव सम्पूर्ण देश में बढ़ाया है, वह सबके लिए गर्व की बात है।

भारत-भारती, साकेत, यशोधरा, जयद्रथ वध, पंचवटी, विष्णु-प्रिया, देवदास, मेघनाथ वध, जैसी मौलिक तथा अनुदित लगभग 40 पुस्तकें उनकी अमर लेखनी से लिखी गई इनमें से सर्वाधिक प्रशंसित, बहुचर्चित, उनकी अमर कृतियों के रूप में साकेत एवं भारत-भारती हैं। इनमें साकेत महाकाव्य पर उन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से मंगलाप्रसाद पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है।

मैथलीशरण गुप्त के काव्य का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक था। भारतीय इतिहास के अतीत और वर्तमान दोनों पर उनकी दृष्टि रही हैं। वर्तमान को तो उन्होंने युग चेतना और काव्य संवेदना का केन्द्र बनाया ही है। जीवन के राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक, नैतिक सभी पहलुओं का उनके काव्य में विस्तार से चित्रण है।

राष्ट्रकवि के रूप में प्रतिष्ठापित बारह वर्षो तक राज्य सभा के सम्मानित मनोनीत सदस्य रहे। ऐसी महान प्रतिभा 78 वर्ष की आयु तक जीवित रही। लेकिन उनकी यश सुरभि आज भी उनके काव्य प्रसूनों से फैली हुई है।

पदम् भूषण डॉ. वृन्दालाल वर्मा- सर वाल्टर स्कॉट कहे जाने वाले ऐतिहासिक उपन्यास समाट के रूप में देश विदेश में ख्याति प्राप्त और बाबू नाम से संबोधित डॉ. वृन्दावन लाल वर्मा भी श्री गुप्त ही की तरह हमारे झांसी के यशोदीप है।

मऊरानीपुर (झांसी जनपद) में सन् 1889 में जन्में बाबू की साहित्यिक प्रतिभा के प्रस्फुटन नाटककार के रूप में सन् 1908-9 में उनके प्रथम नाटक "सेनापति ऊदल" के रूप में हुआ। जो अंग्रेजी शासन काल में जब्त कर लिया गया। लेकिन दूसरा प्रसिद्ध नाटक "राखी की लाज" सन् 1943-44 में प्रकाशित हुआ।

इसके बाद उनकी लेखनी की जो अविरल धारा वही, उससे झांसी की रानी, विराठा की पहिनी, मृगनयनी, दुर्गावती, सेती आग, सोना, अहिल्याबाई, गढ़कुडार, नगन, कचना, अचल मेरा कोई, माधव जी सिन्धिया, टूटे काँटे, देवगढ़ की मुसकान, कीचड़ और कमल जैसे अनेक उपन्यास तथा दबे पांव, शरणागत, कलाकार का दंड, ऐतिहासिक कहानियां, तोषी आदि अनेक कहानी संग्रह, हंस मयुर, पूर्व की ओर, बांस की फांस, कश्मीर का कांटा, लो भाई पंचों लो, पीले हाथ, जहांदार शाह, सगुन, जैसे अनेक नाटक लिखने वाले तथा डालमिया पुरस्कार, भारत साहित्यकार संसद पुरस्कार, उत्तर प्रदेश राज्य सरकार, मध्य प्रदेश राज्य सरकार पुरस्कार, भारत सरकार का प्रथम पुरस्कार, हिन्दुस्तानी एकादमी पुरस्कार, तथा नेहरू पुरस्कार जैसे अनेक पुरस्कारों से पुरस्कृत पदम् श्री जैसे अलंकरण से अलंकृत और 'पद्यभूषण' पुरस्कृत बाबू स्वयं में एक कुशल नाट्य निर्देशक अपने समय के ख्याति प्राप्त एडवोकेट व चैयरमेन रहे हैं।

उनके उपन्यासों के माध्यम से पता चलता है कि वे बुन्देलखण्ड की संस्कृति के साथ-साथ प्रकृति प्रेमी, संगीत कला-प्रेमी अपने देश को प्राचीन गौरव के रक्षक के रूप उन्होंने अपनी एक अलग ही पहचान बनाई है।

कविवर सीताराम शरण गुप्ता -

उत्कृष्ठ कवि और लेखक श्री सीताराम शरण गुप्त का जन्म झांसी जिले के अन्तर्गत चिरगाँव नामक कस्बे में 4 सितम्बर 1895 ई. को सेठ रामचरण के यहां हुआ। इन्हें अपने पिता से काव्य अनुराग विरासत में प्राप्त हुआ था इन्हें

स्वाध्याय के प्रति बचपन से ही लगाव रहा है। इन्होंने घर पर ही संस्कृत, बंगला, गुजराती और अंग्रेजी का ज्ञान प्राप्त किया। यह राष्ट्रपिता महात्मा गांधी आचार्य विनोबा भावें और गणेश शंकर विद्यार्थी से अत्यधिक प्रभावित थे।

गुप्त के काव्य, खण्ड काव्य नाटक, उपन्यास, नीति नाट्य, उपन्यास, निबन्ध संग्रह के अतिरिक्त अन्य ग्रन्थों का अनुवाद भी किया है। आपका साहित्य हिन्दी जगह की धरोहर है।

आपके उत्कृष्ट साहित्य के लिए 1962 में आपको ''सरस्वती हीरक जयंती'' के अवसर पर सम्मानित किया गया व 1941 में ''काशी नागरी प्रचारिणी सभा'' द्वारा उपन्यास कृति ''नारी'' की रचना के लिए ''सुधार पदक'' प्रदान कर सम्मानित किया गया।

अध्याय -5

उत्तरदाताओं की सामाजिक-जनांकिकीय विशेषतायें

यदि हम धूम्रपान तथा हृदय कैन्सर के बीच में सम्बन्ध स्थापित करना चाहे तो हमें तथ्यों की आवश्यकता पड़ती है। यदि हम किसी औषधि या टीके के प्रभाव की जानकारी करना चाहते हैं, हमें तथ्यों की आवश्यकता पड़ती है । यदि हम समाज की किसी भी समस्या की जानकारी करना चाहते हैं तब भी हमें सांख्यिकीय आंकड़ों की आवश्यकता पड़ती है।[1]

प्रत्येक राष्ट्र अपनी सीमाओं में निवास करने वाले प्राणियों से सम्बन्धित होता है अतः उसे समाज की आवश्यकताओं तथा समस्याओं का बोध होना चाहिये जैसे- उनका स्वभाव आकार तथा सम्पूर्ण जनसंख्या में उनका वितरण आदि । किस प्रकार ये समस्याऐं एक स्थान से दूसरे स्थान पर भिन्न होती हैं और वे एक समयावधि में सामाजिक, आर्थिक परिस्थितिवश परिवर्तित होती हैं। इस प्रकार की किसी भी समीक्षा के लिये कुछ निश्चित मापक अनिवार्य होते हैं। यही सामाजिक, आर्थिक तथा जनांकिकीय तथ्य कहलाते हैं जो जन्म, मृत्यु, विवाह, शिक्षा, व्यवसाय तथा आय से सम्बन्धित होते हैं जो सामुदायिक जीवन में विद्यमान होते हैं। यथार्थ रूप से सम्पादित वर्गीकृत तथा विश्लेषित घटनाऐं समाज की वर्तमान स्थिति एवं समस्याओं को मापने के यंत्रों का कार्य करते हैं।''खदानों के श्रमिकों की स्थिति ज्ञात करने हेतु, यथा-जनसंख्या, आय, वितरण, जन-घनत्व तथा अन्य कारक जैसे- पोषण, आवासीय स्थिति, सामाजिक-आर्थिक तथा पर्यावरणीय सेवाऐं-संस्थाऐं मलिन आवासीय सुधार, नव तथा आवासीय योजनाऐं इत्यादि ।

---

1. Society for social Medicines (1966): Evidences submitted to the Royal common social medical Education, Beit, Pre. Soc. Medi, 20,158

क्रेशर श्रमिकों की स्थिति तथा समस्याओं का ज्ञान और उनकी तुलना अन्य समुदायों से करना कि उनकी वर्तमान तथा भूतकाल में क्या स्थिति थी, उनकी भावी आवश्यकताओं की पहचान करने हेतु अनुरूप लक्ष्यों का निर्धारण करना, कार्यक्रम की रचना, क्रियान्वयन तथा मूल्यांकन आदि जनसंख्यात्मक प्रक्रियाओं तथा जन्मदर, जनसंख्या घनत्व, विवाह दर, वृद्धि दर तथा सामाजिक गतिशीलता पर निर्भर करता है। ये प्रक्रियाएँ निरंतर रूप से जनसंख्या के निर्धारण में, रचना में तथा आकार निर्मित करने में कार्यरत रहती हैं।

सामाजिक एवं आर्थिक विशेषताएँ अधिकांशतः जनसंख्या से सम्बन्धित होती हैं क्योंकि क्रेशर श्रमिकों मेंसमूह सदस्यों के गत्यात्मक सम्बन्धों जो अन्तः क्रियाओं के रूप में होते हैं पर निर्भर होता है । साथ ही उनमें आकार तथा कार्यकुशलता आत्मसात होती है जिसके आधार पर वे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। मानव जीवन को निर्धारित करने में उसके सामाजिक पर्यावरण का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। पर्यावरण मनुष्य के जीवन को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करता है तथा उसके सामाजिक सांस्कृतिक तथा आर्थिक स्वरूप को भी निश्चित करता है । किसी विशिष्ट पर्यावरण में व्यक्ति की कार्य पद्धति तथा जीवनशैली का स्वरूप किस प्रकार का होगा ; यह बहुत कुछ उसके पर्यावरण पर ही निर्भर करता है क्योंकि पर्यावरण व्यक्ति को विवश करता है कि वह अपने को उसके अनुरूप ढाले। मनुष्य की अवध प्रगति उसकी सामाजिकता का ही परिणाम है। समाज के सम्पर्क में आने पर ही वह जैवकीय प्राणी से सामाजिक प्राणी के रूप में परिवर्तित होता है । मनुष्य तथा उसके चारों ओर का परिवेश अर्थात् पर्यावरण एक दूसरे के पूरक हैं। मनुष्य को उसके इस पर्यावरण से अलग नहीं किया जा सकता है । श्री तिलारा के0एस0 (1990:132) ने भी उस कथन की पुष्टि करते हुऐ कहा है कि "मनुष्य एक चिन्तनशील तथा जिज्ञासु सामाजिक प्राणी है जिसका जीवन समाज में ही पनपता है और निकटवर्ती भौतिक परिवेश

तथा पर्यावरण के मध्य अन्तः क्रियाऐं करते हुऐ सामाजिक परिवेश में जीवनयापन करता है, जिसे सामाजिक पर्यावरण से कदापि पृथक नहीं किया जा सकता है क्योंकि पर्यावरण एक प्रकार का "ताना" है जिसमें प्राणी रूपी "बाना" डालने से ही समाज के "सजीव वस्त्र" का निर्माण होता है।"[1] किसी भी मनुष्य को अत्याधिक जानने-समझने के लिये उसके सामाजिक-सांस्कृतिक पर्यावरण को जानना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि यही उसकी सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि है। मानव भी अन्य प्राणियों की भांति जैवकीय प्राणी है परन्तु उसकी सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि उसे अन्य प्राणियों से भिन्न बनाती है क्योंकि वह सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, पारिवारिक, वैयक्तिक तथा शैक्षिक विशेषताओं का सम्मिलित रूप है। मनुष्य उपरोक्त विभिन्न पक्षों से मिलकर ही सम्पूर्णता को प्राप्त करता है। सुस्पष्ट है कि सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत मनुष्य की सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसी सन्दर्भ में श्री लवानिया (1967:203) ने लिखा है कि "सम्पूर्ण रूप से यह 'सजीव वस्त्र' मनुष्य मात्र के लिये सामाजिक पृष्ठभूमि है, जो वंशानुक्रमण तथा पर्यावरण से निर्धारित होती है।"[2] "सामान्यतः प्रत्येक व्यक्ति पर उसके पर्यावरण का विशेष प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति पर पड़ने वाले प्रभावों को मूलतः दो रूपों में ग्रहण किया जाता है :-

(1) वंशानुक्रमण तथा

(2) पर्यावरय/संगति व साहचर्य

जहां एक ओर व्यक्ति को शरीर रचना (आँख, कान, नाकनक्शा, रंगरूप आदि) वंशानुक्रम से प्राप्त होते हैं वहीं दूसरी ओर उसे शिक्षा, संस्कार, जीवनमूल्य, व्यवसाय, व्यवहार, आदतें, लगाव आदि पर्यावरण से प्राप्त होते हैं, इसलिये कोई

1. तिलेरा,के.एस.(1990): प्रक्टीकल सोशियोलाजी, प्राबलम्स एण्ड सोसल एक्टस प्रकाशन केन्द्र लखनऊ, पृष्ठ-132
2. लावानिया एस.एम.(1967), इण्डियन सोसल प्रोब्लम, कृष्णा बुक स्टोर प्रकाशन, शिकोहाबाद उ.प्र. पृष्ठ-203

भी व्यक्ति वंशानुक्रमण तथा पर्यावरण के पड़ने वाले प्रभावों को नकार नहीं कर सकता है । जैसा कि शारस्वत (1993:157) ने लिखा है कि, ''मनुष्य की सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, उस समुदाय की सामाजिक व्यवस्था का अभिन्न अंग होती है जिसमें कि वह सामाजिक प्राणी रह रहा होता हैं।''[1] सुस्पष्ट है कि सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत मनुष्य की सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। श्री रयूटर तथा हार्ट ने भी सामाजिक व्यवस्थापन के संदर्भ में लिखा है कि,''समाज में मनुष्य की सामाजिक पृष्ठभूमि उसके सांस्कृतिक पर्यावरण का एक अभिन्न अंग होती है जिसमें कि व्यक्ति रह रहा होता है अथवा रह चुका है।''[2]

किसी मनुष्य की आदतें, स्वभाव, रहन-सहन का स्तर, जीवनशैली, वैचारिकी आदि उसकी सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से ही निर्धारित होती है अर्थात् उसके चारों ओर के भौतिक परिवेश का उसके जीवन के प्रत्येक पहलू पर अवश्यंभावी प्रभाव पड़ता है। इस सन्दर्भ में प्रोफेसर अग्रवाल का कथन है कि, ''मानव केवल एक जैवकीय प्राणी नहीं है बल्कि इसके अतिरिक्त भी कुछ है और इसके अतिरिक्त वह जो कुछ भी है उसके कारण उसके व्यवहार, आचार-विचार, चिन्तन तथा जीवनशैली आदि प्रभावित होते है।''[3]

यह भी सर्वस्वीकार्य तथ्य है कि प्रत्येक सामाजिक प्राणी की सामाजिक स्थिति तथा भूमिका के निर्धारण में उसकी सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का महत्वपूर्ण योगदान रहता है । इसी प्रसंग में सर्वश्री पी0के0 (1997:37) ने लिखा है कि,''चूंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है इसलिये उसकी आकांक्षाऐं तथा आवश्यकताऐं अनन्त है । इन आकांक्षाओं व

1. शारस्वत आर.पी.,(1993), इण्डियन सोसल सिस्टम,भदौरिया पबलीकेशन एण्ड बुक सेंटर प्राइ. लि.इटावा उ.प्र., 157
2. स्यूटर एम.आर. एण्ड हार्ट पी.आर.,(1960), एन इन्ट्रोडक्शन टू सोसलोजी, मेक,ग्रो हील बुक कम्पनी, न्यूयार्क पृ.320
3. अग्रवाल भारत (1981): 'भारतीय समाज' अतीत से वर्तमान तक, मनमोहनदास पुस्तक मन्दिर प्रा.लि.भरतपुर (राज), पृष्ठ- 103

आवश्यकताओं के प्रति उसकी क्रियाशीलता, सफलता-असफलता, उसके सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन की पृष्ठभूमि को निर्धारित करती है।''[1]

अनुसंधान के क्षेत्र में सामाजिक विज्ञान के प्रायः सभी शोध अध्ययनों में निर्देशितों की सामाजिक-सांस्कृतिक तथा आर्थिक विशेषताओं का अध्ययन अवश्य किया जाता है बल्कि प्राकृतिक विज्ञानों के शोध अध्ययनों में भी इनका गहन तथा सूक्ष्म अध्ययन किया जाता है। इसलिये सामाजिक विज्ञानों के शोध अध्ययनों में इनके अध्ययन की महत्ता बढ़ जाती है क्योंकि उत्तरदाताओं की सामाजिक, सांस्कृतिक विशेषताओं की अवहेलना नहीं की जा सकती है।

यही कारण है कि किसी भी सामाजिक विज्ञान के अनुसंधान में यह आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य होता है कि अध्ययन की इकाईयों के सामाजिक- आर्थिक तथा सांस्कृतिक पक्षों का जानकर उनका गहन तथा सूक्ष्म अध्ययन किया जाये क्योंकि व्यक्ति की सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का निर्माण कई कारकों से मिलकर होता है। इसी संदर्भ में श्री सत्येन्द्र (1992:49) ने लिखा है कि, ''विशेषकर सामाजिक विज्ञानों के शोध अध्ययनों मेंसूचनादाताओं की सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा आर्थिक दशाऐं अहम होती हैं।''[2]

शोध अध्ययनों में उत्तरदाताओं की सामाजिक सांस्कृतिक विशेषताओं का अध्ययन इसलिये भी आवश्यक है कि अगर हम उत्तरदाताओं की समस्याओं का अध्ययन गम्भीरता तथा सूक्ष्मता से करना चाहते हैं तो हमें उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक आदि सभी विशेषताओं का ज्ञान होना अत्यावश्यक है तभी हम उनकी समस्याओं के कारणों को ठीक से समझ सकेंगे। चूंकि शोधार्थी का शोध विषय क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की सामाजिक आर्थिक स्थिति से सम्बन्धित है अतः प्रस्तुत शोध अध्ययन में उनकी सामाजिक सांस्कृतिक तथा आर्थिक

---

1. मिश्रा पी.के. (1997) : मानव समाज की रूपरेखा विकास पबलीकेशन, जवाहर नगर, न्यू दिल्ली, पेज -37
2. श्री सतेन्द्र (1992:49)

विशेषताओं का अध्ययन अत्यावश्यक तथा महत्वपूर्ण हो जाता है। सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में कार्य-कारण सम्बन्धों की स्थापना तथा आर्थिक स्तरों के उत्तरदाताओं का अध्ययन करना सम्भव हो सके। अतः कार्य-कारण सम्बन्धों को स्थापित करने के लिये सामाजिक सांस्कृतिक विशेषताओं को जानना आवश्यक है। साथ ही इन कार्य-कारण सम्बन्धों का सामाजिक घटनाओं पर क्या प्रभाव पड़ता है, इन्हें जानना भी सरल हो जाता है क्योंकि व्यक्ति के रहन-सहन, चिन्तन, जीवनशैली आदि सभी पर उसके चारों ओर की भौतिक तथा सामाजिक विशेषताओं का प्रभाव अवश्य ही पड़ता है। कोई भी अनुसंधानकर्ता तभी सफल कहा जा सकता है जब इसमें सामाजिक घटना के सभी पहलुओं का अध्ययन गहनता से किया जायें। इसलिये शोध अध्ययन में उत्तरदाताओं की सभी विशेषताओं का अध्ययन करना अनिवार्य हो जाता है।

यदि हम शोध अध्ययनों में व्यक्ति की सामाजिक सांस्कृतिक विशेषताओं को नजर अंदाज कर दें तो फिर वह अध्ययन सामाजिक प्राणी (मनुष्य) का नहीं बल्कि जैवकीय प्राणी (मानव शरीर) का होगा और नितान्त अपूर्ण कहलायेगा। क्योंकि सामाजिक आर्थिक तथा जनांककीय सुचनाओं के बिना सामाजिक अनुसंधान की कल्पना उस जहाज से ही की जा सकती है जो बिना लक्ष्य के व्यर्थ चक्कर काटता रहता है। सुस्पष्ट है कि व्यक्ति सामाजिक सांस्कृतिक, आर्थिक, शैक्षिक, मनोवैज्ञानिक, पारिवारिक आदि सभी विशेषताओं का योग है। साथ ही सामाजिक तथ्यों के निरूपण के लिये भी इनका अध्ययन अनिवार्य हो जाता है। प्रत्येक सामाजिक अनुसंधान का आवश्यक परिणाम अध्ययन किय गये विषय के सम्बन्ध में निष्कर्ष प्रस्तुत करना तथा भविष्यवाणी करना होता है। परन्तु यदि हम विषय का सम्पूर्ण अध्ययन ही नहीं करेगे तो उससे प्राप्त निष्कर्ष सत्यता पर आधारित नहीं होगे तथा उनके आधार पर की गई भविष्यवाणी के गलत होने की सम्भावना बढ़ जायेगी। अतः शोध अध्ययन के वैज्ञानिक स्वरूप को बनाये रखने

के लिये परमावश्यक है कि चयनित उत्तरदाताओं की समस्त विशेषताओं का गहन अध्ययन किया जाये। किसी भी सामाजिक घटना का सूक्ष्म अध्ययन करके ही उसके निवारण के उपाय ढूंढने में सफलता मिलती है। इसलिये क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों की विभिन्न सामाजिक-आर्थिक स्थितियों का अध्ययन करने के दृष्टिकोण से अत्यावश्यक है कि उन निवासियों की सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, आर्थिक तथा शैक्षिक स्तर, मनोवैज्ञानिक, पारिवारिक आदि विशेषताओं का सूक्ष्म अध्ययन किया जाये तभी मानव व्यवहार को समझना सरल हो सकता है।

क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों के सुधार की नीति विचारणीय रूप से अधिक ग्रन्थिपूर्ण है क्योंकि नगर क्षेत्र में सामाजिक एवं आर्थिक सम्बन्धित ग्रामीण परम्परागत परिस्थितियों की तुलना में बहुत भिन्न तथा अधिक उलझे होते हैं। क्रेशर श्रमिकों का कल्याण (सुधार) अनेक कारकों पर निर्भर करता है। नीति निर्धारकों का अधिकांश समय नीति निर्धारण में लग जाता है क्योंकि कम तथा अनुपयुक्त सूचनाओं के कारण विशेषकर इन क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों के सम्बन्ध में; कोई भी नीति तब तक सार्थक लाभ प्रदान नहीं कर सकती जब तक उन प्राणियों के बारे में पर्याप्त तथ्य प्राप्त नहीं होते जिनके बारे में नीतियाँ निर्धारित की जाती हैं।

इस पृष्ठभूमि में इस आशय में उत्तरदाताओं के सम्बन्ध में उनकी सामाजिक, आर्थिक एवं जनांककीय विशेषताओं की पहचान करने का प्रयास किया गया है जो झांसी तथा ललितपुर नगर क्षेत्र में क्रैंशर उद्योग में कार्य करते हैं। इसके लिये जिसमें विभिन्न चरणां यथा- आयु, लिंग, मासिक आय, जाति, धर्म, वैवाहिक स्थिति, विवाह का स्वरूप, लड़के-लड़कियों की शादी की आयु, आवासीय दशाऐं, मकानों में उपलब्ध सुविधाऐं आदि सम्मिलित हैं। जिससे विभिन्न जातियों, धर्मो, लिंग, विभिन्न आयु-अन्तरालों, पृष्ठभूमि तथा विभिन्न सामाजिक

सांस्कृतिक क्रेशर मिल श्रमिकों की सामाजिक आर्थिक स्थिति पर व्यापक प्रकाश डालना भी सम्भव हो सके। अग्रलिखित तालिकाऐं स्वतंत्र चरों के सापेक्ष न्यादर्शो के वितरण तथा निर्धारण पर संक्षिप्त प्रकाश डालती हैं । यह सत्य है कि सामाजिक भूमिकाओं के निर्वहन एवं व्यक्ति की सोच तथा क्रियाओं में आयु की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। यही कारण है कि शोधार्थी ने क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों का अध्ययन करने के लिये चयनित उत्तरदाताओं की आयु संरचना को जानने का प्रयास किया है । सर्वेक्षण से प्राप्त प्राथमिक तथ्यों पर निम्नलिखित तालिका संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या - 1

उत्तरदाताओं की आयु संरचना सम्बन्धी विवरण

क्र.सं.	आयु-वर्ग	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	16-20	34 (10.24%)	5 (7.35%)
2.	21-25	55 (16.56%)	17 (25.00%)
3.	26-30	183 (55.12%)	34 (50.00%)
4.	31-35	30 (9.04%)	6 (8.82%)
5.	36-40	20 (6.02%)	4 (5.88%)
6.	41-45	10 (3.02%)	2 (2.95%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

प्रसंगाधीन उपरोक्त तालिका से अवलोकन से स्पष्ट है कि जनपद झाँसी के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 183 उत्तरदाता (55.12%) 26-30 वर्ष

आयु वर्ग के थे, और जनपद ललितपुर के 34 उत्तरदाता 50.00 प्रतिशत भी 26-30 आयु वर्ग के थे। यदि हम तुलानात्मक विवेचना करे तो दोनों ही जनपदों के खदानों के श्रमिक 16-30 आयु वर्ग के 85 प्रतिशत तथा 31-35 वर्ष के आयु वर्ग के मात्र 15 प्रतिशत ही श्रमिक थे।

प्रसंगाधीन प्रस्तुत तालिका उत्तरदाताओं के लिंगवार विवरण पर प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -2

उत्तरदाताओं का लिंगवार विवरण

क्र. सं.	लिंग	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	पुरूष	272 (81.92%)	51(75.00%)
2.	स्त्री	60 (18.08%)	17 (25.00%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से विदित होता है कि झाँसी खदान क्षेत्र के चयनित 272 पुरूष (81.92%) तथा 60 स्त्री (18.08%) स्त्री थी। तथा ललितपुर खदान क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं में से 51 पुरूष (75.00%) उत्तरदाता तथा 17 स्त्री (25.00%) उत्तरदाताऐं थी। जनपद झाँसी के क्रेशरों की तुलना में ललितपुर की खदानों में 7.00% स्त्री श्रमिक अधिक थी। क्योंकि ललितपुर में गरीबी अधिक थी।

प्रस्तुत तालिका चयनित न्यादर्शों के जातिवार वितरण पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -3

जाति उत्तरदाताओं के वितरण का विवरण

क्र. सं.	जाति	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	पिछड़ी जाति	7 0 (20.09%)	15 (22.06%)
2.	अनुसूचित जाति	262 (79.91%)	53 (77.94%)
3.	सामान्य जाति	-	-
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

प्रसंगाधीन उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि झांसी क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं में से 262 उत्तरदाता (79.91%) के तथा 53 (77.94%) ललितपुर जनपद के अनुसूचित जाति के थे। 15 श्रमिक ललितपुर खदान में (22.06%) तथा 7 0 श्रमिक (20.09%) झाँसी खदान के पिछड़ी जाति के थे। योग रूप में झांसी के 4 : 2 ललितपुर के श्रमिक क्रेशर उद्योग में कार्यरत थे क्योंकि इन वर्गों में ही अत्याधिक गरीबी पाई जाती है।

अग्रलिखित तालिका उत्तरदाताओं के परिवार के स्वरूपों का विवरण प्रस्तुत करती हैं :-

तालिका संख्या -4

उत्तरदाताओं के परिवार के स्वरूप का विवरण

क्र. सं.	परिवार	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	एकांकी	169 (50.90%)	37 (54.41%)
2.	संयुक्त	163 (49.10%)	31 (45.59%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झांसी के सर्वाधिक 169 श्रमिक (50.90%) तथा जनपद ललितपुर के 37 श्रमिक (54.41%) के परिवारों का स्वरूप एकांकी था। जिला ललितपुर में झांसी के श्रमिकों की तुलना में (8.82%) अधिक परिवार संयुक्त परिवारों में निवास करते थे।

तालिका संख्या -5

उत्तरदाताओं में वैवाहिक स्तर सम्बन्धी विवरण

क्र. सं.	वैवाहिक स्तर	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	विवाहित	297 (89.45%)	54 (79.42%)
2.	अविवाहित	-	7 (10.29%)
3.	विधवा/विधुर	35 (10.55%)	7 (10.29%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से विदित होता है कि झांसी के 297 श्रमिक (89.45%) तथा ललितपुर के 54 श्रमिक (79.42%) विवाहित थे जो झांसी जनपद से (10.42%) कम विवाहित थे। विधवा/विधुर का वैवाहिक स्तर दोनों जनपदों का लगभग समान ही था।

अग्रलिखित चयनित उत्तरदाताओं के विवाह के स्वरूप पर प्रकाश डालती है:-

तालिका संख्या -6

उत्तरदाताओं में विवाह के स्वरूप का विवरण

क्र. सं.	विवाह का स्वरूप	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	बाल विवाह	302 (90.04%)	61 (89.70%)
2.	विधवा विवाह	10 (3.32%)	2 (4.42%)
3.	पुर्न विवाह	20 (6.64%)	4 (5.88%)
4.	वे मैल विवाह	--	--
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

प्रसंगाधीन सारणी के अध्ययन से ज्ञात होता है कि झांसी जनपद क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं से 302 उत्तरदाताओं (90.04%) ने बाल विवाह किया था, 10 प्रतिशत ने विधवा विवाह किया, एवं 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं (6.64%) ने पुर्न विवाह किया था। ललितपुर के श्रमिकों में (89.70%) बाल विवाह, (5.88%) पुर्न विवाह तथा (4.42%) न विधवा विवाह किए थे। सुस्पष्ट है कि क्रेशर श्रमिकों में अधिकांश में बाल विवाह की प्रथा थी।

प्रस्तुत तालिका क्रेशर श्रमिकों की आवासीय स्थिति का ब्यौरा प्रस्तुत करती है :-

तालिका संख्या -7

उत्तरदाताओं की आवासीय स्थिति का विवरण

क्र. सं.	आवास	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	झोपड़ी	167 (50.30%)	33 (48.52%)
2.	कच्चा-पक्का	128 (38.55%)	25 (36.76%)
3.	पक्का	37 (11.15%)	10 (4.72%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि झांसी क्षेत्र के चुने गये उत्तरदाताओं में से 167 उत्तरदाता (50.00%) कच्ची झोपड़ी में निवास करते थे, 128 उत्तरदाताओं (38.55%) का आवास स्थल कच्चा/पक्का था तथा 37 उत्तरदाता (11.15%) प्रतिशत ही पक्के आवास में रहते थे। जबकि जनपद ललितपुर खदानों के 33 श्रमिक (48.52%) झोपड़ी में, 25 श्रमिक (36.76%) कच्चा/पक्का तथा 10 श्रमिक (4.72%) पक्के मकानों में निवास करते थे। दोनों ही जनपदों में क्रेशर श्रमिकों की आवासीय स्थिति एक समान थी।

प्रसंगाधीन अग्रलिखित तालिका में चयनित न्यादर्शों द्वारा लड़कों के विवाह की आयु पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -8

उत्तरदाताओं के लड़कों की शादी को आयु का विवरण

क्र. सं.	लड़कों के विवाह की आयु	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	15-17	68 (20.48%)	14 (20.58%)
2.	18-20	200 (60.23%)	52 (76.47%)
3.	21 वर्ष	64 (19.27%)	2 (2.95%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि झांसी जनपद के क्रेशर 200 श्रमिक (60.23%) तथा जनपद ललितपुर के 52 श्रमिक (76.47%) अपने पुत्रों की शादी 18-20 वर्ष की आयु वर्ग में करते थे। झांसी की तुलना में ललितपुर के श्रमिकों में (6.62%) अधिक शादी होती थी। दोनों ही जनपदों में (63.00%) विवाह 18-20 वर्ष में होते थे। इसका कारण विवाह अधिनियम में प्रदत्त दण्ड के प्रचार का अभाव, श्रमिकों की अशिक्षा तथा परम्परागत व्यवहार था।

प्रस्तुत सारणी में उत्तरदाताओं द्वारा लड़कियों की शादी की आयु के विवरण पर संक्षिप्त प्रकाश डाला गया है :-

तालिका संख्या -9

उत्तरदाताओं की लड़कियों की शादी की आयु का विवरण

क्र. सं.	पुत्री की विवाह आयु	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	15 वर्ष	221 (66.56%)	52 (76.47%)
2.	21 वर्ष	111 (23.44%)	14 (23.53%)
3.	21 वर्ष से ऊपर	--	--
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झांसी की खदानों में कार्यरत 221 श्रमिक (66.56%) अपनी पुत्रियों की शादी 15 वर्ष की आयु में तथा जनपद ललितपुर के 52 श्रमिक (76.47%) 15 वर्ष की आयु में रचाते थे। जनपद झांसी के श्रमिकों की तुलना में ललितपुर की क्रेशर मिलों के श्रमिकों में (9.95%) अधिक 15 वर्ष की आयु में लड़कियों की विवाह करते थे।

दोनों ही जनपद उ0प्र0 बुन्देलखण्ड में स्थिति हैं जहां सर्वाधिक पिछड़ापन है और उसके कारक हैं अशिक्षा, अन्धविश्वास गरीबी तथा महिला श्रम का सामुदायिक संचार की प्रवृत्ति। विवाह अधिनियम 1978 की जानकारी के प्रचार का अभाव तथा अधिनियम के उल्लंघन की पुलिस थाने में रिपोर्ट न करना आदि। सब मिलाकर दोनों जनपदों में (68.25%) खदानों के श्रमिकों के परिवारों में लड़की की शादी 15 वर्ष की आयु में की जाती थी।

♣♣♣

अध्याय -6

क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की सामाजिक स्थिति

प्रत्येक व्यक्ति का अपने समाज में एक विशेष समय में कोई न कोई स्थान अथवा पद अवश्य होता है। कोई उच्च पद पर आसीन होता है तो कोई निम्न पद पर। एक व्यक्ति एक क्षेत्र में महत्वपूर्ण पद पर हो सकता है तो दूसरे क्षेत्र में उसकी सामाजिक प्रस्थिति नीची हो सकती है। जैसे- सरकारी, साहूकारी, जमींदारी तथा मजदूरी करने वालों की सामाजिक प्रस्थिति। संयुक्त परिवार में दादा परिवार का मुखिया होने से सम्मानित एवं शक्तिशाली व्यक्ति माना जाता है जबकि वहीं व्यक्ति आफिस में चपरासी होने पर अधिकारी एवं लिपिक की तुलना में नीचा माना जाता है। एक दलित मेजर का स्थान सेना में ऊँचा है जबकि जाति व्यवस्था में नीचा। इस प्रकार एक व्यक्ति या व्यवसाय से जुड़े समूह का समाज में अपना कोई न कोई पद या प्रस्थिति को ही सामाजिक प्रस्थिति कहा जाता है, और एक प्रस्थिति धारण करने के फलस्वरूप व्यक्ति जिस प्रकार के कार्यो की समाज अपेक्षा करता है, उसे उसकी भूमिका कहते है। 'प्रत्येक समाज की संरचना एवं संगठन का निर्माण विभिन्न व्यक्तियों द्वारा धारण की गई सामाजिक प्रस्थितियों एवं भूमिकाओं के व्यवस्थिति संयोग से ही होता है।[1] इसलिये ही बीरस्टीज लिखते है कि, ''समाज सामाजिक प्रस्थितियों का जाल है।''[2]

आदि काल से ही मानव समाज में असमानता व्याप्त रही है ऐसा समाज जहाँ उसके सदस्यों में वास्तविक रूप में समानता हो और स्तरीकरण का अभाव हो, यह एक कोरी कल्पना है। मानव समाज के इतिहास में ऐसी स्थिति कभी नहीं

---

1. प्रो.गुप्ता एवं शर्मा (1998:197): समाज शास्त्र : प्रस्थिति एवं भूमिका, साहित्य भवन पब्लीकेशन, आगरा
2. सोसाइटी एज.ए नेट वर्क आफ स्टेटस. आर. बेरस्टेड, 'द सोसल आर्डर' पेज-211

रही। समनर की मान्यता है कि, "इतिहास में कभी भी ऐसा समय नहीं रहा जिसमें वर्ग घृणा उपस्थिति नहीं रही है।"[1] अनेक मानव शास्त्रियों ने आदिम समाजों की सामाजिक प्रस्थिति के अध्ययन में उल्लेख किया है किन्तु उनमें आज के समाज की भाँति सामाजिक विषमता का चाहे गहन रूप न रहा हो फिर भी कतिपयरूपों लिंग, आयु, जाति, सम्पत्ति के आधार पर समाज में उच्चता व निम्नता का भेद अवश्य रहा है।

जैसा कि गिटलर कहते हैं, "असमानता सभी संस्कृतियों की विशेषता है, यद्यपि एक समूह से दूसरे समूह में, एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति में असमानता का विस्तार एवं प्रकार में अन्तर पाया जाता है"[2] इस प्रकार सामाजिक प्रस्थिति जिसवर्ट के अनुसार, "समाज का उन स्थायी समूहों अथवा श्रेणियों में विभाजन है जो श्रेष्ठता एवं अधीनता के सम्बन्धों द्वारा सम्बद्ध होती है।"[3] तो दूसरी ओर आगवर्न एवं निकमांए के अनुसार, "सामाजिक प्रस्थिति के द्वारा व्यक्तियों एवं समूहों को थोड़े बहुत स्थायी प्रस्थितियों के उच्चता और निम्नता के क्रम में श्रेणीबद्ध किया जाता है"[4] उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सामाजिक प्रस्थिति द्वारा समाज विभिन्न उच्च एवं निम्न समूहों में विभाजित एवं व्यस्थिति होता है तथा ये समूह परस्पर एक दूसरे से जुड़े होते हैं और सामाजिक एकता को बनाये रखते हुए समाज में स्थिरता कायम रखते हैं।

<u>प्रस्थितियाँ :-</u>

प्रस्थिति की अवधारणा को समझने के लिए हम यहाँ विभिन्न विद्धानों द्वारा प्रस्तुत कुछ परिभाषाओं का उल्लेख करेंगे। एवं भूमिका को प्रध्यापकों एवं छात्रों की प्रस्थितियों एवं भूमिकाओं के सन्दर्भ में ही समझा जा सकता है।

---

1. समनर : द फोरगेटिंग मैन एण्ड ऐसेज, पृष्ठ -253
2. गिलटर : सोसल डायनेमिक्स
3. जिसवर्ट : फन्डामेन्टल आफ सोशियोलाजी, पृष्ठ -306
4. ओगवर्न निमकाफ : सोशियोलाजी, पृष्ठ, 167

एक ही प्रस्थिति एवं भूमिका का निर्वाह पृथक-पृथक व्यक्ति द्वारा अपने-अपने ढंग से किया जाता है। प्रधानमंत्री के रूप में पण्डित नेहरू, लालबहादुर शास्त्री, मोरारजी एवं इन्दिरा गांधी द्वारा समान ढंग से भूमिकाओं का निर्वाह नहीं किया गया।

प्रत्येक प्रस्थिति एवं भूमिका व्यक्ति के सम्पूर्ण सामाजिक पद का केवल एक भाग ही होता है। व्यक्ति समाज में एक साथ अनेक प्रस्थितियाँ प्राप्त करता है और विभिन्न अवसरों पर उनके अनुरूप ही अपनी भूमिका निभाता है। उदाहरणार्थ, एक ही व्यक्ति डॉक्टर, पिता-पति एवं पुत्र की विभिन्न प्रस्थितियों को धारण करता है और इनका निर्वाह अवसर आने पर इन्हीं के अनुरूप करता है।

प्रस्थिति एवं भूमिका के आधार पर सम्पूर्ण समाज विभिन्न प्रस्थिति समूहों में बंटा होता है। इन प्रस्थिति समूहों के आधार पर हम किसी समाज की विशेषताओं को ज्ञात कर सकते हैं। एक प्रस्थिति समूह की अपनी एक सी समस्याऐं विशेषताऐं, स्वार्थ, आदि होते हैं। अपने स्वार्थों की रक्षा के लिए कभी-कभी एक ही प्रस्थिति समूह में संगठन भी पाया जाता है। उदाहरणार्थ, पूँजीपति एवं श्रमिक प्रस्थिति समूह में अपने-अपने संगठन पाए जाते हैं।

प्रत्येक प्रस्थिति के साथ एक विशेष मूल्य एवं प्रतिष्ठा जुड़ी होती है जो संस्कृति द्वारा निर्धारित होती है, जैसे पश्चिमी देशों में भारत की अपेक्षा स्त्री की प्रतिष्ठा ऊँची है।

एक व्यक्ति एक ही समय में कई प्रस्थितियों को धारण करता है, किन्तु वह सभी का निर्वाह समान योग्यता एवं कुशलता के साथ नहीं कर पाता है। एक व्यक्ति अच्छा खिलाड़ी हो सकता है, किन्तु वह एक असफल व्यापारी और लापरवाह पति भी हो सकता है। एक व्यक्ति, समाज की प्रत्याशाओं अनुसार जितने उचित ढंग से अपनी भूमिकाएं निभाता है, उसकी समाज में उतने ही अनुपात में प्रतिष्ठा होती है।

समाज में उच्च एवं निम्न प्रस्थितियों के कारण ही सामाजिक संस्तरण तथा विभेदीकरण पैदा होता है जो उग्र या क्षैतिज रूप में हो सकता हैं

समाज में कुछ प्रस्थितियों प्रदत्त होती हैं जो एक व्यक्ति को समाज स्वयं प्रदान करता है और दूसरी ओर कुछ प्रस्थितियों व्यक्ति अपनी योग्यता एवं प्रयत्नों के द्वारा अर्जित करता है।

सामाजिक प्रस्थितियों के प्रकार-

सन् 1936 में राल्फ लिण्टन ने समाज में पायी जाने वाली प्रस्थितियों को प्रमुख रूप से दो भागों-प्रदत्त तथा अर्जित में विभक्त किया। हम यहाँ इन दोनों का ही उल्लेख करेंगे -

(i) प्रदत्त प्रस्थिति :-

समाज में कुछ प्रस्थितियां ऐसी होती हैं जो व्यक्ति के गुणों पर ध्यान दिये बिना ही उसको स्वतः ही प्राप्त हो जाती हैं। ये प्रस्थितियां व्यक्ति को किसी परिवार विशेष में जन्म लेने व परम्परा, आदि के कारण प्राप्त होती हैं और बच्चे को उस समय प्रदान कर दी जाती है जबकि उसके व्यक्तित्व के बारे में समाज कुछ भी नहीं जानता। समाज में प्रदत्त प्रस्थितियाँ पहले से ही मौजूद होती हैं जो नवीन जन्म लेने वाले प्राणी को प्रदान कर दी जाती हैं प्रस्थितियाँ बच्चे के द्वारा भविष्य में प्राप्त की जाने वाली प्रस्थितियों की सीमा तथा रूप भी निश्चित करती हैं। विश्व के सभो समाजों में प्रदत्त प्रस्थितियाँ पायी जाती हैं। प्रदत्त प्रस्थिति पर व्यक्ति का अपना कोई नियंत्रण नहीं होता, जैसे स्त्री या पुरूष होना, बालक या युवा होना, सुन्दर व कुरूप तथा लम्बा व छोटा होना। लिंग भेद, आयु, नातेदारी, प्रजाति, जाति, वैध एव अवैध सन्तान, परिवार में बच्चों की कुल संख्या, गोद लेने, माता-पिता की मृत्यु तथा विवाह -विच्छेद , आदि व्यक्ति की इच्छा का कोई ध्यान नहीं रखते हुए उसको एक प्रस्थिति प्रदान करते हैं। इन सबक आधार पर प्राप्त प्रस्थितियां प्रदत्त

प्रकार की होती हैं। आधुनिक समाजों की तुलना में आदिम एवं परम्परात्मक समाजों में प्रदत्त प्रस्थितियां अधिक पायी जाती हैं।

प्रदत्त प्रस्थिति के निर्धारण के आधार -

1. लिंग भेद - लगभग सभी संस्कृतियों में स्त्री एवं पुरूष की प्रस्थितियाँ एवं भूमिकाओं में अन्तर पाया जाता है। प्रायः स्त्रियों की तुलना में पुरूषों की प्रस्थिति ऊँची पायी जाती है। पश्चिमी संस्कृति में स्त्रियों को कमजोर, कोमल, भावुक, सहज विश्वासी, धार्मिक तथा एक विवाही माना जाता रहा है। भारत में स्त्रियों की प्रस्थिति पुरूषों से नीची रही है और उन्हें अबला, दासी एवं सम्पत्ति के रूप में समझा जाता रहा है। इसी कारण स्त्रियों को उच्च शिक्षा तथा व्यवसाय से पृथक रखा गया, उनको सम्पत्ति एवं राज्याधिकारों से वंचित किया गया तथा उन्हें पुरूषों के अधीन रखा गया। दूसरी ओर पुरूषों को साहस, वीरता, तर्क एवं शौर्य का प्रतीक माना गया है। कई आदिम समाजों में स्त्रियां धार्मिक एवं जादुई क्रियाओं में भाग नहीं ले सकतीं। नीलगिरी की टोडा जनजाति में स्त्रियों को भैंस पालन का कार्य करने की मनाही है। स्त्री एवं पुरूषों में श्रम विभाजन विभिन्न संस्कृतियों में समान नहीं है। एक समाज में एक प्रकार का कार्य पुरूषों के लिए निर्धारित है तो वहीं कार्य दूसरे समाज के स्त्रियों के लिए। स्त्री-पुरूषों में पायी जाने वाली शारीरिक रचना की भिन्नता भी उनके कार्यो में भिन्नता पैदा करती है। चूंकि नारी को प्रजनन का कार्य करना पड़ता है, अतः उसे कार्य सौंपे गये हैं जो प्रजनन की क्रिया के अनुकूल होते हैं। इस कारण ही उन्हें युद्ध, शिकार एवं शक्ति के कार्यो के स्थान पर बच्चों के लालन-पालन से सम्बन्धित एवं घरेलू कार्य सौंपे गये हैं।

स्त्री एवं पुरूषों की प्रस्थितियों में सांस्कृतिक कारणों से भी भिन्नता पायी जाती है। सदैव ही पुरूषों की तुलना में स्त्रियों को निम्न स्थान नहीं दिया जाता है। भारत में गोरो, खासी तथा नायर मातृ-सत्तात्मक परिवारों में पुरूषों की तुलना में

स्त्री की प्रस्थिति ऊँची है, वहीं परिवार की मुखिया होती है, सम्पत्ति एवं धार्मिक कार्यों में वहीं प्रधान होती है, वंश एवं उत्तराधिकार भी स्त्रियों के आधार पर ही तय किये जाते हैं। वर्तमान समय में स्त्री एवं पुरूषों को कुछ कार्यों को छोड़ कर शेष में समान रूप से नौकरी के अवसर प्रदान किये गये हैं।

2. आयु भेद - विश्व की सभी संस्कृतियों में आयु के आधार पर प्रस्थिति भेद पाया जाता है। आयु का विभाजन शिशु, बालक, युवा, प्रौढ़ एवं बृद्ध आदि स्तरों में किया जा सकता है। समाज में अलग-अलग आयु के लोगों को विभिन्न प्रस्थितियां प्रदान की जाती है तथा एक विशेष प्रस्थिति के लिए निश्चित आयु का होना भी आवश्यक है। बड़े भाई एवं छोटे भाई का भेद आयु पर आधारित है। प्रायः बच्चों की तुलना में बृद्ध लोगों को समाज में अधिक सम्मान दिया जाता है। इसका कारण आयु के अतिरिक्त यह भी है कि उन्हें जीवन का अनुभव अधिक होता है तथा वे परम्परा एवं संस्कृति के रक्षक माने जाते हैं। भारत के राष्ट्रपति के लिए कम से कम 35 वर्ष की आयु होना आवश्यक है। इसी प्रकार से मत देने, उम्मीदवार होने तथा सरकारी नौकरी प्राप्त करने के लिए एक निश्चित आयु प्राप्त करना आवश्यक है। हिन्दू संयुक्त परिवार का मुखिया वयोवृद्ध पुरूष ही होता है। भारत में ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ का विशुद्ध रूप तब दिखायी पड़ता है जब उस पद को प्राप्त करने के लिए अन्य तत्वों का कोई हाथ न हो।

3. नातेदारी - व्यक्ति को नातेदारी के आधार पर भी अनेक प्रस्थितियां प्राप्त होती हैं। एक व्यक्ति का अपने माता-पिता एवं रक्त सम्बन्धियों से सम्बन्ध होता है, उनसे सम्बन्धित होने के कारण ही वह अनेक प्रस्थितियाँ प्राप्त करता है। नातेदारी से सम्बन्धित प्रस्थितियाँ प्रदत्त होती हैं। क्योंकि हम, हमारे माता-पिता एवं भाई-बहिन का चयन नहीं करते। समाज में हमें कई पद माता-पिता के द्वारा ही प्राप्त होते हैं। राजा का पुत्र राजपद ग्रहण करता है, हम अपने माता-पिता का वर्ग, धर्म, और कभी-कभी बहिन, चाचा, मामा, जीजा, साला, दादा-दादी, सास-ससुर

आदि सभी प्रस्थितियाँ नातेदारी के आधार पर ही तय होती है। नातेदारी के साथ व्यक्ति के कुछ अधिकार एवं दायित्व भी जुड़े होते हैं।

4. जन्म - व्यक्ति का जन्म किस परिवार, जाति अथवा प्रजाति में हुआ है, इस आधार पर भी प्रस्थिति का निर्धारण होता है। शाही घराने व उच्च जाति में जन्म लेने वाले की सामाजिक प्रस्थिति निम्न परिवारों एवं अस्पृश्य जातियों के लोगों की तुलना में ऊँची रही है।

5. शारीरिक विशेषताऐं - कई प्रस्थितियाँ व्यक्ति को उसकी शारीरिक विशेषताओं के आधार पर प्रदान की जाती है। काले एवं कुरूप की तुलना में सुन्दर, निर्वल की तुलना में शक्तिशाली तथा बीमार, लूले-लगड़े एवं अपंग व्यक्ति की तुलना में स्वस्थ एवं सक्षम व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थिति ऊँची होती है।

6. जाति एवं प्रजाति - भारत में जाति व्यक्ति की प्रस्थिति निर्धारण का प्रमुख आधार है। ऊँची जातियों में जैसे ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य में जन्म लेने वाले की प्रस्थिति शूद्र एवं अछूत जातियों में जन्म लेने वाले से ऊँची समझी जाती है। इसी प्रकार काली एवं पीली प्रजाति की तुलना में गोरी प्रजाति के लोगों को सामाजिक प्रस्थिति ऊँची मानी जाती रही है। अमरीका तथा अफ्रीका में तो काली प्रजाति के लोगों को अनेक सामाजिक एवं राजनीतिक अधिकारों से वंचित रखा गया है। अमरीका में कोई भी नीग्रो अमरीका का राष्ट्रपति नहीं बन सकता।

(ii) अर्जित प्रस्थिति :

दूसरी ओर समाज में कुछ प्रस्थितियां ऐसी भी होती हैं जिन्हें व्यक्ति अपने गुण, योग्यता एवं क्षमता के आधार पर ग्रहण करता है। ये अर्जित प्रस्थितियां कहलाती है। हार्टन एवं हण्ट के अनुसार, "एक सामाजिक पद जिसे व्यक्ति अपनी इच्छा एवं प्रतिस्पर्द्धा के द्वारा प्राप्त करता है, अर्जित प्रस्थिति के नाम से जाना जाता है।" अर्जित प्रस्थितियों के लिए समाज में प्रतिस्पर्द्धा पायी जाती है और योग्य एवं सक्षम व्यक्ति इन प्रस्थितियों को प्राप्त कर लेते हैं। शिक्षा, व्यवसाय, सम्पत्ति संच

विवाह, श्रम विभाजन,आदि का सम्बन्ध अर्जित प्रस्थितियों से ही है । आधुनिक समाज में जहाँ जन्म के स्थान पर व्यक्ति के गुणों को अधिक महत्व दिया जाता है, अर्जित प्रस्थितियां अधिक पायी जाती है।

अर्जित प्रस्थिति के निर्धारण के आधार -

1. सम्पत्ति व्यक्ति के पद का निर्धारण करने में सम्पत्ति एक महत्वपूर्ण कारक है । सम्पत्ति पर अधिकार होने या न होने के आधार पर ही व्यक्ति की ऊँची या नीची प्रस्थिति होती है । अक्सर गरीब की तुलना में पूंजीपति की सामाजिक प्रस्थिति ऊँची होती है । आधुनिक युग में जिन लोगों के पास भौतिक सुख-सुविधाऐं अधिक हैं, वे ऊँचे माने जाते हैं।

2. व्यवसाय - व्यवसाय भी व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थिति निर्धारित करता है। आई0ए0एस0, डाक्टर, इंजीनियर आदि का पद चपरासी, मिल मजदूर, कृषक एवं जूते ठीक करने वाले से ऊँचा माना जाता है।

3. शिक्षा- अशिक्षित की तुलना में शिक्षित का तथा कम पढ़े-लिखे व्यक्ति की तुलना में बी0ए0, एम0ए0 तथा अन्य डिप्लोमा और प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति की प्रस्थिति ऊँची होती है।

4. राजनीतिक सत्ता - राजनीतिक सत्ता के आधार पर ही शासन एवं शासित में भेद किया जाता है। साधारण जन की अपेक्षा सत्ता एवं राजनीतिक अधिकार प्राप्त व्यक्ति की प्रस्थिति ऊँची होती है । प्रजातंत्र में शासक दल से सम्बन्धित लोगों एवं विरोधी दल के प्रमुख नेताओं की सामाजिक प्रस्थिति ऊँची होती है।

5. विवाह - विवाह भी व्यक्ति को कई प्रस्थितियाँ प्रदान करता है । विवाह करने पर ही पति-पत्नी, माता-पिता एवं अन्य प्रस्थितियाँ जैसे जीजा, जंवाई, बहू, भाभी, आदि प्राप्त की जाती है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन - ''क्रेशर श्रमिकों की सामाजिक स्थिति'' उपरोक्त विवरणात्मक संदर्भ में शोधकर्ता के द्वारा वर्तमान में क्रेशर श्रमिकों की

सामाजिक स्थिति जानने के उद्देश्य से जिस साक्षात्कार अनुसूची को प्रयोग में लाया गया है, उसमें क्रमशः आवासीय सुविधाऐं, वस्त्रों के प्रकार, सामाजिक संघों की सदस्यता, पहचान, कार्य की स्वतंत्रता, सामाजिक सुरक्षा के साधन, रहन-सहन का स्तर, जीवन गुणवत्ता, मनोरंजन एवं सूचना स्रोत तथा मिल-मालिकों के व्यवहार के प्रतिमान आदि मानकों के आधार पर प्राप्त तथ्यों एवं स्वयं के अवलोकनों को तालिकाबद्ध कर सामान्य सांख्यिकीय तकनीकी का प्रयोग कर जो विश्लेषण एवं विवेचन किया गया है वह निम्नवत् है :-

तालिका संख्या - 10

उत्तरदाताओं का आवासीय सुविधाओं सम्बन्धी विवरण

क्र.	सुविधाऐं	जनपद					
		झाँसी			ललितपुर		
		हाँ	नहीं	योग	हाँ	नहीं	योग
1.	विद्युत आपूर्ति	73 (21.99%)	259 (78.01%)	332 (100%)	17 (25.00%)	51 (75.00%)	68 (100%)
2.	आंगन	71 (21.39%)	261 (78.61%)	332 (100%)	15 (22.06%)	53 (77.94%)	68 (100%)
3.	शौचालय	42 (12.66%)	290 (87.34%)	332 (100%)	8 (11.77%)	60 (88.23%)	68 (100%)
4.	भोजन कक्ष	83 (25.00%)	249 (75.00%)	332 (100%)	16 (23.52%)	52 (76.48%)	68 (100%)
5.	स्नानगृह	37 (11.15%)	295 (88.85%)	332 (100%)	3 (5.42%)	65 (94.58%)	68 (100%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि झांसी जनपद के चयनित उत्तरदाताओं में, से सर्वाधिक 295 उत्तरदाताओं (88.85%) के घरों में स्नानग्रह, उन्हीं में से (87.34%) के आवास में पृथक से 'शौचायल', (78.61%) के घरों में

आंगन, (78.01%) के घर में विद्युत अपूर्ति तथा (75.00%) के घरों में पृथक से 'भोजन कक्षों' का सर्वाधिक अभाव था। इसके विपरीत जनपद ललितपुर के 68 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 65 उत्तरदाताओ (95.58%) के घरों में 'स्नानग्रह' का (88.23%) के आवसों में 'शौचालय' का, (77.94%) के घरों में अलग से 'आंगन' का, (76.48%) के मकानों में 'भोजन कक्ष' का तथा (75.00%) के मकान में विद्युत आपूर्ति की सुविधा नहीं थी। सारांश यह है कि जनपद झांसी क्षेत्र के क्रेशर श्रमिकों के आवासों में औसतन (81.14%) के घरों में क्रमशः विद्युतापूर्ति, स्नानगृह, भोजन कक्ष, शौचालय तथा पृथक से भोजनालय की सुविधा नहीं थी इसी प्रकार जनपद ललितपुर क्षेत्र के क्रेशर श्रमिकों के आवासों में औसतन (82.11%) के घरों में उपरोक्त सुविधाऐं नहीं थी। स्थिति दोनों जनपदों के उत्तरदाताओं की आवासी सुविधाऐं एक समान ही अभाव की थीं।

प्रस्तुत तालिका उत्तरदाताओं के वस्त्रों के प्रकार पर प्रकाश डालती है-

तालिका संख्या -11

उत्तरदाताओं का वस्त्रों के प्रकार सम्बन्धी विवरण

क्र. सं.	सुविधाऐं	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	ठेल वाले	209 (62.95%)	56 (82.35%)
2.	नये	76 (22.89%)	9 (13.23%)
3.	प्रयोग किये हुए	47 (14.16%)	3 (4.42%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

झाँसी एवं ललितपुर क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं से जब पूछा गया कि किस तरह के वस्त्र पहनते हैं, तब ज्ञात हुआ कि झांसी के 209 उत्तरदाता (62.95%) प्रतिशत ठेले वालों से सस्ती दर के कपड़े खरीद कर पहनते थे, इसी प्रकार 76

उत्तरदाता (22.89%) प्रतिशत नये एवं 47 उत्तरदाता (14.16%) प्रतिशत दूसरों के उपयोग किये हुऐ कपड़े पहनते थे। इसके विपरीत ललितपुर खदानों के 56 उत्तरदाता (82.35%) ठेले वाले वस्त्र, 9 उत्तरदाता (13.23%) नये वस्त्र तथा 3 उत्तरदाता (4.42%) प्रयोग किए गये वस्त्र पहिनते थे। तुलानात्मक रूप से ललितपुर के श्रमिक झांसी के श्रमिकों की तुलना में (19.40%) अधिक ठेले वाले कपड़े पहिनते थे और ललितपुर की तुलना में झांसी के श्रमिक (9.66%) अधिक नये कपड़े तथा (9.74%) प्रयोग किए गये कपड़े पहिनते थे।

निम्नलिखित तालिका उत्तरदाताओं की विभिन्न संस्थानों की सदस्यता सम्बन्धी अध्ययन पर आधारित है :-

तालिका संख्या -12

उत्तरदाताओं का विभिन्न संस्थानों की सदस्यता सम्बन्धी विवरण

क्र. सं.	सुविधाऐं	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	संस्था के	63 (18.89%)	-
2.	समिति के	41 (12.34%)	8 (11.76%)
3.	संघ के	10 (3.12%)	4 (5.88%)
4.	पंचायत के	22 (6.62%)	-
5.	किसी के नहीं	196 (59.03%)	56 (82.36%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

चयनित उत्तरदाताओं का सामाजिक सदस्यता सम्बन्धी अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि झांसी के उत्तरदाताओं में से 59.03 प्रतिशत उत्तरदाता किसी के सदस्य नहीं थे जबकि ललितपुर क्षेत्र के 56 उत्तरदाता 82.36 प्रतिशत किसी भी संस्था के सदस्य नहीं थे। झांसी के 41उत्तरदाता 12.34 प्रतिशत समितियों के,

6.60 प्रतिशत उत्तरदाता पंचायतों के तथा 10 उत्तरदाता 3.12 प्रतिशत संघ के सदस्य और 18.99 प्रतिशत संस्थाओं के सदस्य थे। इसके विपरीत ललितपुर क्षेत्र के उत्तरदाता संस्था, पंचायत आदि के सदस्य नहीं थे।

निम्नलिखित तालिका उत्तरदाताओं का समाज में समारोह आदि में तथा किसी समस्या के हल करने में समाज का सदस्य होने के नाते पूछे जाने का विवरण प्रस्तुत करती है

तालिका संख्या - 13

उत्तरदाताओं की सामाजिक पहिचान सम्बन्धी विवरण

क्र. सं.	पहिचान	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	हाँ	42 (12.66%)	4 (5.88%)
2.	नहीं	290 (87.34%)	64 (94.12%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

प्रस्तुत तालिका से विदित होता है कि जब झांसी के उत्तरदाताओं से पूछा गया कि क्या उन्हें सामाजिक समस्याओं के हल/समारोह में पूछा जाता है, तब ज्ञात हुआ कि मात्र 290 उत्तरदाताओं 87.34 प्रतिशत को सामाजिक समस्याओं के हल/समारोह में नहीं पूछा जाता था जबकि ललितपुर के 64 उत्तरदाताओं 94.12 प्रतिशत ने बताया कि उनको समाज में किसी समस्या के हल करने में एवं समारोह आदि में नहीं पूछा जाता है। सुस्पष्ट है कि समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा होने पर भी अधिकांश दोनों जनपदों के श्रमिकों के सामाजिक महत्व के किसी भी अवसर पर नहीं पूछा जाता था।

प्रस्तुत तालिका उत्तरदाताओं की स्वतन्त्रता सम्बन्धी विवरण पर प्रकाश डालती है -

तालिका संख्या - 14

उत्तरदाताओं की स्वतन्त्रता सम्बन्धी विवरण

क्र. सं.	स्वतन्त्रता	जनपद			
		झाँसी		ललितपुर	
		हाँ	नहीं	हाँ	नहीं
1.	कार्य करने की स्वतंत्रता	95 (28.61%)	237 (71.39%)	29 (42.64%)	39 (57.36%)
2.	अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता	104 (31.32%)	228 (68.68%)	27 (39.70%)	41 (60.29%)
3.	न्याय की स्वतंत्रता	84 (31.32%)	248 (74.70%)	12 (17.76%)	56 (82.24%)
	कुल योग	332 (100.00%)		68 (100.00%)	

प्रसंगाधीन तालिका से विदित होता है कि झांसी जनपद के 332 उत्तरदाताओं में से 237 उत्तरदाताओं (71.39%) प्रतिशत को कार्य करने की स्वतंत्रता, 228 उत्तरदाता (68.68%) को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता तथा 248 उत्तरदाताओं (74.70%) प्रतिशत को न्याय की स्वतंत्रता प्राप्त नहीं थी। इसी प्रकार जनपद ललितपुर के सर्वाधिक 39 उत्तरदाताओं (57.36%) को कार्य करने की स्वतंत्रता नहीं थी। जब उनसे अभिव्यक्ति तथा न्याय की स्वतंत्रता के बारे में पूछा गया तो क्रमशः 41 उत्तरदाताओं (60.29%) ने अभिव्यक्ति की तथा 563 उत्तरदाताओं (82.24%) ने न्याय की स्वतंत्रता होने को मना किया।

उपरोक्त दोनों जनपदों के उत्तरदाताओं में सर्वाधिक जीवन गुणवत्ता का अभाव था। वे स्वतंत्रता के 60 वर्ष बाद भी कार्य-अभिव्यक्त तथा न्याय की स्वतंत्रता से वंचित थे।

प्रस्तुत तालिका उत्तरदाताओं की सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी अध्ययन पर प्रकाश डालती है-

तालिका संख्या -15

उत्तरदाताओं की सामाजिक सुरक्षा सम्बन्धी विवरण

क्र. सं.	सामाजिक सुरक्षा के उपाय	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	बीमा	42 (12.65%)	-
2.	मासिक बचत	70 (21.08%)	15 (22.05%)
3.	मासिक आय योजना	3 (0.90%)	2 (2.95%)
4.	कुछ नहीं	217 (65.36%)	51 (75.00%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि जनपद झांसी के 332 चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 217 उत्तरदाता (65.36%) की सामाजिक सुरक्षा का कोई साथ नहीं था। इसके विपरीत ललितपुर के (75.00%) उत्तरदाता की कोई सामाजिक सुरक्षा नहीं थी। झांसी जनपद के (21.08%) उत्तरदाताओं 'मासिक बचत' करते थे जबकि ललितपुर के (22.05%) उत्तरदाता मासिक बचत करते थे। झांसी के (12.65%) उत्तरदाताओं का "बीमा" था जबकि ललितपुर के किसी भी उत्तरदाता का जीवन बीमा नहीं था। झांसी के उत्तरदाताओं (0.90%) मासिक आय के साधन थे तो ललितपुर के (2.95%) उत्तरदाताओं की मासिक आय

की योजना थी। सारांश यह है कि दोनों जनपदों के उत्तरदाताओं की सामाजिक सुरक्षा का कोई साधन नहीं था।

निम्नांकित तालिका उत्तरदाताओं की जीवन गुणवत्ता सम्बन्धी अध्ययन पर आधारित है -

तालिका संख्या - 16

उत्तरदाताओं की जीवन गुणवत्ता सम्बन्धी विवरण

क्र.	जीवन गुणवत्ता	जनपद				कुल योग (प्रतिशत)
		झाँसी		ललितपुर		
		सन्तुष्टि	असन्तुष्टि	सन्तुष्टि	असन्तुष्टि	
1.	आराम की	115 (34.63%)	217 (65.37%)	4 (5.89%)	64 (94.11%)	400 (100.00%)
2.	प्रसन्नता की	196 (59.02%)	136 (40.96%)	23 (33.73%)	45 (66.17%)	400 (100.00%)
3.	स्वास्थ्य की	207 (62.34%)	125 (37.66%)	34 (50.00%)	34 (50.00%)	400 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि झांसी क्षेत्र के सर्वाधिक 217 उत्तरदाता (65.37%) विश्राम की दृष्टि सन्तुष्ट नहीं थे। मन प्रसन्न की दृष्टि से 196 उत्तरदाता (59.02%) जीवन से संतुष्ट थे तथा 207 उत्तरदाता (62.34%) अपने स्वास्थ्य स्थिति से सन्तुष्ट थे। इसके विपरीत ललितपुर के उत्तरदाता सर्वाधिक 64 (94.11%) अपने द्वारा किए आराम से असंतुष्टि थे, 45 उत्तरदाता (66.17%) अपने कार्य जीवन से असंतुष्ट थे तथा (50.00%) उत्तरदाता अपने वर्तमान स्वास्थ्य स्थिति से संतुष्ट थे। जनपद झांसी क्षेत्र की तुलना में ललितपुर क्षेत्र के उत्तरदाताओ की जीवन गुणवत्ता असंतुष्टपूर्ण थी।

तालिका संख्या -17

उत्तरदाताओं के मनोरंजन के साधनों सम्बन्धी विवरण

क्र. सं.	मनोरंजन के साधन	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	रेडियो	167 (50.31%)	17 (25.00%)
2.	टी0वी0	15 (4.51%)	6 (8.83%)
3.	सिनेमा	31 (9.33%)	8 (11.76%)
4.	कोई नहीं	119 (35.85%)	37 (54.41%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से विदित होता है कि झाँसी जनपद के चयनित 332 उत्तरदाताओं में से 167 उत्तरदाताओं (50.31%) प्रतिशत के मनोरंजन का साधन रेडियो था, 31उत्तरदाताओं (9.33%) प्रतिशत के मनोरंजन का स्रोत सिनेमा तथा 15 उत्तरदाताओं (4.51%) प्रतिशत के मनोरंजन का साधन टी0वी0 था जबकि 119 उत्तरदाताओं (35.85%) प्रतिशत के पास मनोरंजन का कोई भी साधन नहीं था। इसके विपरीत जनपद ललितपुर के चयनित 68 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 37 उत्तरदाताओं (54.41%) के पास कोई आधुनिक मनोरंजन का साधन नहीं था। केवल 17 उत्तरदाताओं (25.00%) के पास रेडियो, 8 उत्तरदाताओं (11.76%) के पास सिनेमा देखना तथा 6 उत्तरदाताओं(8.83%) के पास टी0वी0 मनोरंजन का साधन था। तुलनात्मक अध्ययन में झांसी के उत्तरदाताओं में (25.00%) ललितपुर के उत्तरदाताओं से अधिक के पास रेडियो था तथा (18.56%) ललितपुर के उत्तरदाताओं पर झांसी की तुलना में मनोरंजन का कोई साधन नहीं था।

प्रसंगाधीन तालिका उत्तरदाताओं के सूचना स्रोतों पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है-

तालिका संख्या - 18

उत्तरदाताओं के सूचना स्रोत सम्बन्धी विवरण

क्र. सं.	सूचना स्रोत	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	रेडियो	166 (50.00%)	17 (25.00%)
2.	टी0वी0/समाचार पत्र	15 (4.51%)	6 (8.83%)
3.	नाई, नेता सरकारी तंत्र	120 (36.16%)	23 (33.82%)
4.	अन्य स्रोत	31 (9.33%)	22 (32.35%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से सुस्पष्ट है कि झांसी जनपद के 332 चयनित उत्तरदाताओं में से 166 उत्तरदाताओं (50.00%) प्रतिशत का सूचना स्रोत रेडियो था, 120 उत्तरदाताओं (36.16%) प्रतिशत को नाई, नेता तथा सरकारी तंत्र द्वारा सूचनाऐं प्राप्त होती थीं, 15 उत्तरदाताओं (4.51%) प्रतिशत का सूचना स्रोत टी0वी0/समाचार पत्र तथा 31 उत्तरदाता (9.33%) अन्य स्रोतों से सूचनाऐं ग्रहण करते थे । इसी प्रकार जनपद ललितपुर के 68 चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 23 उत्तरदाता (33.82%) नाई-नेता तथा सरकारी तंत्र से सूचनाऐं प्राप्त करते थे, 22 उत्तरदाता (32.35%) अन्य स्रोतों से, 17 उत्तरदाता (25.00%) रेडियो से तथा 6 उत्तरदाता (8.83%) टी0वी0/समाचार पत्र से सूचना ग्रहण करते थे । तुलनात्मक विवेचना करे तो (25.00%) उत्तरदाता

झांसी के ललितपुर की तुलना में रेडियों से तथा (23.02%) ललितपुर के झांसी जनपद की तुलना में अधिक अन्य स्रोतों से सूचनाऐं एकत्र करते थे।

प्रस्तुत तालिका उत्तरदाताओं के आवागमन के साधनों का ब्यौरा प्रस्तुत करती हैं :-

तालिका संख्या - 19

उत्तरदाताओं के आवागमन के साधन सम्बन्धी विवरण

क्र. सं.	आवागमन का साधन	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	साईकिल	217 (65.36%)	54 (79.41%)
2.	मोपेड	13 (3.91%)	3 (4.41%)
3.	स्कूटर	7 (2.10%)	1 (1.48%)
4.	कुछ नहीं	95 (28.63%)	10 (14.70%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%

प्रसंगाधीन तालिका के अवलोकन से विदित होता है कि झांसी जनपद के 332 चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 217 उत्तरदाताओं (65.36%) प्रतिशत के आवागमन का साधन साईकिल था जबकि 95 उत्तरदाताओं (28.63%) प्रतिशत के पास आवागमन के लिये स्वयं का कोई साधन उपलब्ध नहीं था। इसी प्रकार मात्र 13 (3.91%) प्रतिशत के पास मोपेड तथा (2.10%) प्रतिशत के पास आवागमन के साधन रूप में स्कूटर था। इसके विपरीत जनपद ललितपुर के 68 चयनित उत्तरदाताओं में से 54 उत्तरदाताओं (79.41%) के पास साईकिल, (14. 70%) के पास 'कुछ नहीं', (4.41%) के पास मोपेड तथा (1.48%) के पास स्कूटर था। तुलनात्मक विवेचना करने पर ज्ञात होता है कि लगभग (14.00%)

झाँसी की तुलना में ललितपुर के पास आवागमन का कोई साधन नहीं था। ऐसा उनकी गरीबी के कारण था।

प्रसंगाधीन तालिका उत्तरदाताओं के साथ क्रेशर मालिकों के व्यवहार प्रतिमान पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -20

उत्तरदाताओं के साथ क्रेशर मालिकों के व्यवहार का विवरण

क्र. सं.	व्यवहार का प्रतिमान	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	घर के मुखिया जैसा	37 (11.14%)	2 (2.95%)
2.	मजदूरों जैसा	260 (78.31%)	51 (75.00%)
3.	सामान्य व्यवहार	15 (4.53%)	10 (14.70%)
4.	शोषण का	20 (6.02%)	5 (7.35%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि जब झांसी जनपद के 332 चयनित उत्तरदाताओं से पूछा गया कि क्रेशर मालिक का उनके प्रति व्यवहार कैसा है, तब ज्ञात हुआ कि 260 उत्तरदाता (78.31%) प्रतिशत मानते थे कि उनके प्रति मिल मालिक का व्यवहार मजदूरों जैसा था, 15 उत्तरदाताओं (4.53%) प्रतिशत के अनुसार सामान्य व्यवहार तथा 20 उत्तरदाताओं (6.02%) प्रतिशत के मतानुसार मिल मालिक का उनके प्रति व्यवहार शोषण का था तथा 37 उत्तरदाताओं (11.14%) प्रतिशत के अनुसार क्रेशर मालिक का उनके प्रति व्यवहार घर के मुखिया की तरह था। इसके विपरीत जनपद ललितपुर के चयनित 68 उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 51 उत्तरदाताओं (75.00%) ने मालिकों का

उनके प्रति व्यवहार 'मजदूरों' जैसा बताया । (14.70%) ने 'सामान्य व्यवहार', (7.35%) ने 'शोषण का व्यवहार' तथा (2.95%) ने घर के मुखिया की भांति व्यवहार बताया । तुलनात्मक विवेचन यह है कि (8.19%) उत्तरदाताओं के प्रति ललितपुर की तुलना में झांसी के उत्तरदाताओं के प्रति मालिकों का व्यवहार घर जैसा था । तथा (10.17%) ललितपुर की तुलना में झांसी जनपद के उत्तरदाताओं के साथ मिल-मालिकों का सामान्य व्यवहार अधिक था ।

अध्याय -7

क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति

आदि काल से ही मानव समाज में असमानता व्याप्त रही है। ऐसा समाज जहाँ उसके सदस्यों में वास्तविक रूप में समानता हो और स्तरीकरण का अभाव हो एक कोरी कल्पना है। मानव समाज में कभी भी ऐसा काल नहीं रहा जिसमें वर्ग घृणा उपस्थिति नहीं रहीं। इस प्रकार समाज में व्यक्ति अपने औदक नीचे स्तर में बटे रहते हैं। कोई उच्च आर्थिक स्थिति कोई निम्न स्थिति पर रह जाता है। फलतः समाज आर्थिक दृष्टि से अनेक वर्गो में बंट जाता है और जो जिसका स्तर या सोपान होता है। उसे ही उस व्यक्ति या व्यक्तियों की प्रस्थिति कही जाती है। वरिस्टीड ने ठीक ही कहा कि समाज सामाजिक प्रस्थितियों का जाल है। अनेक प्रस्थिति व्यवस्थिति रूप से मिलकर ही सम्पूर्ण समाज का निर्माण करती है।''

अर्थ की स्थिति के दृष्टिकोण से जिसवर्ट उस वर्ग को व्यक्तियों अथवा एक विशेष श्रेणी बताता है अन्य जिसकी एक विशेष आर्थिक स्थिति होती है। यह विशेष स्थिति ही अन्य समूहों से उनके सम्बन्ध को निर्धारित करती है। उपरोक्त परिभाषाऐं इस बात को स्पष्ट करती हैं कि समान आर्थिक स्थिति वाले समूह ही समाज में वर्गो का निर्माण करते हैं क्लर्क, व्यापारी, कृषक, मजदूर की आर्थिक प्रस्थिति समाज में भिन्न-भिन्न होने से ही ये अलग-अलग प्रकार के वर्ग बन गये हैं।''

1. समूहों का उतार-चढ़ाव : समाज में व्यक्तियों की एक श्रेणी होती है जिसमें कुछ वर्ग के ऊपर एवं कुछ वर्ग के मध्यम एवं कुछ वर्ग निम्न स्थान पर होते

हैं । उच्च वर्ग के लोगों की सामाजिक प्रतिष्ठा एवं शक्ति अन्य वर्गो की तुलना में सर्वाधिक होती है।

2. समान प्रस्थिति : एक वर्ग के लोगों की आर्थिक स्थिति एक समान होती है।

3. ऊँच-नीच की भावना : एक वर्ग के लोग दूसरे वर्ग के प्रति उच्चता या हीनता की भावना रखते हैं तथा अपने वर्ग के प्रति उनमें हम की भावना पायी जाती है । सम्पन्न वर्ग के लोग गरीब वर्गो को अपने से हीन समझते हैं तथा निर्धन लोग धनी वर्ग का अपने से ऊँचा समझते हैं।

4. वर्ग चेतना : प्रत्येक वर्ग के लोगों में वर्ग चेतना पाई जाती है, प्रत्येक वर्ग की सामाजिक प्रतिष्ठा दूसरे से भिन्न होती है । उनमें उच्चता निम्नता या समानता की भावना पाई जाती है । एक वर्ग के लोगों की जीवन शैली, खान-पान, सुख-सुविधाऐं समान होने एवं बचपन से ही उसके सदस्यों का समाजीकरण उस वर्ग के अनुरूप होने से उस वर्ग के लोगों में अपने वर्ग के प्रति चेतना का निर्माण होता है। वर्ग चेतना के आधार पर ही मजदूर वर्ग के लोग अपना वेतन, मँहगाई भत्ता, बोनस, मकान किराया, काम के घण्टे, भर्ती पद्धति आदि माँगों को लेकर एक जुट होकर हड़ताल एवं प्रदर्शन करते हैं और अपने हितों की रक्षा के लिए वे परस्पर सहयोग करते हैं।

5. सीमित सामाजिक सम्बन्ध : एक सी समान आर्थिक स्थिति के लोगों के सामाजिक सम्बन्ध प्रायः अपने ही वर्ग के लोगों तक सीमित होते हैं और अन्य वर्गो से एक निश्चित दूरी बनाए रखते हैं। वे अपने ही वर्ग के संगी साथी जीवन साथी आदि का चुनाव करते हैं।

6. मुक्तद्वार : आर्थिक स्थिति जाति की भांति कठोर एवं बन्द न होकर एक मुक्त स्थिति होती है । इसका अर्थ यह है कि निम्न आर्थिक स्थिति वाला व्यक्ति मध्यम तथा माध्यम स्थिति का व्यक्ति निम्न आर्थिक प्रस्थिति पर।

7. जन्म का महत्व नहीं : एक आर्थिक स्थिति का व्यक्ति उसी वर्ग का सदस्य होगा जिसमें उसका जन्म हुआ है, यह आवश्यक नहीं है । आर्थिक स्थिति निश्चित करने में व्यक्ति की शिक्षा, योग्यता, सम्पत्ति तथा कुशलता भी महत्वपूर्ण पक्ष है। आर्थिक स्थिति जन्म से सदा के लिए निर्धारित नहीं होती।

8. पूर्णतया अर्जित : क्योंकि व्यक्ति की आर्थिक स्थिति जन्म से निर्धारित नहीं होती अतः यह अर्जित है । एक व्यक्ति अपने गुणों, शिक्षा एवं धन में वृद्धि करके उच्च वर्ग की सदस्यता ग्रहण कर सकता है।

आर्थिक स्थिति के प्रकार : सामान्यतः व्यक्ति की आर्थिक स्थिति तीन प्रकार की होती है। जो निम्नवत् हैं :-

1. उच्च आर्थिक स्थिति - समाज में कुछ व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति अपेक्षाकृत उच्च होती है । इन उच्च वर्ग के लोगों की सामाजिक प्रतिष्ठा तथा शक्ति अन्य वर्गो से अधिक होती है । समाज में इनकी जीवनशैली, रहन-सहन के ढंग, फैशन आदि को कौतूहल के रूप में देखा जाता है तथा प्रायः इनके जैसी जीवन शैली की चाहत प्रत्येक महत्वाकांक्षी व्यक्ति में होती है। इसके विपरीत इस वर्ग के लोग अन्य वर्गो के लोगों को हीन समझते हैं। इस वर्ग के लोगों में दिखावटीपन सर्वाधिक होता है। साथ ही, इस वर्ग के लोगों की शासनसत्ता में अच्छी पैठ होती है।

2. मध्यम आर्थिक स्थिति - मध्यम आर्थिक स्थिति वाले व्यक्तियों का समूह मध्यम वर्ग का निर्माण करता है ।यह बीच की आर्थिक स्थिति वाला समूह है अर्थात् इस वर्ग की आर्थिक स्थिति न तो बहुत उच्च होती है और न ही बहुत निम्न।

3. निम्न आर्थिक स्थिति - जिन व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति अन्य दो वर्गो की तुलना में निम्न होती है, उनके समूह को निम्न वर्ग कहा जाता है। इस वर्ग के लोगों की आर्थिक स्थिति दयनीय होती है जो इनके रहन-सहन के ढंग

तथा जीवन शैली में स्पष्टतः परिलक्षित होती है। श्रमिक वर्ग इसी आर्थिक स्थिति का प्रतिनिधित्व करती है। इनके पास न तो विशेष सामाजिक प्रतिष्ठा होती है और न ही शासन सत्ता में इनका विशेष हस्तक्षेप ही होता है। समाज में भौतिक संस्कृति की वृद्धि तथा औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप समाज का विभाजन व्यक्ति की सामाजिक स्थिति, राजनीतिक स्थिति एवं आर्थिक स्थिति के आधार पर या तीनों के सम्मिलित रूप से होता है। आज समाज में अर्थ का बोलवाला है। व्यक्ति की आर्थिक स्थिति क्या होगी, यह अनेक कारकों पर निर्भर करता है, जिनका उल्लेख इस प्रकार है :-

1. आर्थिक कारक - व्यक्ति की आर्थिक स्थिति को निर्धारित करने में आर्थिक कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका है। ये वे कारक है जो किसी भी व्यक्ति की आर्थिक स्थिति को निश्चित करते हैं :-

अ- सम्पत्ति - आज के भौतिकवादी युग में धन सम्पदा ही व्यक्ति की आर्थिक स्थिति को तय करती है। धन के आधार पर ही उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग व निम्न वर्ग श्रेणीबद्ध होते हैं। धन वास्तव में शक्ति का स्वरूप है, अतः इसका बहुत मान है। ज्यों-ज्यों धनसंपत्ति बढ़ती जाती है त्यों-त्यों व्यक्ति का मान भी बढ़ता जाता है।

ब- व्यवसाय - व्यक्ति क्या व्यवसाय करता है, यह भी उसकी आर्थिक स्थिति को निर्धारित करता है। यही कारण है कि डाक्टर, इंजीनियर, प्रोफेसर, उद्योगपति आदि व्यवसाय करने वालों की आर्थिक स्थिति चपरासी, मजदूर आदि की तुलना में उच्च होती है तथा इन्हें अधिक प्रतिष्ठा व सुविधाऐं प्राप्त होती हैं।

स- मासिक आय - व्यक्ति द्वारा प्राप्त की जाने वाली मासिक आय से व्यक्ति की आर्थिक स्थिति स्पष्ट होती है। आय के विभिन्न स्रोत होने से व्यक्ति की आय में निश्चित बढ़ोत्तरी होती है।

द- मितव्ययिता - फिजूलखर्ची के विपरीत मितव्ययिता की आदत वह है जिसके कारण भी व्यक्ति की आर्थिक स्थिति तय होती है। उच्च आर्थिक स्थिति वाले लोग भी फिजूलखर्च अधिक करके निम्न आर्थिक स्थिति में आ जाते हैं जबकि मितव्ययिता की आदत से तथा बचत आदि करके व्यक्ति अपनी आर्थिक स्थिति में अपेक्षाकृत सुधार कर सकता है।

2. सामाजिक कारक - अनेक सामाजिक कारक भी मिलकर व्यक्ति की आर्थिक स्थिति को निर्धारित करते हैं, जो इस प्रकार हैं -

अ - सामाजिक गतिशीलता - औद्योगिक व प्रजातांत्रिक समाजों में व्यक्ति अपनी योग्यता या उपलब्धि के अनुसार एक आर्थिक स्थिति से दूसरी आर्थिक स्थिति में स्थानान्तरण कर सकता है। जैसे कोई क्लर्क, हैड क्लर्क तथा कोई प्राचार्य, उपकुलपति तथा कुलपति भी बन जाता है। यही सामाजिक गतिशीलता है। वर्तमान में औद्योगीकरण के कारण नित व्यवसाय या नौकरी के क्षेत्र पैदा होते जा रहे हैं तथा व्यक्ति एक आर्थिक स्थिति से दूसरी में अपनी कुशलता व योग्यता के कारण गतिशील होता रहता है।

ब- परिवार का छोटा आकार - जिन परिवारों की सदस्य संख्या अधिक है उनकी तुलना में छोटे आकार के परिवारों की आर्थिक स्थिति अच्छी होती है।

स- विलम्ब विवाह - विलम्ब विवाह के फलस्वरूप व्यक्ति को शिक्षा ग्रहण करने व कैरियर बनाने का अवसर मिल जाता है जो निश्चित ही उसकी आर्थिक स्थिति को निर्धारित करने में अहम भूमिका निभाता है।

3 शैक्षिक कारक - वर्तमान समय में शिक्षा एक महत्वपूर्ण कारक है जिससे व्यक्ति की आर्थिक स्थिति तय होती है। विभिन्न नौकरियों के लिये प्रायः शिक्षा की न्यूनतम योग्यताऐं निर्धारित होती हैं। औपचारिक शिक्षा कुछ पदों के लिये अनिवार्य शर्त है। अशिक्षित व्यक्ति की तुलना में शिक्षित व्यक्ति की आर्थिक स्थिति उच्च होती है। इसी प्रकार से कम्प्यूटर क्रांति के पश्चात्

प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नित नये आविष्कार हो रहे हैं तथा प्रौद्योगिकी शिक्षा हासिल करने वालों की आर्थिक स्थिति में एकाएक परिवर्तन आ जाता है जिससे प्रौद्योगिकी शिक्षा की ओर लोगों का रूझान बढ़ रहा है। साथ ही व्यवसायिक प्रशिक्षण भी आर्थिक स्थिति के निर्धारण में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। प्रशिक्षण की आवश्यकता हर तकनीकी क्षेत्र के लिये आवश्यक है। डॉक्टर, प्रोफेसर, इन्जीनियर आदि बनने के लिये विशिष्ट प्रकार का प्रशिक्षण आवश्यक होता है। अतः शिक्षा भी व्यक्ति की आर्थिक स्थिति को निर्धारित करती है।

4. मनोवैज्ञानिक कारक - कुछ मनोवैज्ञानिक कारकों से भी मनुष्य की आर्थिक स्थिति का निर्धारण होता है। जैसे - महत्वाकांक्षा की भावना, प्रतिस्पर्द्धा की भावना, आत्म सम्मान की भावना आदि। कुछ व्यक्तियों में महत्वकांक्षा की भावना बहुत अधिक होती है। ऐसे लोग अपनी योग्यता बढ़ाकर, अधिक परिश्रम करके अपनी आर्थिक स्थिति को ऊँचा कर लेते हैं तथा उच्च वर्ग में स्थान बना लेते हैं। कुछ लोगों में प्रतिस्पर्द्धा की भावना होने से वे भी अपनी आर्थिक स्थिति में निरन्तर सुधार करते रहते हैं। प्रेरणा, आत्म सम्मान, उच्च वर्ग की विलासिता की चाहत भी मनोवैज्ञानिक रूप से व्यक्ति को अपनी आर्थिक स्थिति को बदलने के लिये प्रेरित करती है।

5. राजनीतिक कारक - शासक वर्ग की आर्थिक स्थिति शासित वर्ग की तुलना में हमेशा उच्च होती है। शक्तिशाली राजनीतिक दलों से सम्बन्धित किसी भी स्तर के नेताओं का प्रभाव क्षेत्र व्यापक होता है, जिससे इनसे सम्बन्धित व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति अपेक्षाकृत परिवर्तित हो जाती है। इसी प्रकार विकासशील देशों की तुलना में विकसित देशों की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है जो कि उनके राजनीतिक प्रभाव का ही परिणाम है। शक्ति संचालन में इनकी भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

आर्थिक स्तरीकरण के सिद्धांत -

क्या कारण है कि विश्व के सभी समाजों में विभिन्न आर्थिक विद्यमान है? तथा इसकी प्रक्रिया क्या है? ऐसे ही प्रश्नों का उत्तर देने के लिए समाजशास्त्रियों ने विभिन्न सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है। उनमें से हम यहां कुछ का उल्लेख करेंगे।

1. संघर्ष का सिद्धांत -

इस सिद्धांत के प्रतिपादकों में कार्ल मार्क्स अग्रणीय है। उन्होंने सामाजिक स्तरीकरण को समाज में पाए जाने वाले संघर्ष के आधार पर स्पष्ट किया है। इस सिद्धांत का उल्लेख उन्होंने अपनी कृति 'कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो' में किया है। वे लिखते हैं, "आज तक जो भी समाज अस्तित्व में आए उनका इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है" इसका तात्पर्य यह है कि प्रत्येक युग में सामाजिक वर्ग मौजूद रहे हैं और उनमें परस्पर संघर्ष रहा है। प्राचीन समय में स्वतंत्र और दास, कुलीन व अकुलीन, सामन्त और अर्द्धदास, अत्याचारी व पीड़ित आदि वर्ग रहे हैं। वर्तमान पूँजीवादी संयम में बुर्जआ (पूँजीपति) एवं सर्वहारा (श्रमिक) ये दो वर्ग प्रमुख हैं जो परस्पर संघर्षरत हैं। उच्च वर्ग ने सदैव ही निम्न वर्ग का शोषण किया है।

वर्गो का जन्म उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व अथवा अस्वामित्व के आधार पर होता है। इस आधार पर समाज में दो प्रधान एवं विरोधी वर्गो का जन्म होता है एक वह जिसका उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व होता है और दूसरा वह जो इससे वंचित होता है। वर्गो का स्वरूप उत्पादन के ढंग पर निर्भर करता है। उत्पादन का ढंग भी इस बात पर निर्भर होता है कि वह समाज प्रौद्योगिकी के कौन से स्तर पर है। शुम्पीटर का मत है कि मार्क्स की प्रमुख रूचि वर्गो के विकास में थी बोटोमोर कहते हैं कि मार्क्स सामाजिक व राजनीतिक परिवर्तन लाने में वर्गो की भूमिका में रूचि रखता था। वर्तमान औद्योगिक एवं पूँजीवादी व्यवस्था में उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व की दृष्टि से दो वर्गो का उदय हुआ है- एक

पूँजीपति वर्ग (जुर्बुआ) और दूसरा श्रमिक वर्ग (सर्वहारा) का पूँजीपति अधिकाधिक लाभ कमाने के लिए श्रमिकों को कम से कम देना चाहते हैं। श्रमिक वर्ग इस शोषण का विरोध करता है, किन्तु पूँजीपति जो कि अपनी आर्थिक शक्ति के आधार पर राजनीतिक शक्ति भी धारण करते हैं, श्रमिकों के विरोध का थोड़े समय के लिए दमन कर देते हैं, किन्तु उद्योगों का एक स्थान पर केन्द्रीकरण होने, यातायात के साधनों का विकास होने, पूँजीपति एवं श्रमिकों के बीच आर्थिक एवं सामाजिक दूरी के बढ़ने, आदि के कारण श्रमिक वर्ग में एकता एवं चेतना की वृद्धि होती है। वे एक जुट होकर पूँजीपतियों से संघर्ष करते हैं और अन्ततः सफलता प्राप्त करते हैं। इस प्रकार मार्क्स आर्थिक कारण को ही वर्ग संघर्ष का आधार मानता है। यद्यपि वह इस बात से भली-भांति परिचित था कि सामाजिक विभेदीकरण से इन दो प्रधान वर्गो के अतिरिक्त विरोधी हितों वाले कई अन्य समूह भी उत्पन्न हो जाते हैं, किंतु उसने इस तथ्य की अनदेखी की। इसका कारण यह था कि वह वर्ग विहीन समाज के आदर्श एवं राजनीतिक प्रतिबद्धता से बंधा हुआ था। मार्क्स वर्गो के जन्म में आर्थिक कारण को ही प्रमुख और अन्य सभी कारणों को इससे प्रभावित मानते हैं। धर्म, कला, ज्ञान, विज्ञान, संस्कृति, दर्शन, एवं साहित्य सभी कुछ समाज की अर्थव्यवस्था से ही प्रभावित होते हैं। आर्थिक कारण ही प्रमुख हैं, नींव हैं जिन पर धर्म, सभ्यता, कला एवं संस्कृति की अधो संरचना कायम है। मार्क्स श्रमिकों को अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए जागरूक एकजुट होने का आमन्त्रण देता है। वह कहता है- 'दुनिया के मजदूर एक हो' तुम्हें तुम्हारी बेड़ियों के सिवा कुछ नहीं खोना है' मार्क्स मजदूरों को धर्म से बचने के लिए भी कहता है क्योंकि उसके अनुसार धर्म अफीम है जिसका प्रयोग पूँजीपति अपने हितों की रक्षा के लिए करता है। वह पूँजीपतियों से किसी प्रकार का समझौता न करने की बात भी कहता है। मार्क्स श्रमिकों की विजय के प्रति काफी आशावादी रहे हैं।

2. प्रकार्यवादी सिद्धांत -

सामाजिक स्तरीकरण के प्रकार्यवादी सिद्धांत का प्रतिपादन किंग्वले डेविस तथा बिलवर्ट मूर ने अपने लेख सम प्रिन्सिपल्स ऑफ स्ट्रैटीफिकेशन में किया है। उन्होंने अपना लेख इस मान्यता से प्रारम्भ किया है। कि कोई भी समाज वर्ग विहीन नहीं है सभी समाजों में संस्तरण पाया जाता है। सभी समाजों में स्तरीकरण इसलिए पाया जाता है कि प्रत्येक समाज यह महसूस करता है कि सामाजिक संरचना में व्यक्तियों का कोई न कोई स्थान निश्चित होना चाहिए तथा विभिन्न पदों को प्राप्त करने की उन्हें प्रेरणा दी जानी चाहिए। इस प्रकार सामाजिक विषमता समाज में अचेतन रूप में विकसित होती है। इसके द्वारा समाज ऐसी व्यवस्था करता है कि सबसे महत्वपूर्ण पदों पर सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति ही पहुँचे।

प्रो. डेबिस कहते हैं "समाज के विभिन्न पदों के लिए विभिन्न योग्यता एवं बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है तथा कुछ व्यक्तियों का महत्व अधिक होता है" जो पद सामाजिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण होते हैं, ऐसे पदों के लिए अधिक पुरस्कार की व्यवस्था की जाती है। महत्वपूर्ण कार्यो को करने के लिए विशेष प्रतिभा एवं प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। कुछ प्रशिक्षण कठिन और खर्चीले होते है। अतः उन्हें सभी व्यक्ति प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए इन पदों के लिए समाज अधिक सुविधा एवं पुरस्कार की व्यवस्था करता है। उदाहरण के लिए, समाज में डॉक्टर, इन्जीनियर, आई0ए0एस0 आदि के प्रशिक्षण मँहगे और अधिक परिश्रम के बाद प्राप्त होते हैं बजाय एक अध्यापक या चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी के पद के। अतः इन पदों के लिए समाज द्वारा अधिक वेतन एवं सुविधाओं की व्यवस्था की गयी है। प्रश्न उठता कि विभिन्न पदों को धारण करने एवं उनके अनुसार कार्य करने की प्रेरणा देने के लिए समाज लोगों को क्या पुरस्कार देता है, डेविस कहता है कि समाज तीन प्रकार के पुरस्कार देता है : प्रथम, समाज वे वस्तुऐं देता है जो व्यक्तियों के जीवन कल्याण एवं आरम्भ के लिए आवश्यक होती

है, अर्थात् आर्थिक प्रोत्साहन । दूसरे, समाज जन बदलाव तथा सौन्दर्य एवं बोधात्मक प्रकृति की वस्तुऐं प्रदान करता है । तीसरे, समाज आत्म सम्मान एवं अहं की तुष्टि करने वाली वस्तुऐं प्रदान करता है अर्थात् प्रतीकात्मक प्रोत्साहन देता है । उदाहरण के लिए, वीरता प्रदर्शित करने वाले सैनिकों को 'परमवीर चक्र' और 'महावीर चक्र' प्रदान किए जाते हैं । राष्ट्रपति द्वारा दी जाने वाली 'भारत रत्न', 'पदम विभूषण' तथा 'पदमश्री' आदि उपाधियां सम्माजनक पुरस्कार है ।

इस प्रकार जब समाज में कुछ लोगों को अधिक अधिकार, पुरस्कार एवं सुविधाऐं प्रदान की जाती हैं और कुछ को कम तो समाज में स्वतः ही स्तरीकरण पैदा हो जाता है । प्रश्न उठता है कि क्या यह सिद्धांत केवल मुक्त समाजों में ही होता है जहाँ व्यक्ति योग्यता एवं प्रशिक्षण के आधार पर पदों को प्राप्त कर सकता है या यह उन समाजों पर भी लागू होता है जहां पद जन्म एवं पारिवारिक स्थिति के आधार पर प्राप्त होते हैं । उदाहरण के लिए, भारत में अनेक पद जाति के आधार पर लागू होता है क्योंकि स्तरीकरण में व्यक्तियों का नहीं वरन् शब्दों का क्रम विन्यास होता है । भारत में भी पदों के महत्व एवं कार्यो की प्रकृति के अनुसार क्रम विन्यास पाया जाता है । स्पष्ट है कि स्तरीकरण एक सार्वभौमिक तथ्य है ।

3. मैक्स वेबर का सिद्धांत -

मैक्स वेबर भी मार्क्स की भाँति स्तरीकरण उत्पन्न करने में वर्गो के महत्व को स्वीकार करते हैं । वे वर्ग के निर्धारण में आर्थिक कारकों के महत्व को स्वीकार करते हैं । सम्पत्ति पर अधिकार सामाजिक अवसर, जीवन सम्बन्धी सुविधाओं एवं वर्ग निर्धारण के लिए महत्वपूर्ण है । जहाँ मार्क्स केवल आर्थिक कारकों को ही महत्वपूर्ण मानता है, वहाँ वेबर आर्थिक के साथ-साथ सत्ता एवं शक्ति को भो महत्वपूर्ण मानते हैं । सम्पत्ति के आधार पर दो वर्ग बनते हैं - एक सम्पत्ति के अधिकारी एवं दूसरा सम्पत्ति विहीन । इसी प्रकार सत्ता एवं सम्मान भी समाज में स्तर पैदा करते हैं । सम्पत्ति पर अधिकार रखने वाले लोगों का

समाज में विशिष्ट सम्मान होता है तथा वे सत्ता प्राप्त करने मे भी सक्षम होते हैं। इस प्रकार सम्पत्ति, शक्ति एवं सम्मान समाज में स्तरीकरण पैदा करते हैं।

3. अन्य सिद्धांत -

सामाजिक स्तरीकरण से सम्बन्धित कुछ अन्य सिद्धांतों का हम यहाँ संक्षेप में उल्लेख करेंगे :-

वेब्लन ने अपनी पुस्तक में विलासी वर्ग का सिद्धांत प्रस्तुत किया। वह वर्ग जिसके पास व्यक्तिगत सम्पत्ति बहुत होती है और जो उत्पादन की प्रौद्योगिक प्रणाली अपनाता है, विलासी वर्ग के नाम से जाना जाता है। यह वर्ग आर्थिक दृष्टि से सुरक्षित होता है। इसका अधिक बड़े-बड़े उद्योगों, व्यापार, बैंक, कानून व्यवस्था एवं औद्योगिक संस्थाओं पर होता है। आर्थिक बल के कारण ही यह वर्ग अन्य सभी लोगों से अधिक सुविधाऐं और आराम भोगता है और दूसरों पर अपना प्रभुत्व कायम करता है। यह वर्ग किसी प्रकार का उत्पादन कार्य नहीं करता है। इस प्रकार वेब्लन समाज को दो वर्गो में विभक्त करता है - प्रथम, वह जो अनुत्पादक होते हुए भी अपनी आर्थिक शक्ति के कारण विलास की वस्तुओं का उपभोग करता है। एवं द्वितीय, जो उत्पादन कार्य में लगा होने पर भी अपनी क्षीण आर्थिक स्थिति के कारण इच्छानुसार उपभोग करने में असमर्थ होता है। वेब्लन का मत है कि उपभोग के सम्बन्ध में यह भिन्नता आदिम काल से चली आयी है, किन्तु उस समय परम्पराएं ही यह तथ्य तय करती थीं कि कौन किस वस्तु का उपभोग करेगा। इस प्रकार समाज में ऊँचे एवं नीचे दो वर्ग बन जाते हैं जो स्तरीकरण पैदा करते हैं।

वारनर ने अमेरिकन समाज में वर्ग बनने के आधारों का अध्ययन किया और कहा कि सम्मान और प्रस्थिति समूह वर्ग निर्माण में सहायक है। उसने अमेरिकन समाज में छः वर्गो का उल्लेख किया जो समाज में स्तरीकरण पैदा करते हैं। वे है

(1) उच्च उच्चतम वर्ग,

(2) निम्न उच्चतम वर्ग,

(3) उच्च मध्यम वर्ग,

(4) निम्न मध्यम वर्ग,

(5) उच्च निम्न वर्ग तथा

(6) निम्नतम वर्ग।

सी. राइट मिल्स ने स्तरीकरण के लिए शक्ति को महत्वपूर्ण माना है। आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न व्यक्ति सेना के उच्चाधिकारियों से अपने सम्बन्ध कायम कर लेते हैं और समाज में आर्थिक, राजनीतिक एवं सामाजिक दृष्टि से प्रभावशाली बन जाते हैं। दूसरी तरफ से वे लोग होते हैं जिनका आर्थिक, राजनीतिक व सामाजिक कम या नगण्य होता है। यह भिन्नता की समाज में स्तरीकरण पैदा करती है।

पारसन्स सम्पत्ति को व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थिति के निर्धारण में महत्वपूर्ण मानते हैं। पारसन्स प्रकार्यवादियों की इस बात को स्वीकार करते हैं कि समाज के महत्वपूर्ण पदों को योग्य व्यक्तियों द्वारा ही भरा जाता है। समाज में कौन सा पद महत्वपूर्ण होगा यह सामाजिक मूल्यों एवं उद्देश्यों पर निर्भर करता है। संतुलन एवं एकता में विश्वास करने वाले समाज संघर्ष में विश्वास करने वाले समाज से भिन्न होते हैं। इस प्रकार सामाजिक मूल्य एवं उद्देश्य स्तरीकरण के प्रमुख आधार है।

गोल्डहैमर तथा शिल्स ने शक्ति को सामाजिक स्तरीकरण का आधार माना है। व्यक्ति की स्थिति उसे प्राप्त शक्ति की मात्रा के अनुसार ऊँची या नीची हो सकती है। प्रभाव की मात्रा और प्रभावित होने वाले लोगों की संख्या के घटने-बढ़ने के साथ-साथ व्यक्ति की स्थिति में भी उतार-चढ़ाव आ सकता है।

प्रस्तुत शोध अध्याय- "क्रेशर श्रमिकों की आर्थिक स्थिति" उपरोक्त उल्लेखनीय सन्दर्भ में शोधकर्ता द्वारा झांसी एवं ललितपुर के क्रेशर श्रमिकों की वर्तमान में आर्थिक स्थिति को जानने के उद्देश्य से उत्तरदाताओं से क्रमशः दैनिक मजदूरी, भू-स्वामित्व, खेती का स्वरूप, वेतन अदायगी का स्वरूप, कार्यावधि, रोजगार दिवसों की संख्या, ऋणग्रस्तता स्तर, ऋण की देनदारी, ब्याज का प्रतिशत तथा ॠणग्रस्तता के कारणों सम्बन्धो तथ्यों की साक्षात्कार अनुसूची द्वारा तथ्य संकलन कर उनका विश्लेषण एवं विवेचन जो शोधार्थी के द्वारा किया गया है उनका तालिका बद्ध विवरण निम्न प्रकार है -

अग्रवर्णित तालिका क्रेशर श्रमिकों की दैनिक मजदूरी पर संक्षिप्त प्रकाश डालती हैं :-

तालिका संख्या -21

उत्तरदाताओं का दैनिक मजदूरी सम्बन्धी विवरण

क्र.	दैनिक मजदूरी	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	रू0 40	38 (11.45%)	7 (10.29%)
2.	रू0 50	277 (83.43%)	58 (85.29%)
3.	रू0 55	17 (5.12%)	3 (4.42%)
4.	60 और अधिक रूपया	-	-
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि जनपद झांसी के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 277 उत्तरदाता (83.43%) रू 50 प्रतिदिन दैनिक मजदूरी पाते थे। इसी प्रकार जनपद ललितपुर के सर्वाधिक 58 उत्तरदाताओं (85.29%) को दैनिक मजदूरी रू 50 मिलती थी। स्पष्ट है कि दोनों जनपदों के क्रेशर श्रमिकों की

दैनिक मजदूरी लगभग समान थी। यौगिक रूप से दोनों जनपदों के औसतन (83.75%) क्रेशर श्रमिकों की दैनिक मजदूरी रू0 50 थी।

प्रसंगाधीन तालिका चयनित उत्तदाताओं के माह में कार्य दिवसों की संख्या पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है -

तालिका संख्या -22

उत्तरदाताओं के कार्य दिवसों की संख्या सम्बन्धी विवरण

क्र.	कार्य दिवसों की संख्या	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	15 दिन	3 (0.90%)	2 (2.94%)
2.	20 दिन	27 (8.13%)	4 (5.88%)
3.	25 दिन	98 (29.52%)	15 (22.06%)
4.	> 25 दिन	204 (61.45%)	47 (69.12%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

प्रस्तुत तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झांसी के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 204 उत्तरदाताओं (61.45%) को माह में 25 दिन से अधिक काम मिलता था। इसी प्रकार जनपद ललितपुर के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक (69.12%) को 25 दिन से अधिक काम मिलता था। तुलनात्मक दृष्टिकोण से दोनों जनपदों के क्रेशर श्रमिकों को माह में 25 दिन से अधिक काम मिलता था। यौगिक रूप से दोनों जनपदों के औसतन (62.75%) क्रेशर श्रमिकों को 25 दिन से अधिक काम नहीं मिलता था।

प्रस्तुत तालिका उत्तरदाताओं के दिन में कार्य के घण्टों पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है -

तालिका संख्या -23

उत्तरदाताओं का कार्यावधिक सम्बन्धी विवरण

क्र.	कार्यावधि	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	8 घण्टे	93 (28.01%)	13 (16.12%)
2.	10 घण्टे	188 (56.63%)	41 (60.29%)
3.	12 घण्टे	51 (15.36%)	14 (20.59%)
4.	> 12 घण्टे	-	-
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से विदित होता है कि जब उत्तरदाताओं से पूछा गया कि वे क्रेशर उद्योग में कितने घण्टे कार्य करते हैं, तब ज्ञात हुआ कि जनपद झांसी के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 188 उत्तरदाता (56.63%) 10 घण्टे प्रतिदिन कार्य करते थे। इसी प्रकार जनपद ललितपुर के 41 उत्तरदाता (60.29%) 10 घण्टे प्रतिदिन क्रेशर उद्योग में कार्य करते थे। चूंकि प्रतिदिन 8 घण्टे कार्य करने का नियम है परन्तु दोनों ही जनपदों में क्रेशर श्रमिकों को 10 घण्टे प्रतिदिन कार्य करना पड़ता था।

प्रसंगाधीन प्रस्तुत सारणी क्रेशर श्रमिकों की वेतन अदयगी के स्वरूप पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है -

तालिका संख्या -24

उत्तरदाताओं की वेतन अदायगी के स्वरूप सम्बन्धी विवरण

क्र.	वेतन का स्वरूप	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	साप्ताहिक	30 (9.04%)	10 (14.70%)
2.	पाक्षिक	69 (20.78%)	16 (23.52%)
3.	मासिक	233 (70.18%)	42 (61.76%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जब चयनित उत्तरदाताओं से पूछा गया कि उनकी वेतन अदायगी का स्वरूप क्या है, तब ज्ञात हुआ कि जनपद झांसी के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 233 उत्तरदाता (70.18%) मासिक वेतन पाते थे। इसी प्रकार जनपद ललितपुर के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 42 उत्तरदाताओं (61.76%) को मासिक वेतन भुगतान किया जाता था। स्पष्ट है कि अधिकांश क्रेशर श्रमिकों को माह में 25 दिन से अधिक काम करना पड़ता था इसलिये उन्हें वेतन भुगतान मासिक किया जाता था।

निम्नलिखित तालिका चयनित उत्तरदाताओं की भूमि सम्पत्ति पर प्रकाश डालती है-

तालिका संख्या -25

उत्तरदाताओं की भू-सम्पत्ति सम्बन्धी विवरण

क्र.	भूमि	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	1-2 एकड़	38 (11.44%)	8 (11.76%)
2.	2-3 एकड़	21 (6.32%)	9 (13.23%)
3.	4-5 एकड़	32 (9.63%)	5 (5.35%)
4.	> 5 एकड़	-	-
5.	बिल्कुल नहीं	241 (72.61%)	46 (67.66%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जब उत्तरदाताओं से पूछा गया कि वे कितनी भू-सम्पत्ति के मालिक हैं, तब स्पष्ट हुआ जनपद झांसी के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 241 उत्तरदाताओं (72.61%) के पास बिल्कुल भूमि नहीं थी । इसी प्रकार जनपद ललितपुर के सर्वाधिक 46 उत्तरदाताओं (67.66%) के पास भूमि बिल्कुल नहीं थी । तुलनात्मक रूप से दोनों जनपदों के अधिकांश क्रेशर श्रमिक भूमिहीन थे । यौगिक रूप से दोनों जनपदों के औसतन 71.75% श्रमिकों के पास भू-सम्पत्ति बिल्कुल नहीं थी ।

तालिका संख्या -26

उत्तरदाताओं की ऋण ग्रस्तता की धनराशि का विवरण

क्र.	मद	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	बिल्कुल नहीं	116 (34.93%)	23 (33.84%)
2.	रू0 1000	7 (2.10%)	2 (2.94%)
3.	रू0 2000	20 (6.02%)	6 (8.82%)
4.	रू0 3000	86 (25.90%)	18 (26.47%)
5.	रू0 4000	80 (24.09%)	12 (17.66%)
6.	> रू0 4000	23 (6.96%)	7 (10.27%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि जनपद झांसी के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 25.90% उत्तरदाता रू0 3000, 24.09% उत्तरदाता रू0 4000, 6.96% उत्तरदाता रू0 4000 से अधिक के ऋणी थे। इसी प्रकार जनपद ललितपुर के चयनित 66.16% ऋणग्रस्त उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 26.47% उत्तरदाता रू0 3000, 17.66% उत्तरदाता रू0 4000, 10.27% उत्तरदाता रू0 4000 से अधिक के ऋणी थे। स्पष्ट है कि दोनों जनपदों के अधिकांश क्रेशर श्रमिक ऋणग्रस्त थे।

प्रसंगाधीन प्रस्तुत तालिका उत्तरदाताओं की ऋणग्रस्तता के कारणों पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है -

तालिका संख्या -27

उत्तरदाताओं के ऋणग्रस्तता के कारण सम्बन्धी विवरण

क्र.	कारण	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	पुत्र/पुत्री का विवाह	166 (50.00%)	34 (50.00%)
2.	मृत्युभोज	20 (6.02%)	7 (10.28%)
3.	रोगोचार	84 (25.30%)	17 (25.00%)
4.	प्रसूति	38 (11.44%)	8 (11.76%)
5.	अन्य	24 (7.24%)	2 (2.96%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झांसी के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 50.00% उत्तरदाताओं की ऋणग्रस्तता का कारण पुत्र/पुत्री का विवाह था, 25.30% उत्तरदाता रोगोचार के लिये, 11.44% उत्तरदाता प्रसूति के लिये, 7.24% उत्तरदाता अन्य कारणों से ऋण लेते थे। इसी प्रकार जनपद ललितपुर के 34 उत्तरदाता 25.00% पुत्र/पुत्री के विवाह के लिये, 10.28% उत्तरदाता मृत्युभोज के लिये ऋण लेते थे। तुलनात्मक रूप से दोनों ही जनपदों के अधिकांश श्रमिकों की ऋणग्रस्तता के कारण लगभग समान थे।

तालिका संख्या -28

उत्तरदाताओं के ऋणग्रस्तता के प्रतिशत सम्बन्धी विवरण

क्र.	कार्याविधि	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	0 प्रतिशत	116 (33.93%)	23 (34.84%)
2.	5 प्रतिशत	20 (6.04%)	8 (11.76%)
3.	10 प्रतिशत	30 (9.03%)	19 (27.94%)
4.	15 प्रतिशत	136 (40.96%)	3(4.43%)
5.	> 15 प्रतिशत	30 (9.03%)	15 (22.05%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

प्रसंगाधीन सारणी के अवलोकन से स्पष्ट है कि जनपद झांसी के चयनित ऋणग्रस्त उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 136 उत्तरदाता (40.96%) 15 प्रतिशत की दर से , (9.03%) उत्तरदाता प्रतिशत से अधिक की दर से, 30 उत्तरदाता 10 प्रतिशत की दर से तथा (6.04%) उत्तरदाता 5 प्रतिशत की दर से ब्याज देते थे। इसी प्रकार जनपद ललितपुर के चयनित ऋणग्रस्त उत्तरदाताओं में से (27.94%) उत्तरदाता 10 प्रशित की दर से, (22.05%) उत्तरदाता 15 प्रतिशत से अधिक की दर से, (11.76%) उत्तरदाता 5 प्रतिशत की दर से तथा (4.43%) उत्तरदाता 15 प्रतिशत की दर से ब्याज देते थे।

प्रासंगिक तालिका उत्तरदाताओं द्वारा ऋण लेने के विभिन्न माध्यमों पर प्रकाश डालती है-

तालिका संख्या -29

उत्तरदाताओं के ऋण स्रोतों का विवरण

क्र.	मद	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	बैंक के	96 (28.91%)	8 (11.76%)
2.	सरकार के	30 (9.03%)	5 (7.35%)
3.	क्रेशर मालिक के	75 (22.59%)	40 (58.82%)
4.	दुकानदार के	73 (21.98%)	8 (8.84%) -
5.	सम्बन्धी के	58 (17.49%)	9 (13.23%)
	कुल योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 96 उत्तरदाता ऋणग्रस्त थे, जिनमें झांसी से उत्तरदाता (28.91%) बैंक के, 75 उत्तरदाता (22.59%) क्रेशर मालिकों के, 73 उत्तरदाता (21.98%) दुकानदारों के, 58 उत्तरदाता (17.49%) सम्बन्धियों के, 9.03% उत्तरदाता सरकार के ऋणी थे। इसके दूसरी ओर ललितपुर के उत्तरदाता (11.76%) बैंक के, (7.35%) सरकार के, (58.82%) क्रेशर मालिकों के, (8.84%) दुकानदारों के तथा (13.23%) सम्बन्धियों के ऋणी थे। तुलनात्मक समीक्षा की जाये तो झांसी के उत्तरदाता ललितपुर के उत्तरदाता से (11.15%) बैंक से ऋण लेते थे, ललितपुर के उत्तरदाता झांसी के तुलना में (36.23%) क्रेशर मालिकों से ऋण लेते थे, झांसी के उत्तरदाता, ललितपुर के उत्तरदाताओं से (13.14%) अधिक दूकानदारों से ऋण लेते थे तथा (4.26%) अधिक सम्बन्धियों से ऋण लेते थे।

♣♣♣

अध्याय -8

क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की राजनैतिक स्थिति

जब कोई भी व्यक्ति का समूह एक साथ रहता-उठता-बैठता अथवा किसी स्थान एवं परिस्थिति में कार्य करता है तो वह समूह के सदस्य कार्य दशाओं, में अथवा सामाजिक अन्तक्रियाओं में एक या अनेक समस्याओं का सामना करते हैं तो उनमें मनोवैज्ञानिक, आर्थिक एवं सामाजिक तनाव, कुण्ठा एवं दबाव उत्पन्न होता है। जब समूह के सदस्य उस समस्या की चर्चा आपस में करते हैं तो वह समस्या का रूप धारण कर लेती है। समस्या के निदान एवं हल के लिए जब किसी व्यक्ति विशेष द्वारा प्रयास किया जाता है तब उस प्रयास को अथवा व्यवहार को नेतृत्व की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार व्यक्ति में नेतृत्व उत्पन्न होता है। इसी प्रकार श्रमिक जीवन की समस्याऐं जब कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह जिसे वे श्रम संघ कहते है; उद्योग के स्वामी के सम्मुख रखते हैं तो स्वामी एवं श्रमिकों के मध्य जो क्रियाऐं एवं प्रतिक्रियाऐं की जाती हैं उन्हें मिल मालिक प्रायः नेता गिरी कहता है तो श्रमिक उसे अपना हम/अधिकार बताता है।

राजनैतिक स्थिति : उद्योगों में श्रमिकों की जहाँ तक राजनैतिक स्थिति का प्रश्न है तो प्रायः श्रम संघ से लगाया जाता है। जिसमें श्रमिक अपने श्रम संघों का गठन कर उसे पंजीकृत कराकर, संविधान में उन्हें मिले अधिकारों तथा कारखाना अधिनियम 1948 अथवा खानों, बागानों जिसके भी श्रमिक हों उनके अधिनियमों के अनुसार मिलने वाली रियायतों, सुविधाओं तथा कल्याणकारी सेवाओं के बारे में समय-समय पर अपनी माँगों को मिल-मालिक के सम्मुख रखते रहे, फिर चाहे वे माँगे उनके कार्य दशाओं, आवास, स्वास्थ्य तथा सुरक्षा से सम्बन्धित हो आदि विवरण श्रमिकों की राजनैतिक स्थिति के अन्तर्गत आता है।

श्रम संघों को विभिन्न विद्धानों ने अनेक ढंग से पारिभाषित किया है कुछ के अनुसार ये केवल कर्मचारियों के संगठन है जो उद्योग में अथवा किसी न किसी प्रकार के व्यवसाय में लगे हैं और मजदूरी पर आश्रित हैं। कुछ भी हो "समस्त संगठनों का उद्देश्य अपने सदस्यों के हितों की रक्षा करना होता है। श्रम संघ सदस्यों की सौदेबाजी की क्षमता में वृद्धि करते है, प्रबन्धकीय एकाधिकार को समाप्त करते है तथा सेवायोजक एवं कर्मचारी के मध्य सम्बन्ध सुधारने में सहायक होते हैं।"[1] व्यापक एवं आधुनिक परिप्रेक्ष्य में श्रम संघ केवल श्रमिक संघ नहीं रहे, ये समस्त वर्ग के कर्मचारियों के संगठन है जिनका उद्देश्य ही सीमित न होकर अन्य क्षेत्रों में भी व्यापक है; इनका कार्यक्षेत्र आज मजदूरी, वेतन व वोनस की समस्या, काम के घण्टे, कार्य दशाओं तथा कार्य के स्थान आदि से सम्बन्धित है। विश्व स्तर पर, "श्रम संघ ऐसे संगठन हैं जिनका उद्देश्य श्रमिक एवं मालिक में, श्रमिक एवं श्रमिक में तथा मालिक एवं मालिक में मधुर सम्बन्ध बनाना है जिससे किसी व्यवसाय के क्रिया-कलापों पर, श्रमिकों के हितों की सुरक्षा हेतु आवश्यक नियंत्रण रखा जा सके।"[2] भारत में, "श्रम संघ ऐसे संगठन हैं स्थायी अथवा अस्थाई स्वभाव के हैं जिसकी स्थापना श्रमिक नियोक्ता में, श्रमिक एवं श्रमिक में तथा नियोक्ता से सम्बन्ध बनाने एवं किसी व्यवसाय के आचरण को नियंत्रित करने के लिए की जाती है। इसके अर्न्तगत दो या अधिक संघों के संगठन शामिल किए जाते हैं।"[3]

इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि-

1. श्रम संघ केवल श्रमिकों और कर्मचारियों का संगठन है,

---

1. सक्सेना, एस,सी.(1999:469): श्रम समस्याऐं एवं सामाजिक सुरक्षा, रस्तोगी पवलीकेशन, शिवाजी रोड, मेरठ।
2. विट्रिस श्रम संघ अधिनियम, 1953
3. भारतीय श्रम संघ सशोधित अधिनियम, 1982

2. श्रम संघ के उद्देश्य एवं कार्यों में प्रतिदिन परिवर्तन हो रहे हैं। ये अभी तक अपने-अपने सदस्यों के हित के लिए ही प्रयास करते थे, किन्तु अब सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक उत्थान के लिए भी प्रयत्नशील हैं,
3. श्रम संघों के उद्‌गम का क्षेत्र कई विभिन्न विचार धारणाओं का है सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक आन्दोलनों ने श्रम संघों को प्रभावित किया है;
4. श्रम संघ कार्यों में बहुमुखी और विधियों में बहुविधि है,
5. श्रम संघ औद्योगिक प्रणाली का शिशु है तथा इसका जन्म औद्योगिक क्रांति के फलतः हुआ है,
6. श्रम संघ एक शैक्षणिक संगठन है, एक प्रशासकीय पाठशाला है, यह एक आर्थिक प्रबन्ध की पाठशाला है तथा साम्यवाद का प्रवर्तक है।

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि श्रमसंघ वेतन भोगी कर्मचारियों द्वारा निर्मित एक निरन्तर कार्यरत ऐच्छिक संगठन है जो अपने सदस्यों के हितों की रक्षा करने उनकी कार्यदशाओं को बनाए रखने तथा उनमें सुधार करने एवं नियोक्ताओं के साथ श्रेष्ठ सम्बन्ध रखने में सदा प्रयत्नशील रहता है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में शोधार्थियों की राजनैतिक तथा श्रम संगठनों के बारे में जागरूकता तथा राजनैतिक स्थिति की पहिचान करने का प्रयास किया गया है क्योंकि क्रेशर मिल के श्रमिक कारखानों के श्रमिकों से भिन्न तथा असंगठित क्षेत्र के श्रमिक होते हैं। दोनों जनपदों के श्रमिकों की राजनैतिक स्थिति का विवरण तुलनात्मक ढंग से निम्न बिन्दुओं- (1) वोटर लिस्ट में नाम, (2) वोट डालने का अधिकार, (3) वोट डालने की स्वतंत्रता, (4) राजनैतिक दलों से जुड़ाव, (5) राजनीति कार्य में सहभागिता, (6) श्रमिक अधिकारों के प्रति जागरूकता, (7) महिलाधिकारों के प्रति जागरूकता, (8) उत्पीड़न की रिपोर्ट तथा (9) श्रम

अधिकारों के प्रति जागरूकता को सारणी बनाकर प्रस्तुत किया गया है ताकि क्रेशर उद्योग में श्रमिकों की राजनीति स्थिति का बोध हो सके। विवरण क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत है-

निम्नलिखित तालिका उत्तरदाताओं के वोटर लिस्ट में नाम होने पर प्रकाश डालती है:-

तालिका संख्या -30

उत्तरदाताओं का वोटर लिस्ट में नाम सम्बन्धी विवरण

क्र.	जनपद	हाँ	नहीं	योग
1.	झाँसी	242 (72.89%)	90 (27.11%)	332 (100.00%)
2.	ललितपुर	41 (60.29%)	27 (39.71%)	68 (100.00%)
	योग	283 (70.75%)	117 (29.25%)	400 (100.00%)

चयनित उत्तरदाताओं से वोटर लिस्ट में नाम होने सम्बन्धी जानकारी करने पर ज्ञात हुआ कि झाँसी जनपद के क्रेशर उद्योग में 242 सर्वाधिक श्रमिकों (72.89%) के नाम उनकी वोटर लिस्ट में अंकित थे तथा जनपद ललितपुर के क्रेशर उद्योग में कार्यरत 41 श्रमिकों (60.29%) के नाम वोटर लिस्ट में। तुलनात्मक 41 (12.60%) कम अंकित थे। जिसके कतिपय कारक झाँसी की तुलना मे ललितपुर जनपद के श्रमिकों की गरीबी, अशिक्षा राजनैतिक जागरूकता का अभाव, निम्न जाति स्तर तथा उच्च वर्गो की दवंगी थी।

प्रस्तुत तालिका उत्तरदाताओं के वोट डालने के अधिकार पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -31

उत्तरदाताओं का वोट डालने के अधिकार सम्बन्धी विवरण

क्र.	जनपद	हाँ	नहीं	योग
1.	झाँसी	276 (83.79%)	54 (16.21%)	332 (100.00%)
2.	ललितपुर	49 (72.25%)	19 (27.95%)	68 (100.00%)
	योग	325 (81.25%)	73 (18.25%)	400 (100.00%)

जब उत्तरदाताओं से पूछा गया कि वोट डालना क्या आपका अधिकार है, तब झांसी के 276 सर्वाधिक (83.79%) और ललितपुर (72.25%) श्रमिकों ने वोट डालने के अधिकार के बारे में जागरूकता अभिव्यक्त की। झांसी जनपद के क्रेशर श्रमिकों सें ललितपुर जनपद के श्रमिकों में (11.54%) अपना वोट देने की अधिक राजनीतिक जागरूकता थी। इसके पीछे ललितपुर के श्रमिकों की अशिक्षा तथा राजनैतिक नेतृत्व की उदासीनता के कारक थे।

अग्रांकित तालिका उत्तरदाताओं की वोट डालपाने की स्वतंत्रता का ब्यौरा प्रस्तुत करती है:-

तालिका संख्या -32

उत्तरदाताओं की वोट डालपाने की स्वतंत्रता सम्बन्धी विवरण

क्र.	जनपद	हाँ	नहीं	योग
1.	झाँसी	255 (76.80%)	77 (23.20%)	332 (100.00%)
2.	ललितपुर	45 (66.17%)	23 (33.83%)	68 (100.00%)
	योग	300 (75.00%)	100 (25.00%)	400 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झांसी के क्रेशर उद्योग में 255 सर्वाधिक श्रमिक (76.80%) तथा जनपद ललितपुर के क्रेशर उद्योग के 45 श्रमिकों (66.17%) को अपना वोट डालने की स्वतंत्रता थी। तुलनात्मक रूप से जनपद ललितपु के क्रेशर श्रमिकों को झांसी जनपद के श्रमिकों की तुलना में (9. 63%) वोट स्वयं की स्वतंत्रता से डालने का अधिकार नहीं था। इसका कारण श्रमिकों ने अपनी ऋणग्रस्ता, रोजगारी तथा भय को बताया।

प्रस्तुत तालिका उत्तरदाताओं का राजनीतिक पार्टी से जुड़ाव सम्बन्धी अध्ययन पर प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -33

श्रमिकों का राजनीतिक दलों से जुड़ाव सम्बन्धी विवरण

क्र.	जनपद	हाँ	नहीं	योग
1.	झाँसी	56 (14.07%)	276 (85.03%)	332 (100.00%)
2.	ललितपुर	14 (20.59%)	54 (79.41%)	68 (100.00%)
	योग	70 (17.50%)	330 (82.50%)	400 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झांसी के 276 सर्वाधिक (85. 03%) क्रेशर उद्योग के श्रमिक तथा 54 ललितपुर के श्रमिक (79.41%) किसी भी राजनीतिक दल से सम्बन्धित नहीं थे। झांसी की खदानों की तुलना में ललितपुर की खदानों के क्रेशर उद्योग के श्रमिक (5.52%) कम राजनैतिक दलों से सम्बद्ध थे।

निम्नलिखित तालिका उत्तरदाताओं की राजनीति में भागीदारी को प्रस्तुत करती है :-

तालिका संख्या -34

उत्तरदाताओं द्वारा राजनीति में भागीदारी सम्बन्धी विवरण

क्र.	जनपद	हाँ	नहीं	योग
1.	झाँसी	55 (16.57%)	277 (83.43%)	332 (100.00%)
2.	ललितपुर	05 (22.06%)	53 (77.94%)	68 (100.00%)
	योग	60 (17.50%)	330 (82.50%)	400 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झांसी के सर्वाधिक 277 खदान श्रमिक (83.43%) तथा जनपद ललितपुर की क्रेशर खदानों के 56 श्रमिक (77.94%) राजनैतिक कार्य में सहभागिता नहीं करते थे। झांसी की खदानों की तुलना में ललितपुर की खदानों के श्रमिकों में (5.49%) राजनैतिक कार्यकलापों में सहभागिता का अभाव था।

निम्नांकित सारणी उत्तरदाताओं में अपने अधिकारों के प्रति सक्रियता का ब्यौरा प्रस्तुत करती है :-

तालिका संख्या -35

उत्तरदाताओं का श्रमिक अधिकारों के प्रति सक्रियता का विवरण

क्र.	जनपद	हाँ	नहीं	योग
1.	झाँसी	135 (44.67%)	197 (55.33%)	332 (100.00%)
2.	ललितपुर	25 (36.77%)	43 (63.23%)	68 (100.00%)
	योग	160 (81.44%)	240 (82.50%)	400 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद ललितपुर की खदानों के 43 श्रमिक (63.23%) सर्वाधिक तथा झांसी की खदानों के 197 श्रमिकों में (55.33%) अपने अधिकारों के प्रति सक्रियता नहीं थी। झांसी के श्रमिकों में ललितपुर के श्रमिकों की तुलना में (7.90%) अधिक अपने अधिकारों के प्रति सक्रियता थी।

प्रसंगाधीन तालिका उत्तरदाताओं में महिला अधिकारों के प्रति जागरूकता सम्बन्धी अध्ययन पर आधारित है :-

तालिका संख्या -36

उत्तरदाताओं की महिला अधिकारों के बारे में जागरूकता का विवरण

क्र.	जनपद	हाँ	नहीं	योग
1.	झाँसी	133 (40.07%)	199 (59.93%)	332 (100.00%)
2.	ललितपुर	24 (35.30%)	44 (64.70%)	68 (100.00%)
	योग	157 (39.25%)	243 (60.75%)	400 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से विदित होता है कि 44 सर्वाधिक जनपद ललितपुर (64. 70%) तथा 199 जनपद झांसी के क्रेशर खदानों के (59.93%) श्रमिक महिलाओं के अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं थे। ललितपुर के श्रमिक झांसी की खदानों की तुलना में (4.72%) कम जागरूक थे। योगिक रूप में दोनों ही जनपदों के श्रमिकों में (60.75%) महिलाओं के अधिकारों के बारे में अनभिज्ञ थे। ऐसा उनकी अशिक्षा तथा भोजन की तलाश में नित्य कार्य करना था।

प्रस्तुत तालिका उत्तरदाताओं द्वारा लड़ाई-झगड़ों व दबंगों के दवाबों की सूचना पुलिस को देने पर संक्षिप्त प्रकाश डालती हैः-

तालिका संख्या -37

उत्तरदाताओं पर दबंगों द्वारा उत्पीड़न की रिपोर्ट करने सम्बन्धी विवरण

क्र.	जनपद	हाँ	नहीं	योग
1.	झाँसी	90 (26.67%)	242 (73.33%)	332 (100.00%)
2.	ललितपुर	12 (17.65%)	56 (82.35%)	68 (100.00%)
	योग	102 (25.50%)	298 (74.50%)	400 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि झांसी जनपद के 242 क्रेशर श्रमिक (73.33%) तथा ललितपुर खदानों के 56 श्रमिक (82.35%) दबंगों और पारस्परिक लड़ाई-झगड़ों की सूचना पुलिस को नहीं देते। झांसी की तुलना में ललितपुर के (9.02%) कम थानों में रिपोर्टस की जाती थी। योगिक रूप से (74. 50%) लड़ाई की रिपोर्ट नहीं की जाती थी। इसका कारण उत्तदाताओं ने साधन हीनता तथा दैनिक जीविका उपार्जन में बाधाऐं बताई।

प्रसंगाधीन तालिका उत्तदाताओं में श्रमिकों के अधिकारों की जागरूकता पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -38

उत्तरदाताओं की श्रमिक अधिकारों की जागरूकता सम्बन्धी विवरण

क्र.	जनपद	हाँ	नहीं	योग
1.	झाँसी	55 (16.57%)	277 (83.43%)	332 (100.00%)
2.	ललितपुर	12 (17.65%)	56 (82.35%)	68 (100.00%)
	योग	67 (25.50%)	333 (83.25%)	400 (100.00%)

उपरोक्त सारणी से अवगत होता है कि झांसी खदानों के 277 सर्वाधिक (83.43%) श्रमिकों तथा जनपद ललितपुर के 56 श्रमिक (82.35%) अपने श्रमिक अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं थे। जागरूकता का तुलनात्मक अध्ययन से दोनों ही जनपदों के श्रमिकों में समान अजागरूकता थी।

अध्याय -9

क्रेशर उद्योग का प्रभाव

जिज्ञासु एवं विवेकशील मानव ने अपनी सुख-सुविधाओं की अन्तहीन तृष्णा से ग्रसित होकर प्रकृति के रहस्यों को जानने तथा प्रकृति के दोहन के लिये अनेको कदम उठाये । उसने भूगर्भ को खोजा, समुद्र की गहराईयों को नापा और विज्ञान के दुर्जय रथ पर सवार होकर अन्तरिक्ष में भी पहुँच गया । मानव को उसके पर्यावरण से अलग नहीं किया जा सकता है । पर्यावरण से तात्पर्य मनुष्य के आस-पास के सभी बाह्य तत्वों सजीव तथा निर्जीव, भौतिक तथा अभौतिक से है । श्री अग्रवाल (1986:171) ने इसीलिये लिखा है कि, "मनुष्य अपने पर्यावरण की उपज है।"[1] इसी प्रकार श्री गिस्बर्ट का कथन है कि, "पर्यावरण वह सब कुछ है जो किसी वस्तु को चारों ओर से घेरे हुए है और उसे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है" प्रो0 आनन्द कुमार (2000:303) ने भी लिखा है कि, "पर्यावरण हमारे चारों ओर के जैविक तथा अजैविक कारकों का समग्र रूप व मिश्रण है । जैविक कारकों में वनस्पति एवं जीव-जन्तु आते हैं तथा अजैविक कारकों में हवा, पानी, भूमि, आकाश आते हैं ।"[2] पर्यावरण की विवेचना के लिये इसे तीन घटकों में विभाजित किया जाता है जो परस्पर अन्तः सम्बन्धित है :-

(अ) भौतिक पर्यावरण- जल, वायु, मिट्टी, मकान, कूड़ा-करकट आदि ।

(ब) जैविक पर्यावरण- जीवाणु समेत वनस्पति तथा प्राणी जीवन, कीट, कृन्तक, पशु ।

---

1. अग्रवाल, जी.के. (1986:171): मानव समाज, आगरा बुक स्टोर, आगरा
2. कुमार आनन्द, (2000): 'नागरीक समाज शास्त्र' विमल प्रकाशन मन्दिर आगरा-3, पृष्ठ -303

(स) सामाजिक पर्यावरण- रीतिरिवाज, आदतें, संस्कृति, शिक्षा, आय, व्यवसाय, धर्म आदि।

इसके अतिरिक्त प्रसिद्ध समाजशास्त्री श्री आगवर्न तथा निमकॉफ ने पर्यावरण को दो भागों में बांटा है :-

अ- प्राकृतिक पर्यावरण - इसके अन्तर्गत से सभी परिस्थितियाँ सम्मिलित की जाती है जिनका निर्माण प्रत्यक्ष रूप से ऐसी शक्तियों द्वारा हुआ है जो पूर्णतया प्राकृतिक हैं अथवा जिनके अस्तित्व को मनुष्य प्रभावित नहीं कर सकता है जैसे- पृथ्वी, आकाश, जल, वायु, सूर्य, चन्द्रमा, वनस्पति, पशु-पक्षी तथा ऋतुऐं आदि।

ब- मनुष्यकृत पर्यावरण - इसी पर्यावरण का निर्माण स्वयं मनुष्य ने किया है। इसमें वे वस्तुऐं शामिल हैं जो हमारे सामाजिक ढांचे तथा सांस्कृतिक विशेषताओं से सम्बन्धित हैं, चाहे वे भौतिक हो अथवा अभौतिक।

श्री लैण्डिस ने भी पर्यावरण के प्रकारों के विषय में लिखा है कि, पर्यावरण को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है :-

अ - प्राकृतिक पर्यावरण - इसके अन्तर्गत वे सभी प्राकृतिक शक्तियाँ सम्मिलित हैं जिनका अस्तित्व मनुष्य से स्वतंत्र है और जो बिना मनुष्य द्वारा प्रभावित हुऐ स्वयं परिवर्तित होती रहती हैं।

ब- सामाजिक पर्यावरण - इसका तात्पर्य उन सामाजिक सम्बन्धों, समूहों, संगठनों, आर्थिक, राजनीतिक वैधानिक संस्थाओं और सामाजिक ढांचे से है जो जीवन के आरम्भ से लेकर मृत्युपर्यन्त व्यक्ति को प्रभावित करती रहती हैं तथा व्यक्ति के समाजीकरण में सहायक होती है।

स- सांस्कृतिक पर्यावरण - यह पर्यावरण मनुष्य द्वारा सीखे हुये व्यवहारों तथा स्वयं उसके अनुभवों से बना है। इसके अन्तर्गत धर्म, नैतिकता, आदर्श, प्रथाऐं,

परम्पराऐं, जनरीतियाँ, लोकाचार, संस्थागत नियम, प्रौद्योगिकी, व्यवहार, प्रतिमान आदि आते हैं।

मनुष्य को चारों ओर से घेरे इस पर्यावरण के प्रदूषित होने से ही मानव के जीवन तथा स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पड़ता है। इस दृष्टि से संयुक्तराष्ट्र संघ के मानव पर्यावरण सम्मेलन में प्रदूषण की परिभाषा करते हुऐ कहा गया है कि, "प्रदूषण वे सभी पदार्थ व ऊर्जा हैं जो प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मनुष्य की वांछित गतिविधियों का अबाछित प्रभाव है। इन अर्थों में कृषि, उद्योग एवं औषधियाँ मनुष्य के लिये उपयोगी होने पर भी प्रदूषण में सहायक है।"[1] इसी प्रकार प्रो0 आनन्द कुमार ने भी लिखा है कि, "पर्यावरणीय प्रदूषण प्रकृति व पर्यावरण पर कुप्रभाव डालकर पर्यावरणीय संतुलन भंग कर देती है वरन् मानव, पशु व वनस्पति जीवन पर कुप्रभाव डालकर प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से उनके स्वास्थ्य एवं संसाधनों, जो जीवन का अस्तित्व एवं निरन्तरता बनाये रखने कि लिये आवश्यक हैं, को हानि पहुँचाती है।"[2] अतः व्यक्ति और समुदाय के स्वास्थ्य में वृद्धि और रोगों की रोकथाम के लिये पर्यावरणीय प्रदूषण पर तत्काल रोक लगाना अत्यावश्यक है। व्यक्तियों और समाजों के स्वास्थ्य एवं कल्याण के लिये स्वस्थ पर्यावरण का होना अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

क्रेशर उद्योग का व्यक्ति पर प्रभाव -

वर्तमान में पर्यावरण प्रदूषण को देखते हुये क्रेशर उद्योग की स्थिति एवं भूमिका विवादास्पद है। पर्यावरण के साथ खनन क्षेत्र द्वारा जो छेड़छाड़ की जा रही है वह किसी भी दृष्टि से उचित नही कहीं जा सकती हैं। क्रेशर उद्योगों द्वारा प्रकृति के साथ निरन्तर की जा रहीं ज्यादतियाँ मानव जीवन, पर्यावरण एवं पोषण के लिये गम्भीर चुनौती के रूप में उपस्थित हुई हैं जो कि भावी हितों के लिये

1. मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट - 1996
2. कुमार आनन्द, (2000): 'नगरीय समाज शास्त्र' विमल प्रकाशन मन्दिर आगरा-3, पृष्ठ -303

निश्चित रूप से सही नहीं है । क्रेशर उद्योग में पत्थरों को छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँटने का कार्य होता है । इस कार्य के दौरान अनेक प्रकार की पर्यावरणीय प्रदूषण की समस्या उत्पन्न होती है, जैसे- वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण आदि ।

वायु मनुष्य के भौतिक पर्यावरण का अभिन्न अंग है । यह सब प्रकार के जीवन का आधार है । जीवनदायिनी ऑक्सीजन की पूर्ति के अतिरिक्त वायु मानव शरीर को शीतलता प्रदान करती है । श्रवण और गंध की विशिष्ट इंद्रियों की क्रिया का माध्यम वायु-वाहित उद्दीपन है । अतः मानव स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से भी वायु जिसे हम श्वांस द्वारा ग्रहण करते हैं, शुद्ध होना चाहिये । परन्तु क्रेशर उद्योग के कारण वायु प्रदूषित हो जाती है । खनन क्षेत्र में वायु प्रदूषण अधिक हो रहा है । इसका कारण क्रेशरों में पत्थरों की पिसाई की प्रक्रिया के दौरान उठने वाली धूल है । वायु में रेत का अंश मिलने के कारण यह वायु जीवन के लिये गम्भीर बीमारियों की जनक हो गयी है । क्रेशर उद्योगों से उठने वाली धूल न सिर्फ क्रेशर उद्योग बल्कि आस-पास के क्षेत्र में फैल जाती है जिससे चारों ओर धुंध सी छाई रहती है तथा बदली छाने का अहसास होता है । यह धूल युक्त वायु मानव पर्यावरण के लिये अत्यन्त खतरनाक है । यहाँ प्रत्येक चीज पर यही धूल की परत छा जाती है चाहे मकान हों या दुकान यहाँ तक कि खाने-पीने की चीजों में भी यह धूल विद्यमान रहती है एवं भोजन को दूषित कर लोगों की बीमारी का कारण बनती है । क्रेशर उद्योगों के आस-पास बने मकानों की दीवारों एवं छतों पर धूल की पर्त छाई रहती है। यही नहीं उनके मकानों के अन्दर भी धूल प्रत्येक वस्तु पर छा जाती है। इस प्रकार रिहायशी क्षेत्रों पर क्रेशर उद्योग का दुष्प्रभाव पड़ता है तथा धूल के कारण मकानों की शोभा खत्म हो जाती है । इन क्षेत्रों में बनी दुकानों में भी विद्यमान धूल पर्यावरण प्रदूषण का कारण बनती है । जिससे लोग होटलों में मिठाइयाँ और खाना खाने से डरते हैं । दुकानों में बहुत ज्यादा इन्तजाम करने पड़ते हैं । पर्यावरण

प्रदूषण से क्रेशर पर कार्य करने वाले श्रमिकों पर सर्वाधिक दुष्प्रभाव होता है क्योंकि वहाँ कार्य करने के कारण उन्हें ही सबसे ज्यादा धूल का सामना करना पड़ता है। जिसकी बजह से उनको बीमारियाँ उत्पन्न होती है। इन श्रमिकों को धूलयुक्त वातावरण में रहने के कारण श्वसन तन्त्र से सम्बन्धित रोग अधिक होते हैं खासकर फेफड़ों से सम्बन्धित रोग जैसे- तीव्र श्वसनीय शोथ, चिरकारी श्वसनीय शोथ, फुफ्फुस कैंसर, दमा, तपेदिक आदि। इन बीमारियों का खतरा होने के बाबजूद श्रमिकों को इन स्वास्थ्य की दृष्टि से खतरनाक पर्यावरण में दिन-रात काम करना पड़ता है। रोजगार का लालच, निर्धनता तथा पेट की भूख के कारण उनको मजबूरी में यहाँ कार्य करना पड़ता है। जो मजदूर पहाड़ों पर पत्थर तोड़ने का काम करते हैं उन्हें तो अपनी जान पर खेलकर कार्य करना पड़ता है क्योंकि वहाँ विस्फोटकों की मदद से चट्टानों को तोड़ा जाता है और उससे उड़ने वाले पत्थर जोखिम भरे तथा दुर्घटनाओं को निमंत्रित करने वाले होते हैं। जिससे श्रमिकों की जिन्दगी खतरों से घिरी रहती है।

क्रेशर उद्योगों का कृषि पर प्रभाव -

क्रेशर उद्योगां का सर्वाधिक दुष्प्रभाव कृषि पर पड़ा है। खनन क्षेत्र का विस्तार किये जाने एवं कृषि योग्य भूमि पर नयी-नयी क्रेशर उद्योगां की स्थापना होने से कृषि योग्य भूमि कृषि की दृष्टि से अयोग्य होती जा रही है। उर्वरता से युक्त भूमि पर रेतीली धूल के जमा होने से भूमि की उर्वरता समाप्त होती जा रही है। जिससे बंजर भूमि की मात्रा में बढ़ोत्तरी होती जा रही है। यह बंजर जमीन कृषि कार्य के लिये सर्वथा अनउयुक्त होती है। जिन किसानों के खेत क्रेशर उद्योगां के समीप होते हैं उनके खेत धीरे-धीरे करके बंजर हो जाते हैं। क्रेशर उद्योगां से उत्पन्न धूल के कारण फसलों को भी अत्यधिक नुकसान फलसों की पैदावार पर प्रभाव पड़ता है। इसके कारण फसलों की उत्पादन स्तर गिर जाता है। जहाँ तक

क्रेशरों का धुआँ जाता है वहाँ तक की जमीन खराब हो जाती है और वहाँ पर फसल नहीं उगती है तथा कृषकों को मजबूरन खाद तथा उर्वरकों की अधिक मात्रा का उपयोग करना पड़ता है। साथ ही, यदि किसी तरह फसल उगती भी है तो उगने के बाद उस फसल पर क्रेशर की धूल की परतें छा जाती हैं जिससे फसलों को नुकसान पहुँचता है। इन क्षेत्रों की फसलों के रंग भी बदल जाते हैं। इन क्षेत्रों में फसलों को सिंचाई की भी अधिक आवश्यकता होती है। धूल की परत तथा खाद-उर्वरकों के अधिक इस्तेमाल से भूमि की उर्वराशक्ति खत्म हो जाती है।

क्रेशर उद्योगों का दुष्प्रभाव मानव तक ही सीमित नहीं है बल्कि क्रेशरों से निकली धूल से प्रभावित पर्यावरण में जानवरों तथा पक्षियों का भी जीवन दूभर हो गया है। यही कारण है कि क्रेशर उद्योगों के क्षेत्र में पशु-पक्षियों की संख्या भी घटती जा रही है। पशुओं की नस्लें खराब हो जाती है जिससे एक चीज से जुड़ी हुई कई वस्तुऐं है जिनको नुकसान पहुँचता है। प्रदूषण से जब पशुओं की नस्ल खराब होगी तो पशुओं की सेहतमंद न होकर कमजोर हो जायेंगे। जिससे पशु धन का ह्यस हो जायेगा। क्रेशरों से निकली धूल से फसलों को तो नुकसान होता ही है, साथ ही जानवरों को भी चारे की कमी हो जाती है। जब पशुओं को हरा चारा खाने को नहीं मिलेगा तो वे मर ही जायेंगे। इस प्रकार क्रेशर उद्योगों से पर्यावरण के साथ-साथ मानव, पशु-पक्षी सभी प्रभावित होते हैं।

बहुत तीव्र अथवा तेज ध्वनि को शोर कहते हैं। मनुष्य लगातार बढ़ रहे तीव्र ध्वनियुक्त पर्यावरण में रहता है। शोर की परिभाषा है, "गलत समय में गलत स्थान पर गलत आवाज।"[1] स्वास्थ्य के लिये खतरे के रूप में शोर की भूमिका की विवेचना के लिये 'ध्वनि प्रदूषण' शब्द का प्रयोग किया जाता है। ध्वनि की तीव्रता नापने की इकाई डेसिबल है 85 से 95 डेसिबल शोर सहने लायक तथा

1. पार्क के., (2002): कम्यूनिटी हैल्थ साइंस, मैसर्स बनारसीदास भनोत पब्लिशर्स, जबलपुर, पेज-59

120 डेसिबल या उससे अधिक का शोर सहनशक्ति से बाहर होता है। ध्वनि प्रदूषण के स्रोत मुख्यतः मोटरगाड़ियाँ, रेल, बस, हवाई जहाज, रॉकेट, लाउडस्पीकर, कारखाने, मशीनें आदि होते हैं। क्रेशर उद्योगों से उत्पन्न अत्यधिक तीव्र ध्वनि भी ध्वनि प्रदूषण का स्रोत है। ध्वनि प्रदूषण से न केवल श्रवण यंत्र को को क्षति पहुँचती है। बल्कि बोलने में बाधा, बहरापर, कानों में सरसराहट, एकाग्र न हो पाना, अनिद्रा, उद्योगों में दुर्घटनाऐं, शारीरिक परिवर्तन जैसे- रक्तचाप में वृद्धि, हृदय गति में वृद्धि, कार्यक्षमता में कमी, मानसिक तनाव, झुझलाहट आदि भी उत्पन्न होते हैं। ध्वनि प्रदूषण से कानों के अलावा मस्तिष्क, केन्द्रीय तन्त्रिकातंत्र तथा आमाशय पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। वैज्ञानिकों के अनुसंधानों से पता चलता है कि, "85 डेसिबल से ऊपर की ध्वनि के प्रभाव में लम्बे समय तक रहने से व्यक्ति बहरा हो सकता है, 120 डेसिबल से अधिक तीव्र ध्वनि गर्भवती महिलाओं तथा उनके शिशुओं पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है, 100 डेसिबल ध्वनि कान की तन्त्रिकाओं को नष्ट कर देती है तथा 150 डेसिबल ध्वनि कान की पर्दे फाड़ सकती है, 170 डेसिबल ध्वनि त्वचा को जला सकती है तथा 180 डेसिबल ध्वनि मनुष्य की पाचन शक्ति, हृदय तन्त्रिका तथा रक्त वाहिनियाँ संकुचित हो जाती हैं तथा व्यक्ति की कार्यक्षमता प्रभावित होती है।"[1]

ध्वनि प्रदूषण का एक महत्वपूर्ण स्रोत खनन उद्योग भी है। खनन क्षेत्रों में विस्फोटों द्वारा ही खनन कार्य किया जाता है। क्रेशर उद्योगों में भी इस्तेमाल होने वाला पत्थर पहाड़ों से ही आता है। चूँकि बुन्देलखण्ड में पहाड़ों की संख्या पर्याप्त है अतः यहाँ क्रेशर उद्योग को भरपूर प्रोत्साहन मिला है क्योंकि कच्चा माल इन पहाड़ों से आ जाता है। इन पहाड़ों पर उच्च तीव्रता का विस्फोट किया जाता है जिससे चट्टानों के टुकड़े हो जाते हैं। परन्तु इन विस्फोटों के कारण भूकम्पों की

---

1. गुप्ता एम.एल. एवं शर्मा डी.डी.,(2000):समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा-3, पेज -119

सम्भावना तो बढ़ती ही है साथ ही ध्वनि प्रदूषण भी बढ़ता है। क्रेशर मशीनों से भी ध्वनि प्रदूषण फैलता है । इन क्रेशरों में कार्यरत श्रमिकों को लगातार तीव्र ध्वनियुक्त पर्यावरण में रहना पड़ता है जो कि इनके स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ है। ऐसे खतरनाक वातावरण में रहने के कारण इन श्रमिकों को अनेक स्वास्थ्य समस्याओं का सामना करना पड़ता है । क्रेशर मशीनों की ध्वनि से श्रमिकों में बहरापन, कानों में सरसराहट, श्रवण थकान आदि समस्याऐं उत्पन्न हो जाती है। इतना ही नहीं ध्वनि प्रदूषण से श्रमिकों में शारीरिक परिवर्तन जैसे - रक्त चाप में वृद्धि, हृदय गति में वृद्धि, श्वसन गति बाधा, पसीना अधिक आना आदि शिकायतें हो जाती हैं । ध्वनि प्रदूषण से इन श्रमिकों की कार्य क्षमता पर भी असर पड़ता है तथा कार्य क्षमता में कमी आ जाती है तथा क्रोधवृत्ति में वृद्धि, चिड़चिड़ाहट में वृद्धि भी देखी जा सकती है। ध्वनि प्रदूषित वातावरण में रहने के कारण दुर्घटनाओं की सम्भावना भी बढ़ जाती है।

इस अध्याय में शोधार्थी द्वारा क्रेशर उद्योग का प्रभाव श्रमिक स्वास्थ्य पर पर्यावरण पर तथा कृषि भूमि पर अध्ययन किया गया है । क्रेशर उद्योग के प्रभाव का मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव की विवेचना अध्याय के प्रथम भाग में की गई है जिसमें श्रमिकों का क्रेशर उद्योग के पूर्व की स्वास्थ्य दशा, (2) क्रेशर उद्योग की कार्यदशाओं में मनोवैज्ञानिक श्रमिकों की अनुभूति, (3) क्रेशर उद्योग के पूर्व श्रमिकों की स्वास्थ्य स्थिति (4) क्रेशर ध्वनि का कानों पर प्रभाव (5) धूल ध्वनि का शारीरिक प्रभाव (6) क्रेशर उद्योग में होने वाली जौखिम में (7) श्रमिकों की स्वास्थ्य समस्याऐं (8) मनोवैज्ञानिक जोखम में (9) कार्यदशाओं में व्यवहारगत प्रभाव (10) शारीरिक समस्याऐं, (11) प्रभाव की प्रकृति का अध्ययन, आदि जो इस प्रकार है :-

तालिका संख्या -39

क्रेशर उद्योग के कार्य से पूर्व उत्तरदाताओं के स्वास्थ्य की अनुभूति

क्र.	अनुभव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छा	40 (12.06%)	6 (8.73%)
2.	बुरा	176 (53.00%)	36 (52.94%)
3.	सामान्य	116 (34.94%)	26 (38.33%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से विदित होता है कि जनपद झांसी के सर्वाधिक 176 श्रमिक (53.00%) तथा जनपद ललितपुर के सर्वाधिक 36 श्रमिक (52.94%) क्रैशर मिल के पूर्व उनका अच्छा स्वास्थ्य था। दोनों जनपदों में श्रमिकों ने बताया कि वर्तमान से पूर्व स्वास्थ्य अच्छा था।

तालिका संख्या -40

कार्यदशाओं में उत्तरदाताओं की मनोवैज्ञानिक अनुभूति का विवरण

क्र.	अनुभव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छा	69 (20.80%)	13 (19.11%)
2.	बुरा	176 (53.00%)	34 (50.00%)
3.	सामान्य	87 (26.19%)	21 (30.89%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झांसी के सर्वाधिक उत्तरदाताओं 176 क्रेशर श्रमिकों (53.00%) तथा ललितपुर के क्रेशर श्रमिक 34 सर्वाधिक (50.00%) अपनी कार्यदशाओं में मनोवैज्ञानिक रूप में 'बुरा' महसूस करते थे। तुलनात्मक रूप से दोनों जनपदों में श्रमिकों के बीच समानता थी।

तालिका संख्या -41

क्रैशर उद्योगों में कार्य करने से पूर्व उत्तरदाताओं की स्वास्थ्य स्थिति

क्र.	स्वास्थ्य स्थिति	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छा	134 (40.36%)	29 (42.65%)
2.	बुरा	30 (9.04%)	5 (7.35%)
3.	सामान्य	168 (50.60%)	34 (50.00%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि क्रेशर उद्योग में कार्य करने से पूर्व जनपद झांसी की खदानों के 168 श्रमिकों की (50.60%) स्वास्थ्य स्थिति सामान्य थी और जनपद ललितपुर के खदानों के सर्वाधिक 34 श्रमिकों (50.00%) ने अपने स्वास्थ्य के प्रभाव की स्थिति सामान्य ही बताई।

उपरोक्त का कारण क्रेशर उद्योग के प्रभाव से बताया। दोनों जनपदों के उत्तरदाताओं ने क्रेशर उद्योग में कार्य करने से पूर्व अपनी स्वास्थ्य स्थिति को अच्छी/सामान्य बतायी।

निम्नलिखित तालिका क्रेशर मशीन की ध्वनि का श्रमिकों के कानों पर प्रभाव का ब्यौरा प्रस्तुत करती है :-

तालिका संख्या -42

क्रेशर की ध्वनि का उत्तरदाताओं के कानों पर पड़ने वाले प्रभाव का विवरण

क्र.	अनुभव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छा	45 (13.56%)	9 (13.23%)
2.	बुरा	252 (75.90%)	52 (76.47%)
3.	सामान्य	35 (10.54%)	7 (13.23%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झाँसी की खदानों की खदानों के सर्वाधिक 252 श्रमिकों (75.90%) ने क्रेशर उद्योग की ध्वनि का कानों पर पड़ने वाले प्रभाव को बुरा बताया और जनपद ललितपुर की दुकानों के 52 श्रमिकों (76.47%) ने भी प्रभाव को बुरा प्रभाव बताया। सुस्पष्ट है कि क्रेशर की ध्वनि श्रमिकों के कानों पर बुरा प्रभाव डालती थी।

प्रसंगाधीन तालिका क्रेशर की ध्वनि का क्रेशर श्रमिकों के शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -43

उत्तरदाताओं के शरीर पर क्रेशर ध्वनि व धूल के प्रभाव सम्बन्धी विवरण

क्र.	अनुभव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	रक्त चाप में वृद्धि	23 (6.94%)	5 (7.38%)
2.	हृदय गति में वृद्धि	25 (7.53%)	6 (8.82%)
3.	श्वसन में बाधा	35 (10.54%)	8 (11.76%)
4.	पसीना अधिक आना	117 (35.24%)	30 (44.11%)
5.	कार्य क्षमता में कमी	44 (13.25%)	10 (14.70%)
6.	चिढ़चिढ़ाहट में वृद्धि	88 (26.50%)	9 (13.23%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झाँसी व ललितपुर की खदानों के श्रमिकों में शरीर पर क्रेशर की धूल ध्वनि कुप्रभाव बताया। जिसमें झाँसी के श्रमिकों ने सर्वाधिक 117 श्रमिकों ने (35.24%) अत्याधिक पसीना आना तथा ललितपुर के 30 श्रमिकों (44.11%) ने पसीना अधिक आना बताया। इसके अलावा झाँसी के श्रमिकों ने (26.50%) चिढचिढाहट, (10.54%) ने श्वसन में बाधा का, (7.53%) ने हृदय गति में वृद्धि होने को तथा (6.94%) ने रक्त चाप में वृद्धि होना बताया। ललितपुर के श्रमिकों (14.70%) ने कार्य क्षमता में कमी को, (13.23%) ने चिढचिढाहट में वृद्धि को, (11.76%) ने श्वसन में बाधा, (7.38%)

ने रक्त चाप में वृद्धि तथा (8.82%) ने हृदय गति में वृद्धि होना स्वीकार किया। सुस्पष्ट है कि क्रेशर की धूल ध्वनि का श्रमिकों के शरीर पर कुप्रभाव पड़ता है।

निम्नांकित तालिका उत्तरदाताओं के जीवन में क्रेशर उद्योग के कारण होने वाले जोखिमों में वृद्धि पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -44

क्रेशर उद्योग के कारण होने वाली जोखिमों का विवरण

क्र.	जोखिम	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	दुर्घटनाऐं	233 (70.19%)	49 (72.07%)
2.	सर्पदंश	22 (6.62%)	6 (8.82%)
3.	फैफड़ों का कैंसर	77 (23.19%)	13 (19.11%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि क्रमशः जनपद झाँसी की खदानों के 233 श्रमिकों (70.19%) तथा ललितपुर के 49 श्रमिकों (72.07%) ने कार्य दशाओं में दुर्घटनाओं की जोखिम बताई। झाँसी में फैफड़ों के कैंसर की (23. 19%) तथा ललितपुर की खदानों में (19.11%) जौखिम में बताई। झाँसी में सर्पदंश की (6.62%) तथा ललितपुर खदानों में (8.82%) जोखिम में बताई। दोनों ही जनपदों में क्रेशर उद्योग के कारण होने वाले जोखिम में लगभग समान ही थी।

निम्नलिखित तालिका उत्तरदाताओं की स्वास्थ्य समस्याओं पर आधारित है :-

तालिका संख्या -45

उत्तरदाताओं की स्वास्थ्य समस्याओं सम्बन्धी विवरण

क्र.	स्वास्थ्य समस्याऐं	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	दमा	34 (10.24%)	8 (11.76%)
2.	क्षय	19 (5.72%)	6 (8.84%)
3.	खाँसी	17 (5.12%)	4 (5.88%)
4.	बहरापन	18 (5.62%)	3 (4.41%)
5.	उदर रोग	17 (5.12%)	3 (4.41%)
6.	श्वसनीशोथ	11 (0.68%)	4 (5.88%)
7.	कोई नहीं	216 (67.50%)	40 (58.82%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि उत्तरदाताओं की स्वास्थ्य समस्याओं सम्बन्धी अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि जनपद झाँसी के श्रमिकों ने दमा की (10.24%), क्षय की (5.72%), खाँसी की (5.12%), बहरापन की (5. 62%), उदर रोग की (5.12%), तथा श्वसन शोथ की (0.68%) स्वास्थ्य समस्याऐं बताई। जनपद ललितपुर के श्रमिकों ने दमा की (11.76%), क्षय की (8. 84%), खाँसी की (5.88%), बहरापन की (4.41%), उदर रोग की (4.41%), श्वसन शोथ की (5.88%) स्वास्थ्य समस्याऐं बताई। तुलनात्मक रूप से ललितपुर जनपद की खदानों के श्रमिकों में (5.20%) श्वसनी शोथ की तथा क्षय

रोग की (3.31%) अधिक, समस्याऐं बताई। योग रूप से ललितपुर में (41.18%) तथा झाँसी क्षेत्र में (32.50%) स्वास्थ्य समस्याऐं की जबकि झाँसी में (67.50%) तथा ललितपुर में (58.82%) श्रमिकों ने कोई नहीं स्वास्थ्य समस्या बताई। ये वे श्रमिक थे जो 16-30 आयु वर्ग के थे तथा शेष नई भर्ती में काम करने आये थे।

प्रस्तुत तालिका क्रेशर उद्योग के कारण श्रमिकों में उत्पन्न होने वाले मनोवैज्ञानिक जोखिमों पर आधारित है :-

तालिका संख्या -46

उत्तरदाताओं में मनोवैज्ञानिक जोखिमों सम्बन्धी विवरण

क्र.	अनुभव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	असुरक्षा की भावना में वृद्धि	216 (65.05%)	43 (63.23%)
2.	भावात्मक तनाव	35 (10.93%)	8 (11.76%)
3.	अस्थायी मानव सम्बन्ध	30 (8.66%)	7 (10.31%)
4.	रोजगार का अभाव	31 (15.36%)	10 (14.70%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

प्रसंगाधीन तालिका में क्रेशर उद्योग के कारण श्रमिकों में उत्पन्न होने वाली मनोवैज्ञानिक जोखिमों सम्बन्धी अध्ययन के अवलोकन से स्पष्ट है कि झाँसी के उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 216 उत्तरदाताओं 65.05 प्रतिशत का मानना था कि क्रैशर मिल के कारण असुरक्षा की भावना में वृद्धि होती है, 15.36 प्रतिशत उत्तरदाताओं के मतानुसार रोजगार की अभाव, 10.93 प्रतिशत उत्तरदाताओं की राय में भावात्मक तनाव तथा 8.66 के मतानुसार क्रेशर उद्योग श्रमिकों में अस्थायी मानव सम्बन्ध मनोवैज्ञानिक जोखिमों को जन्म देती है। इसके विपरीत

जनपद ललितपुर की खदानों के श्रमिकों में सर्वाधिक असुरक्षा की भावना 63.23 प्रतिशत, रोजगार का अभाव 14.70 प्रतिशत, भावात्मक तनाव 11.76 प्रतिशत तथा अस्थाई मानव सम्बन्ध 10.30 प्रतिशत की मनोवैज्ञानिक जोखिमों का बताया। दोनों जनपदों में स्थिति समान रूप की थी।

निम्नलिखित तालिका उत्तदाताओं की शारीरिक समस्याओं पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -47

उत्तरदाताओं में क्रेशर में कार्य करने से होने वाली शारीरिक समस्याऐं

क्र.	अनुभव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	असमय वृद्धावस्था	17 (5.12%)	4 (5.89%)
2.	कन्धों में दर्द	48 (12.04%)	9 (13.24%)
3.	गर्दन में दर्द	27 (8.15%)	5 (7.35%)
4.	पीठ दर्द	35 (10.54%)	8 (11.76%)
5.	कुछ नहीं	213 (64.15%)	42 (61.76%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झाँसी की खदानों के श्रमिकों (12.04%) कन्धों में दर्द, (10.54%) ने पीठ में दर्द, (8.15%) ने गर्दन में दर्द तथा (5.12%) ने असमय वृद्धावस्था की शारीरिक समस्याऐं होना बताया। इसके विपरीत जनपद ललितपुर के श्रमिकों ने (13.24%) कन्धों में दर्द, (11.76%) ने पीठ दर्द, (7.35%) ने गर्दन में दर्द तथा (5.89%) ने असमय वृद्धावस्था की समस्या बताई। स्थिति लगभग दोनों जनपदों के श्रमिकों में एक समान ही थी।

दोनों जनपदों में, झाँसी में (64.15%) ने तथा ललितपुर के (61.76%) ने "कुछ नहीं" समस्याओं को बताया।

प्रसंगाधीन तालिका क्रेशर की धूल का वायु पर प्रभाव सम्बन्धी विवरण प्रस्तुत करती है :-

तालिका संख्या -48

क्रेशर की धूल का वायु पर पड़ने वाले प्रभाव की प्रकृति का विवरण

क्र.	अनुभव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छी	9 (2.72%)	2 (3.00%)
2.	बुरी	283 (85.24%)	58 (85.24%)
3.	सामान्य	40 (12.04%)	8 (11.76%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

झाँसी जनपद के 332 चयनित उत्तरदाताओं से जब पूछा गया कि क्रेशर की धूल का वायु पर क्या प्रभाव पड़ता है, तब ज्ञात हुआ कि सर्वाधिक 85.24 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना था कि क्रेशर की धूल का वायु पर बुरा प्रभाव पड़ता है जबकि 40 प्रतिशत उत्तरदातों के (12.04%) मतानुसार सामान्य तथा 2.72 प्रतिशत उत्तरदाताओं के कथनानुसार अच्छा प्रभाव पड़ता है। इसके विपरीत ललितपुर जनपद के (85.24%) श्रमिकों ने वायु पर धूल का बुरा प्रभाव बताया, (11.76%) ने सामान्य तथा (3.00%) ने अच्छा प्रभाव बताया। सारांश यह है कि दोनों खदानों के श्रमिकों के क्रैंशर की धूल से वायु प्रदूषण होना स्वीकार किया।

प्रस्तुत तालिका क्रैशर की धूल का जलस्रोतों पर प्रभाव सम्बन्धी अध्ययन पर आधारित है :-

तालिका संख्या -49

क्रेशर की धूल का जल स्रोतों पर पड़ने वाले प्रभाव की प्रकृति का विवरण

क्र.	अनुभव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छी	-	-
2.	बुरी	294 (88.55%)	54 (79.41%)
3.	सामान्य	38 (11.45%)	4 (20.59%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद झाँसी के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 294 उत्तरदाताओं (88.55%) का मानना था कि क्रेशर की धूल का जल स्रोतों पर बुरा प्रभाव पड़ता है जबकि (11.45%) उत्तरदाताओं के मतानुसार सामान्य प्रभाव पड़ता है। इसके विपरीत जनपद ललितपुर के 68 चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक (79.41%) ने क्रेशर की धूल का जल स्रोतों पर पड़ने वाले प्रभाव को बुरा बताया। सुस्पष्ट है कि क्रेशर मिल से उड़ने वाली धूल से जल स्रोतों का पानी प्रदूषित होता है।

निम्नांकित तालिका क्रेशर ध्वनि से पक्षियों पर होने वाले प्रभाव पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -50

क्रेशर यंत्र की ध्वनि का पक्षियों पर पड़ने वाले प्रभाव का विवरण

क्र.	अनुभव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छी	-	-
2.	बुरी	251 (75.60%)	42 (61.76%)
3.	सामान्य	81 (24.40%)	26 (38.24%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

झाँसी जनपद के 332 चयनित उत्तरदाताओं से क्रेशर ध्वनि से पक्षियों पर होने वाले प्रभाव सम्बन्धी जानकारी करने पर पता चला कि 251 उत्तरदाताओं (75.60%) के अनुसार क्रेशर ध्वनि से पक्षियों पर बुरा प्रभाव पड़ता है जबकि 24.40 प्रतिशत उत्तरदाता मानते थे कि क्रेशर ध्वनि से पक्षियों पर सामान्य प्रभाव पड़ता है इसके विपरीत ललितपुर के उत्तरदाताओं से पूछने पर ज्ञात हुआ कि (61.76%) उत्तरदाता क्रेशर यंत्र की ध्वनि का पक्षियों पर बुरा प्रभाव पड़ना मानते थे तथा (38.24%) 'सामान्य' प्रभाव पड़ना मानते थे। परन्तु ललितपुर की तुलना में (13.54%) झाँसी के उत्तरदाता अधिक पक्षियों पर 'बुरा' पड़ना मानते थे वहीं झाँसी की तुलना में (13.84%) ललितपुर के उत्तरदाता ध्वनि के प्रभाव को पक्षियों के प्रसंग में सामान्य प्रभाव पड़ना मानते थे।

निम्नांकित तालिका क्रेशर की धूल तथा ध्वनि से वनस्पति पर होने वाले प्रभाव का ब्यौरा प्रस्तुत करती है :-

तालिका संख्या -51

क्रेशर की धूल तथा ध्वनि का वनस्पति पर पड़ने वाले प्रभाव की प्रकृति का विवरण

क्र.	अनुभव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छी	5 (8.49%)	5 (7.36%)
2.	बुरी	251 (75.60%)	55 (80.88%)
3.	सामान्य	76 (22.89%)	8 (11.76%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि झाँसी के 332 चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 251 उत्तरदाता (75.60%) मानते थे कि क्रेशर की धूल ध्वनि का वनस्पति पर बुरा प्रभाव पड़ता है जबकि 76 उत्तरदाता (22.89%) मानते थे कि धूल ध्वनि का प्रभाव सामान्य पड़ता है। जब कि ललितपुर के 68 चयनित उत्तरदाताओं से पूँछा गया तो 55 सर्वाधिक (80.88%) ने क्रेशर उद्योग की धूल ध्वनि का वनस्पति पर पड़ने वाले प्रभाव को बुरा बताया तथा (11.76%) ने सामान्य प्रभाव पड़ना स्वीकार किया। दोनों जनपदों की खदानों पर कार्यरत उत्तरदाताओं ने धूल ध्वनि का वनस्पति पर पड़ने वाले प्रभाव को बुरा बताया।

प्रसंगाधीन तालिका क्रेशर से समाज पर पड़ने वाले प्रभाव पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -52

क्रेशर यंत्र/उद्योग का समाज पर पड़ने वाले प्रभाव की प्रकृति का विवरण

क्र.	समाज पर प्रभाव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छी	-	-
2.	बुरी	207 (64.68%)	46 (67.64%)
3.	सामान्य	125 (35.32%)	22 (32.36%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि झाँसी के 332 चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 207 उत्तरदाता (64.68%) मानते थे कि क्रेशर उद्योग का समाज पर बुरा प्रभाव पड़ता है जबकि (35.32%) उत्तरदाताओं के अनुसार सामान्य क्रेशर उद्योग का समाज पर प्रभाव पड़ता। इसके विपरीत 68 ललितपुर के उत्तरदाता में से सर्वाधिक 46 उत्तरदाता (67.64%) क्रेशर का समाज का पड़ने वाले प्रभाव का बुरा मानते थे और (32.36%) 'सामान्य' दोनों ही जनपदों में क्रेशर के प्रभाव को एक समान ही बुरा मानते थे।

निम्नांकित तालिका क्रेशर की धूल ध्वनि से भूमि पर पड़ने वाले प्रभाव पर आधारित है :-

तालिका संख्या -53

क्रेशर उद्योग की धूल ध्वनि से भूमि पर पड़ने वाले प्रभाव की प्रकृति का विवरण

क्र.	समाज पर प्रभाव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छी	5 (1.51%)	1 (1.47%)
2.	बुरी	300 (90.36%)	63 (92.65%)
3.	सामान्य	27 (8.13%)	9 (5.88%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

क्रेशर उद्योग की धूल ध्वनि का भूमि पर प्रभाव सम्बन्धी अध्ययन करने पर विदित हुआ कि झाँसी जनपद के 300 चयनित उत्तरदाताओं मेंसे सर्वाधिक 300 उत्तरदाता (90.36%) मानते थे कि क्रेशर उद्योग की धूल ध्वनि से भूमि पर बुरा प्रभाव पड़ता है जबकि ललितपुर क्षेत्र के 63 उत्तरदाताओं (92.65%) के मतानुसार भी भूमि पर बुरा प्रभाव बताया गया। उनका कहना था कि मशीन चलने व पत्थर टूटने की गर्जना से भूमि में कम्पन होने लगता है जिसके कारण भूमि पर उत्पादन के सन्दर्भ में सभी प्रकार का बुरा प्रभाव पड़ता है।

निम्नलिखित तालिका क्रेशर उद्योग फसल के उगने पर पड़ने वाले प्रभाव का विवरण प्रस्तुत करती है :-

तालिका संख्या -54

क्रेशर उद्योग की धूल-ध्वनि का फसल पर पड़ने वाले प्रभाव की प्रकृति

क्र.	फसल पर प्रभाव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छी	12 (3.60%)	2 (2.95%)
2.	बुरी	283 (85.24%)	58 (85.30%)
3.	सामान्य	37 (11.16%)	8 (11.75%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि झाँसी जनपद के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 283 उत्तरदाता (85.24%) मानते थे कि क्रेशर उद्योग से फसलों के उगने पर बुरा प्रभाव पड़ता है जबकि ललितपुर क्षेत्र के 58 उत्तरदाता (85.30%) की भी यी मानना था। वे कहते थे कि धूल ध्वनि के प्रदूषण से फसल की पैदावार कम होती है।

प्रसंगाधीन तालिका फसल के पकने पर क्रेशर उद्योग के प्रभाव सम्बन्धी विवरण पर आधारित है :-

तालिका संख्या -55

क्रेशर उद्योग की फसल के पकने पर प्रभाव की प्रकृति का विवरण

क्र.	फसल पर प्रभाव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छी	21 (6.33%)	2 (2.94%)
2.	बुरी	251 (75.60%)	53 (77.95%)
3.	सामान्य	60 (18.07%)	13 (19.11%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

क्रेशर उद्योग का फसलों के पकने पर पड़ने वाले प्रभाव सम्बन्धी अध्ययन करने पर विदित हुआ कि चयनित झाँसी क्षेत्र के उत्तरदाताओं में से 251 उत्तरदाताओं (75.60%) के अनुसार क्रेशर उद्योग से फसलों के पकने पर बुरा प्रभाव पड़ता है जबकि ललितपुर क्षेत्र के 53 उत्तरदाता (77.95%) मानते थे कि क्रेशर उद्योग की धूल व ध्वनि फसल को प्राकृतिक समय से पकने की प्रक्रिया में विलम्ब करती है।

प्रस्तुत तालिका भूमि की उर्वराशक्ति पर क्रेशर उद्योग के प्रभाव सम्बन्धी अध्ययन पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -56

भूमि की उर्वराशक्ति पर क्रेशर उद्योग के प्रभाव की प्रकृति का विवरण

क्र.	उर्वरा शक्ति पर प्रभाव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छी	-	2 (2.94%)
2.	बुरी	300 (90.36%)	2 (2.94%)
3.	सामान्य	32 (9.64%)	63 (92.65%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि जब जनपद झाँसी के उत्तरदाताओं से पूछा गया कि भूमि की उर्वराशक्ति पर क्रेशर उद्योग का क्या प्रभाव पड़ता है, तब ज्ञात हुआ कि चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 300 उत्तरदाता (90. 36%) मानते थे कि क्रेशर उद्योग से भूमि की उर्वरा शक्ति पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार जनपर ललितपुर के 63 उत्तरदाताओं (92.65%) ने क्रेशर उद्योग से भूमि की उर्वरा शक्ति पर बुरा प्रभाव पड़ना बताया। पत्थर के बारीक कण भूमि में मिलने के कारण भूमि के प्राकृतिक प्रजनन स्वभाव में परिवर्तन कर देते हैं।

प्रसंगाधीन तालिका फसलों को सिंचाई की आवश्यकता की मात्रा पर संक्षिप्त प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -57

फसलों की सिंचाई की आवश्यकता की मात्रा पर प्रभाव की प्रकृति का विवरण

क्र.	सिंचाई की आवश्यकता	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	अच्छी	9 (2.70%)	4 (5.88%)
2.	बुरी	40 (12.04%)	6 (8.84%)
3.	सामान्य	283 (85.24%)	58 (85.28%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

झाँसी क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं से जब पूछा गया कि क्षेत्र में क्रेशर उद्योग लग जाने के पश्चात वर्तमान में फसलों की सिंचाई की कितनी आवश्यकता पड़ती है, तब सर्वाधिक 283 उत्तरदाताओं (85.24%) के अनुसार फसलों को वर्तमान में सिंचाई की अधिक आवश्यकता पड़ती है तथा जनपद ललितपुर क्षेत्र के 58 उत्तरदाताओं (85.28%) ने भी "अधिक" सिंचाई की आवश्यकता बतायी। स्पष्ट है कि क्रेशर उद्योग की धूल का प्रभाव पड़ता है। क्योंकि धूल पानी ऊपरी सतह पर ही शोक लेती है तथा भूमि के भीतर पौधों की जड़ों में पानी नहीं पहुंचने देती।

प्रसंगाधीन तालिका क्रेशर उद्योगों के लगने के पश्चात भूमि को खादों की आवश्यकता की मात्रा पर प्रकाश डालती है :-

तालिका संख्या -58

क्रेशर उद्योगों का भूमि को खादों की आवश्यकता की मात्रा पर प्रभाव का विवरण

क्र.	खादों की आवश्यकता पर प्रभाव	जनपद	
		झाँसी	ललितपुर
1.	कम	9 (2.30%)	3 (4.42%)
2.	सामान्य	19 (5.72%)	6 (8.82%)
3.	अधिक	304 (91.57%)	59 (86.76%)
	योग	332 (100.00%)	68 (100.00%)

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से विदित होता है कि झाँसी क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 304 उत्तरदाता (91.57%) मानते थे कि क्रेशर उद्योग लग जाने के पश्चात् भूमि को वर्तमान में खाद उर्वरक की अधिक आवश्यकता पड़ती है । इसके विपरीत जनपद ललितपुर के 59 उत्तरदाता (86.76%) भी क्रेशर उद्योग का भूमि की खादों की आवश्यकता की मात्रा पर प्रभाव बताते थे । दोनों क्षेत्रों के उत्तरदाताओं का मानना था कि क्रेशर की धूल भूमि की प्राकृतिक उर्वरा शक्ति को समापन करती हैं ।

♣♣♣

अध्याय - 10

शोधाध्ययन के निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध अध्ययन क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की जनपद झाँसी तथा ललितपुर की खदानों पर आधारित का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन था। जिसके अध्यनार्थ शोधार्थी ने जनपद झाँसी की 60 खदानों से 332 उत्तरदाता तथा ललितपुर से 68 योग 400 उत्तरदाताओं निदर्शन आकार शोध हेतु रेन्डम विधि अनियमित पद्धति से किया गया ताकि दोनों जनपदों की खदानों का उनके आयु, आय, व्यवसाय, तथा जाति का प्रतिनिधित्व हो सके। इस शोध में प्राथमिक आंकड़ों का संकलन तथा क्षेत्रीय कार्य पूर्ण परीक्षित एवं संचरित 'साक्षात्कार अनुसूची' द्वारा साक्षात्कार की प्रत्यक्ष पूछताछ प्रणाली एवं सहभागी अवलोकन प्रविधि द्वारा किया गया। प्रस्तुत शोध कार्य अन्वेषणात्मक प्ररचना पर आधारित था।

बुन्देलखण्ड (उ0प्र0) जिसमें झाँसी, ललितपुर, बाँदा, महोबा, हमीरपुर, चित्रकूट तथा जनपद उरई (जालौन) मुख्यः आते हैं। यहां खनन का मुख्य कार्य विशेषकर झाँसी, ललितपुर तथा महोबा में होता है। यह कार्य इन जनपदो में स्वतंत्रता से पूर्व ही होता आ रहा है। इन खदानों के श्रमिक जो गरीबी रेखा से नीचे जीवन व्यतीत करते हैं, जाति से पिछड़े व अनुसूचित, अशिक्षित, गरीब तथा परम्पराओं व अन्ध विश्वासी होते है। जिनका राष्ट्र के उत्पादन में बड़ा योगदान होता है परन्तु राष्ट्रीय आय का लाभ इनके पास अभी तक नहीं पहुँचा है। यद्यपि सरकार ने इनके उत्थान हेतु अनेक प्रयास किए है परन्तु इनकी सामाजिक एवं आर्थिक दशाओं में तनिक भी परिवर्तन नहीं आया क्योंकि ये आज भी

अशिक्षित-अज्ञान तथा असंगठित क्षेत्र के श्रमिक जो हैं। जिन क्रेशरों पर ये श्रमिक कार्य करते है उसकी धूल तथा ध्वनि का कुप्रभाव मानव स्वास्थ्य पर, पर्यावरण तथा कृषि पर पड़ता है। इसलिए यह शोध महत्वपूर्ण एवं उपयोगी भी है। इन्हीं परिस्थितियों ने शोधार्थी को शोध के लिए प्रेरित भी किया।

प्रस्तुत शोध के निम्न उद्देश्य शोधार्थी द्वारा निरूपित किए गये जो निम्नवत् थे :-

1. जनपद झाँसी तथा ललितपुर की सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना।
2. क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की सामाजिक तथा जनांककीय विशेषताओं का अध्ययन करना।
3. जनपद झाँसी व ललितपुर के उत्तरदाताओं की सामाजिक स्थिति की समीक्षा करना।
4. जनपद झाँसी/ललितपुर के उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति की समीक्षा करना।
5. जनपद झाँसी/ललितपुर के श्रमिकों की राजनैतिक दशा की समीक्षा करना तथा
6. क्रेशर उद्योग की धूल-ध्वनि का मानव स्वास्थ्य, पर्यावरण तथा कृषि पर पड़ने वाले कुप्रभाव का अध्ययन करना।

प्रस्तुत शोध की विषय वस्तु को निम्न 10 अध्याय में विभक्त किया गया है जिसका विवरण इस प्रकार है :-

1. प्रथम अध्याय में शोध की विस्तृत प्रस्तावना तथा उद्देश्य का विवरण प्रस्तुत किया गया है।
2. दूसरे अध्याय में शोध विधि का उल्लेख किया गया है।
3. तृतीय अध्याय में सम्बन्धित साहित्य का पुर्नावलोकन किया गया है।

4. चतुर्थ अध्याय में झाँसी/ललितपुर की विविध पृष्ठभूमि की व्याख्या की गई है।

5. पंचम अध्याय में उत्तरदाताओं की सामाजिक एवं जनांककीय विशेषताओं का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

6. षष्टम् अध्याय में उत्तरदाताओं की सामाजिक दशा की समीक्षा का उल्लेख किया गया है।

7. सप्तम् अध्याय में उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति की समीक्षा प्रस्तुत की गई है।

8. अष्टम् अध्याय में राजनैतिक दशा की समीक्षा की गई है।

9. नवम् अध्याय में क्रेशर उद्योग के कुभाव का उल्लेख किया गया है तथा

10. दसवें अध्याय में शोध के निष्कर्ष प्रस्तुत किए गये हैं।

1.0 <u>उत्तरदाताओं की सामाजिक एवं जनांककीय विशेषताऐं :</u>

1.1 <u>आयु :</u> जनपद झांसी क्षेत्र के क्रेशर उद्योग के 183 सर्वाधिक (55.12%) 26-30 वर्ष तथा ललितपुर क्षेत्र के 34 सर्वाधिक (50.00%) भी 26-30 आयु वर्ग के थे। शोधार्थी ने अवलोकन में पाया कि ललितपुर की खानों पर बालश्रम था परन्तु वह लिखित रूप से न था।

1.2 <u>लिंग :</u> झांसी की खदानों पर (81.92%) पुरूष तथा (18.08%) महिलाऐं तथा ललितपुर की खदानों पर (75.00%) पुरूष तथा (25.00%) महिलाऐं कार्यरत थी। झांसी की तुलना में ललितपुर में (6.02%) महिलाऐं अधिक श्रमिक थी।

1.3 <u>जाति :</u> झांसी की कृषि खदानों में 262 सर्वाधिक (79.91%) अनुसूचित जाति तथा (20.09%) पिछड़ी जाति के तथा इसके विपरीत जनपद ललितपुर

की खदानों में (53.94%) अनुसूचित जाति व (22.06%) पिछड़ी जाति के श्रमिक थे।

1.4 <u>परिवार का स्वरूप</u> : झाँसी की खदानों के (50.90%) श्रमिक एकांकी तथा (49.10%) संयुक्त परिवारी थे जबकि ललितपुर के श्रमिक (54.41%) एकांकी परिवार तथा शेष (45.59%) संयुक्त परिवारों में रहते थे। झाँसी क्षेत्र में (3.51%) परिवार ललितपुर की तुलना में कम एकांकी परिवार थे।

1.5 <u>वैवाहिक स्तर</u> : झाँसी की खदानों के (89.45%) विवाहित तथा (10.55%) विधवा/विधुर थे। ललितपुर के (79.42%) विवाहित तथा (10.29%) श्रमिक विधवा/विधुर थे। झाँसी क्षेत्र के (10.03%) अधिक श्रमिक ललितपुर से विवाहित तथा (10.29%) अविवाहित थे।

1.6 <u>विवाह का रूप</u> : जनपद झाँसी के श्रमिकों के (90.04%) बाल विवाहित थे, (3.32%) विधवा विवाहित तथा (6.64%) पुर्नविवाहित थे जबकि ललितपुर के श्रमिकों के विवाहों के रूपों में (89.70%) बाल विवाह, (4.42%) विधवा विवाह तथा (5.88%) पुर्नविवाहित थे। विवाहों के रूपों का दोनों जनपदों में समान रूप था।

1.7 <u>आवासीय स्थिति</u> : झाँसी के श्रमिक और ललितपुर के श्रमिक क्रमशः (50.30%) व (48.52%) झोपड़ी में रहते थे लगभग (37.38%) कच्चा-पक्का घरों में रहते थे। तुलनात्मक रूप से ललितपुर के श्रमिक (6.43%) झाँसी से कम पक्के घरों में रहते थे।

1.8 <u>विवाह की आयु</u> : झाँसी जनपद के श्रमिकों के सर्वाधिक (60.25%) का विवाह 18-20 वर्ष की आयु में, (20.48%) का विवाह 15-17 वर्ष की आयु में तथा (19.27%) का विवाह 21 वर्ष में हुआ था। इसके विपरीत ललितपुर

के (76.47%) की शादी 18-20 वर्ष में, (20.58%) की शादी 15-17 वर्ष आयु में तथा (2.95%) की शादी 21 वर्ष में हुयी थी। दोनों जनपदों में बालविवाह का प्रचालन विवाह अधिनियम 1978 की अज्ञानता थी।

1.9 <u>लड़कियों की शादी की आयु :</u> जनपद झाँसी के (66.56%) श्रमिक अपनी पुत्रियों की शादी 15 वर्ष में तथा (23.44%) 21 वर्ष में रचाते थे। जबकि ललितपुर के (76.47%) अपनी पुत्रियों की शादी 15 वर्ष में तथा (23.53%) 21 वर्ष में करते थे। झाँसी की तुलना में (9.91%) विवाह ललितपुर के श्रमिकों में 15 वर्ष की आयु में अधिक होते थे।

2.0 <u>क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की सामाजिक स्थिति सम्बन्धी निष्कर्ष :-</u>

2.1 <u>आवासीय दशा :</u> जनपद झाँसी तथा ललितपुर के उत्तरदाताओं की आवासी सुविधाऐं जिसमें विद्युतपूर्ति, आंगन, शौचालय, भोजन कक्ष, तथा पृथक से स्नानगृह की सुविधा औसतन (81.14%) नहीं थी।

2.2 <u>कपड़े :</u> जनपद झाँसी के उत्तरदाता (62.95%) तथा ललितपुर के उत्तरदाता (82.35%) 'ठेले वाले' तथा झाँसी के (14.16%) 'प्रयोग किए गये' तो ललितपुर के (4.42%) प्रयोग किए गये वस्त्र पहिनते थे। झाँसी की तुलना में ललितपुर के श्रमिक (19.40%) अधिक ठेले वाले तथा ललितपुर की तुलना में झाँसी के श्रमिक (9.66%) अधिक नये कपड़े प्रयोग करते थे।

2.3 <u>संस्थानों की सदस्यता :</u> झाँसी के उत्तरदाता (59.03%) व ललितपुर के उत्तरदाता समाज की किसी संस्था के सदस्य नहीं थे।

2.4 <u>सामाजिक पहिचान :</u> झाँसी जनपद के उत्तरदाता की (87.34%) तथा ललितपुर के उत्तरदाताओं की (94.12%) सामाजिक पहिचान नहीं थी।

2.5 <u>स्वतन्त्रता :</u> झाँसी के उत्तरदाताओं का (28.61%) कार्य करने की, (31.32%) अभिव्यक्त की तथा (25.30%) न्याय की स्वतंत्रता थी। इसके

विपरीत ललितपुर के उत्तरदाताओं को (42.64%) 'कार्य की' (39.70%) 'आभिव्यक्त' की तथा (17.76%) न्याय की स्वतंत्रता थी।

2.6 <u>सामाजिक सुरक्षा :</u> जनपद झांसी के उत्तरदाताओं के पास (12.65%) बीमा के, (21.08%) 'मासिक बचत' तथा (0.90%) मासिक आय योजना तो ललितपुर के उत्तरदाताओं के पास (2.95%) मासिक आय योजना, (22.05%) मासिक वचत योजना के उपाय थे। जनपद झाँसी के उत्तरदाताओं के पास (65.36%) तथा ललितपुर के उत्तरदाताओं के (75.00%) पास सामाजिक सुरक्षा के कोई उपाय नहीं थे।

2.7 <u>रहन-सहन की दशाऐं :</u> जनपद झाँसी के उत्तरदाताओं की (71.38%) 'पोषण स्थिति', (77.71%) 'कार्य दशाऐं' तथा (87.34%) असन्तुष्ट पूर्ण जीवन स्तर था। इसी प्रकार जनपद ललितपुर के उत्तरदाताओं की (83.82%) पोषण स्थिति, (85.29%) की कार्य दशाऐं असंतुष्ट पूर्ण थी। परन्तु झाँसी के (87.34%) तथा ललितपुर के (88.23%) उत्तरदाताओं का वैवाहिक जीवन सन्तुष्टपूर्ण था।

2.8 <u>जीवन गुणवत्ता :</u> झाँसी के उत्तरदाता (65.37%) 'आराम' तथा ललितपुर के उत्तरदाता (94.11%) को जीवन में 'आराम' नहीं मिलता था। झाँसी के उत्तरदाताओं ने (59.04%) तथा 'स्वास्थ्य' को (62.34%) संतुष्ट पूर्ण बताया। इसके विपरीत ललितपुर के उत्तरदाताओं (66.17%) जीवन से 'अप्रसन्न' तथा (50.00%) अपने स्वास्थ्य स्थिति को असंतुष्ट बताते थे।

2.9 <u>मनोरंजन के साधन :</u> झाँसी के उत्तदाताओं के पास सर्वाधिक (50.31%) रेडियों, (4.51%) टी0वी0 तथा (9.33%) पर सिनेमा देखने से मनोरंजन के साधन थे और (35.85%) के पास 'कुछ नहीं'। इसके विपरीत ललितपुर के उत्तरदाताओं के पास (25%) रेडियों, (8.83%) के पास टी0वी0 तथा

(11.76%) के पास सिनेमा देखना मनोरंजन का साधन था। (54.41%) के पास मनोरंजन का कोई साधन नहीं थे।

2.10 सूचना स्रोत : झाँसी के उत्तरदाता (50%) रेडियों से, (4.51%) टी0वी0से, (36.16%) नाई, नेता तथा सरकारी तंत्र से सूचना एकत्र करते थे। इसके विपरीत ललितपुर के उत्तरदाता (25%) रेडियों से, (8.83%) टी0वी0 तथा (33.82%) नाई-नेता तथा सरकारी तंत्र से तथा (32.35%) अन्य स्रोतों से सूचना एकत्र करते थे।

2.11 आवागमन के साधन : झाँसी उत्तरदाता (65.36%) साईकिल से तथा ललितपुर जनपद के उत्तरदाता सर्वाधिक (79.41%) साईकिल से ही क्रेशर मिल आते-जाते थे। झाँसी के (28.63%) तथा ललितपुर के (14.70%) उत्तरदाताओं पर कोई आवागमन का साधन नहीं था।

2.12 मालिकों का व्यवहार : झाँसी के उत्तरदाताओं (78.31%) ने बताया कि मालिकों का उनके प्रति 'मजदूरों' जैसा ही व्यवहार था। ललितपुर के (75%) उत्तरदाताओं की ऐसी ही राय थी।

3.0 क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति सम्बन्धी शोध निष्कर्ष :-

3.1 दैनिक मजदूरी : झाँसी के उत्तरदाताओं की सर्वाधिक (83.43%) की मजदूरी 50/- प्रतिदिन तथा ललितपुर के (85.29%) की मजदूरी 50/- प्रतिदिन थी। दोनों जनपदों की औसतन (83.75%) की मासिक मजदूरी रू0 50/- ही थी।

3.2 कार्य दिवस : झाँसी के उत्तरदाता (61.45%) तथा ललितपुर के उत्तरदाता (69.12%) माह में 25 दिन कार्य कर पाते थे। यौगिक रूप से (62.75%) क्रेशर श्रमिकों को 25 दिन से अधिक काम नहीं मिलता था।

3.3 कार्यावधि : झाँसी के उत्तरदाता (56.63%) तथा ललितपुर के उत्तरदाता (60.29%) उत्तरदाता क्रेशर मिल में 10 घण्टे प्रतिदिन कार्य करते थे जबकि दोनों जनपदों की खदानों में 8 घण्टे कार्य करने का नियम था।

3.4 वेतन अदायगी : दोनों झाँसी तथा ललितपुर के उत्तरदाताओं ने बताया कि सर्वाधिक क्रमशः (70.18%) व (61.76%) उन्हें मासिक वेतन की अदायगी की जाती थी।

3.5 भू-सम्पत्ति : जनपद झाँसी के (72.51%) पर तथा ललितपुर के (67.66%) उत्तरदाताओं के पास भूमि नहीं थी। इस प्रकार औसत (71.75%) क्रेशर मिल के श्रमिक भूमिहीन मजदूर थे।

3.6 ऋणग्रस्तता : झाँसी जनपद के सर्वाधिक क्रमशः (34.93%) रू0 1000 के तथा (25.90%) रू0 4000 के ऋण ग्रस्त थे। जनपद ललितपुर के उत्तरदाता सर्वाधिक (33.84%) रू0 1000 के तथा (26.47%) रू0 3000 के ऋणग्रस्त थे। स्पष्ट है दोनों जनपद के उत्तरदाता अधिकांश ऋणग्रस्त थे।

3.7 ऋणग्रस्तता का कारण : झाँसी के उत्तरदाता (50.00%) पुत्र-पुत्रियों के विवाह, (25.30%) रोग उपचार, (11.44%) प्रसूति व्यय इसी प्रकार जनपद ललितपुर के उत्तरदाता (50.00%) शादी विवाह के (25.00%) रोग उपचार कारण ऋणग्रस्त थे।

3.8 ब्याज का प्रतिशत : जनपद झाँसी के (40.96%) उत्तरदाता 15% प्रतिमाह और (9.03%) उत्तरदाता 15% से ऊपर ऋण ब्याज देते थे। यही स्थिति जनपद ललितपुर के उत्तरदाताओं की थी।

3.9 ऋणस्रोत : जनपद झाँसी के उत्तरदाता क्रमशः (28.91%) बैंक से, (9.03%) सरकार से, (22.59%) क्रेशर मालिकों से, (21.98%)

दुकानदारों से तथा (17.49%) सम्बन्धियों के कर्ज ग्रस्त थे। इसके विपरीत जनपद ललितपुर के उत्तरदाता (11.76%) बैंक से, (7.35%) सरकार से, (58.82%) क्रेशर मालिकों से, (8.84%) दुकानदारों से तथा (13.23%) सम्बन्धियों से कर्ज लेते थे।

4.0 क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की राजनैतिक स्थिति शोध के निष्कर्षः-

4.1 जनपद झाँसी के (72.89%) श्रमिकों के तथा जनपद ललितपुर के (60.29%) श्रमिकों के नाम वोटर लिस्टों में अंकित थे। तुलनात्मक रूप से ललितपुर के (12.60%) श्रमिकों के नाम वोटर लिस्ट में नहीं लिखें थे।

4.2 झाँसी जनपद के श्रमिकों (83.79%) तथा ललितपुर के श्रमिकों (72.05%) को अपना वोट डालने के अधिकार को व्यवहार में लाते थे, जो झाँसी की तुलना में (6.54%) कम था।

4.3 झाँसी के श्रमिक (76.80%) तथा ललितपुर के श्रमिक (66.17%) जो झाँसी की तुलना में (10.63%) कम था, अपना वोट स्वतंत्रता पूर्वक डाल सकते थे।

4.4 झाँसी के श्रमिक (85.03%) तथा ललितपुर के श्रमिक (79.41%) किसी भी राजनैतिक दल से सम्बन्ध नहीं रखते थे।

4.5 झाँसी जनपद के श्रमिक (83.43%) तथा ललितपुर के (77.94%) क्रेशर उद्योग के श्रमिक राजनैतिक दलों के साथ भागीदारी नहीं करते थे।

4.6 जिला ललितपुर के (63.23%) तथा झाँसी के (55.33%) श्रमिक अपने अधिकारों के प्रति सक्रिय नहीं थे।

4.7 झाँसी के श्रमिकों में (59.93%) तथा ललितपुर के श्रमिकों में (64.70%) महिला अधिकारों के प्रति जागरूकता नहीं थी।

4.8 झाँसी के क्रेशर उद्योग पर कार्यरत (73.33%) श्रमिक तथा ललितपुर के (82.35%) श्रमिक दवंगों द्वारा उत्पीड़न की रिपोर्ट पुलिस चौकियों पर नहीं करते थे।

4.9 झाँसी जनपद के (83.93%) श्रमिक तथा ललितपुर के (82.35%) श्रमिक अपने अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं थे।

5.0 <u>क्रेशर उद्योग का प्रभाव सम्बन्धी निष्कार्षा का विवरण :-</u>

(अ) श्रमिकों के स्वास्थ्य पर प्रभाव -

5.1 <u>कार्य से पूर्व स्वास्थ्य स्थिति :</u> क्रेशर उद्योग में कार्य करने से पूर्व झाँसी से सर्वाधिक 53% तथा ललितपुर के श्रमिकों का स्वास्थ्य 52.94% बुरा था।

5.2 <u>कार्य दशा पर प्रभाव :</u> क्रेशर श्रमिक कार्यदशाओं के बारे में जनपद झाँसी के सर्वाधिक 53% तथा ललितपुर के 50% उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी वर्तमान कार्यदशाऐं बुरी थी।

5.3 <u>पूर्व स्वास्थ्य स्थिति :</u> क्रेशर उद्योग के पूर्व झाँसी के सर्वाधिक 56.60% तथा जनपद ललितपुर के उत्तरदाता 50% ने बताया कि उनके स्वास्थ्य की स्थिति सामान्य थी।

5.4 श्रवण पर प्रभाव : क्रेशर की ध्वनि का कानों पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में झाँसी के 75.90% तथा ललितपुर के 76.47% उत्तरदाताओं ने बुरा प्रभाव पड़ना बताया।

5.5 <u>शरीर पर प्रभाव :</u> क्रेशर की धूल व ध्वनि के शरीर पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में जनपद झाँसी के उत्तादाताओं 34.24% ने तथा ललितपुर के श्रमिकों ने 44.11% अधिक पसीना आना प्रभाव बताया। झाँसी के 26.50% तथा ललितपुर के 13.23% ने चिढ़चिढ़हट में वृद्धि स्वीकार किया, झाँसी के उत्तरदाताओं 13.25% कार्यक्षमता में कमी का प्रभाव, 10.54% ने श्वसन

में बाधा, 7.53% ने हृदय गति में वृद्धि तथा 6.94% ने रक्तचाप में वृद्धि के प्रभाव को बताया इसके विपरीत ललितपुर के उत्तदाताओं 14.70% कार्यक्षमता में कमी, 11.76%) ने श्वसन में बाधा पड़ना, 8.82% ने हृदय गति में वृद्धि होना तथा 7.38% ने रक्तचाप में वृद्धि के प्रभाव पड़ने से स्वीकार किया।

5.6 दुर्घटनाऐं : क्रेशर उद्योग के कारण जनपद झाँसी के 70.19% ने दुर्घटनाओं, 23.19% ने फेफड़ों का कैंसर तथा 6.62% ने सर्पदंश की जोखिमों का उल्लेख किया। इसके विपरीत ललितपुर के उत्तरदाताओं 72.07% दुर्घटनाऐं, 19.11% ने फेफड़ों का कैंसर तथा 8.82% ने सर्पदंश की जोखिमों का होना बताया।

5.7 स्वास्थ्य समस्याऐं : जनपद झाँसी के उत्तरदाताओं 67.50% ने कोई स्वास्थ्य समस्या का उल्लेख नहीं किया जबकि 10.24% ने दमा, 5.72% ने क्षय, 5.12% ने खाँसी, 5.62% बहरापन, 5.12% ने उदर रोग तथा 0.68% ने श्वसनीय शोध स्वास्थ्य समस्याओं के होने का प्रभाव बताया इसके विपरीत ललितपुर के 58.82% ने भी किसी स्वास्थ्य समस्या होने को मना किया। जबकि 11.76% ने दमा, 8.84% ने क्षय, 5.88% ने खाँसी, 4.41% ने बहरापन, उदर रोग तथा 5.88% श्वसनीय शोध स्वास्थ्य समस्याओं का होना स्वीकार किया।

5.8 मनोवैज्ञानिक जोखिम : जनपद झाँसी के उत्तरदाताओं 60.05% ने असुरक्षा की भावना में वृद्धि होना, 15.36% ने रोजगार का अभाव, 10.93% ने भावात्मक तनाव तथा 8.66% ने, अस्थाई मानव सम्बन्ध मनोवैज्ञानिक जोखिमों के होने का प्रभाव स्वीकार किया। इसके विपरीत ललितपुर के श्रमिकों 63.23% ने असुरक्षा की भावना में वृद्धि, 10.70% ने

रोजगार का अभाव 11.76% ने भावात्मक तनाव तथा 10.31% ने अस्थाई मानव सम्बन्धी होने सम्बन्धी मनोवैज्ञानिक जोखिमों को क्रेशर उद्योग के प्रभाव का कारण होना स्वीकार किया।

5.9 <u>शारीरिक समस्याऐं :</u> जनपद झाँसी के उत्तरदाताओं में से 12.04% उत्तरदाताओं ने कन्धों में पीड़ा, 10.45% ने पीठ दर्द, 8.15% ने गर्दन में दर्द तथा 5.12% ने असमय वृद्धावस्था आना बताया इसके विपरीत 64.15% ने किसी शारीरिक समस्या को नहीं बताया। जनपद ललितपुर के उत्तरदाताओं मे से 13.24% ने कन्धों में दर्द, 11.76% ने पीठ दर्द, 7.35% ने गर्दन में दर्द तथा 5.89% ने असमयबुड़ापा आना बताया। इसके विपरीत 61.76% ने किसी शारीरिक रोग का न होना बताया।

(ब) पर्यावरण पर प्रभाव -

5.10 <u>वायु प्रदूषण :</u> झाँसी के उत्तरदाताओं 85.24%) ने तथा जनपद ललितपुर के उत्तरदाताओं ने भी 85.24%) ने क्रेशर की धूल का वायु पर बुरा प्रभाव को स्वीकारा।

5.11 <u>जल प्रदूषण :</u> झाँसी के सर्वाधिक 88.55% उत्तरदाताओं ने क्रेशर मिल से उड़ने वाली धूल से जल स्रोतों पर बुरा प्रभाव पड़ना बताया। इसी प्रकार ललितपुर के उत्तरदाताओं 79.41% ने भी क्रेशर धूल से पानी के स्रोतों को प्रदूषित होना बताया।

5.12 <u>ध्वनि का पक्षियों पर प्रभाव :</u> झाँसी के 75.60% उत्तरदाताओं ने तथा जनपद ललितपुर के 61.76% ने भी क्रेशर से होने वाली ध्वनि से पक्षियों पर बुरा प्रभाव पड़ना बताया।

5.13 धूल व ध्वनि का वनस्पति पर प्रभाव : झाँसी के 75.60% उत्तरदाताओं ने तथा ललितपुर के 80.88% उत्तरदाताओं ने क्रेशर की ध्वनि व धूल का वनस्पतियों पर बुरा प्रभाव स्वीकार किया।

5.14 समाज पर प्रभाव : जनपद झाँसी के 64.68% उत्तरदाताओं ने तथा जनपद ललितपुर के 64.64% उत्तरदाताओं ने क्रेशर उद्योग का समाज पर बुरा प्रभाव पड़ता है स्वीकार किया।

(स) भूमि पर प्रभाव -

5.15 भूमि पर प्रभाव : जनपद झाँसी के 90.36% तथा ललितपुर के 92.65% उत्तरदाता ने समान रूप से क्रेशर धूल व ध्वनि का भूमि पर बुरा प्रभाव पड़ना माना।

5.16 धूल-ध्वनि का फसल पर प्रभाव : जनपद झाँसी के 75.60% तथा ललितपुर के भी 77.95% उत्तरदाताओं ने क्रेशर धूल व ध्वनि का विलम्ब से फसल पकने को बताया।

5.17 उर्वरा शक्ति पर प्रभाव : जनपद झाँसी के 90.36% उत्तरदाताओं ने धूल का भूमि उर्वरा शक्ति पर बुरा प्रभाव पड़ना माना। इसके विपरीत ललितपुर के 92.65% उत्तरदाता ने 'सामान्य' प्रभाव बताया।

5.18 सिंचाई की आवश्यकता पर प्रभाव : जनपद झाँसी के 85.24%) तथा जनपद ललितपुर के 85.28%) उत्तरदाताओं की मान्यता थी कि क्रेशर मिल की धूल के कारण अन्य स्थान की सिंचाई आवश्यकता सामान्यतः अधिक करनी पड़ती है।

5.19 खाद्यों की आवश्यकता : जनपद झाँसी के 91.57%) व ललितपुर के 86. 76%) उत्तरदाताओं ने बताया कि क्रेशर मिल की धूल के कारण समीपवर्ती खैतों में अच्छी फसल लेने के लिए अधिक खाद्य का प्रयोग किया जाता है।

♣♣♣

ग्रन्थावली

✓ आई.एल.ओ. (1967) : ऐक्सीडेन्ट प्रीवेन्सन, ए वर्कस एजूकेशन मेनूआल जिनेवा .

✓ अग्रवाल भारत (1981): 'भारतीय समाज' अतीत से वर्तमान तक, मनमोहनदास पुस्तक मन्दिर प्रा.लि.भरतपुर (राज), पृष्ठ- 103

✓ अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन

✓ आगवर्न निमकाफ : सोशियोलाजी, पृष्ठ, 167

✓ एलहान्स, डी. एन. फण्डामेण्टल ऑफ स्टेटिसिटक्स, पृष्ठ-56

✓ करलिंगर, एफ.एन., दि फाउण्डेशन ऑफ विहेवियरल रिसर्च, रिनेहार्ट एण्ड विन्सन प्रेस हाल्ट, न्यूयार्क, 1964,पृष्ठ-4

✓ कोनोर, एल.आर.(1936) ए स्टैटिस्टिक्स इन थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस, पृष्ठ-18

✓ के. पार्क.(2002:40): सामुदायिक स्वास्थ्य विज्ञान (परिचारिकाओं के लिए) सूर्याआफसेट, नागपुर।

✓ कुमार आनन्द, (2000): 'नागरीक समाज शास्त्र' विमल प्रकाशन मन्दिर आगरा-3, पृष्ठ -303

✓ गुप्ता, एम,एन, (1961) स्वास्थ्य हिन्दू, 5,74, केन्द्रीय स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो न्यू दिल्ली।

✓ गार्वमेन्ट ऑफ इण्डिया (1965) : व्यवसायिक स्वास्थ्य मार्गदर्शिका

✓ गुप्ता, ए0के0 (1995:15) : 'स्टोन क्रेशर का श्रमिकों पर प्रभाव', एक लघु शोध महोबा, यू.पी. कबरई के विशेष सन्दर्भ में।

✓ गुप्ता एम.एल. एवं शर्मा डी.डी.,(2000):समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा-3, पेज -119

✓ गिलटर : सोसल डाथनेमिक्स

✓ घोष, एम. के. तथा चतुर्वेदी, एस. सी. (1950) स्टेटिक्स थ्योरी एण्ड प्रक्टिस पृष्ठ-94

✓ घोस, पी0के0 (1969) : भारतीय उद्योग।

✓ जहोडा डच एण्ड डब्लू रिसर्च मैथड इन सोसल इनवेस्टीगेशन पृष्ठ-270

✓ जिसवर्ट : फन्डामेन्टल आफ सोशियोलाजी, पृष्ठ -306

✓ जे0 ई0 पार्क (2005: 35) : प्रिविन्टिस सोसल मेडीसिन, 20 वां संस्करण मैसर्स बनारसीदास पबलीसर, 1167 प्रेमनगर रोड जबलपुर, 482001 .

✓ डॉ0 अनवर इकवाल कुरेशी (1996:37) :'कोयला खान श्रमिक धनवाद' दरभंगा, पवलीकेशन, दरभंगा बिहार।

✓ डब्लू.एच.ओ. (1962) हेल्थ हेजार्डस आफ द हूमन इन वायरनमेंट, जिनेवा.

✓ तिलेरा,के.एस.(1990): प्रक्टीकल सोशियोलाजी, प्राबलम्स एण्ड सोसल एक्टस प्रकाशन केन्द्र लखनऊ, पृष्ठ-132

✓ थकर, पी.वी. (1967): जन स्वास्थ्य समिति पूना.

✓ पालमार, वी.एम.(1928)फील्ड स्टडी इन सोशियोलोजी,पृष्ठ-170

- ✓ प्लेवेन केयर.
- ✓ पी. वी. यंग (1960): साईन्टीफिक सोसल सर्वे एण्ड रिसर्च, एसिया पवलिसिंग हाऊस, बोम्बे,पृष्ठ -309
- ✓ प्रो. सिंह, एस.डी. (1997:21) : 'खदानों के श्रमिकों की समस्याऐं' सरस्वती पवलीकेशन शिकोहाबाद,मैनपुरी,यूपी.
- ✓ प्रो.गुप्ता एवं शर्मा (1998:197): समाज शास्त्र : प्रस्थिति एवं भूमिका, साहित्य भवन पवलीकेशन, आगरा
- ✓ बेसिन, एफ.एच. (1962): व्यवहारिक विज्ञानों में साहित्य समीक्षाऐं, मैकमिलन कम्पनी (प्रा.लि.) मद्रास,पृष्ठ-40
- ✓ बेनचू, एन0एन0 (1969) : 'स्वास्थ्य हिन्दू' 13,90
- ✓ बनर्जी, वी.एण्ड चक्रवर्ती, एस (1969) : इन्डियन जर्नल आफ इन्डस्ट्रीयल हेल्थ, 15,85
- ✓ भारतीय श्रम संघ सशोधित अधिनियम, 1982
- ✓ मार्क्स कार्ल एण्ड ऐन्जिल (1848): डेसकेपीट , पृष्ठ-320
- ✓ मुखर्जी, आर.एन.(2001), अष्टम संस्करण, सामाजिक शोध व सांख्यिकी, मातृ आशीष तिलक कालोनी, सुभाष नगर,बरेली, पृष्ठ-1
- ✓ मेनडोनका, लोवो (1970) : द एन्टीसेप्टिक नामक पत्रिका, दिल्ली ,67,455.
- ✓ मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट -1996
- ✓ मिश्रा पी.के. (1997) : मानव समाज की रूपरेखा विकास पबलीकेशन, जवाहर नगर, न्यू दिल्ली, पेज -37
- ✓ यंग, पी.वी. (1960): साईन्टीफिक सोसल सर्वे एण्ड रिसर्च, एसिया पवलिसिंग हाऊस, बोम्बे,पृष्ठ -509
- ✓ रोवर्ट, इ. चन्ढोक (1925) प्रन्शीपल एण्ड मैथड ऑफ स्टेटिक्स, होगटन मिफिन कम्पनी वोस्टन पृष्ठ-43
- ✓ रयूटर एम.आर. एण्ड हार्ट पी.आर.,(1960), एन इन्ट्रोडक्शन टू सोसलोजी, मेक,ग्रो हील बुक कम्पनी, न्यूयार्क पृ.320
- ✓ लावानिया एस.एम.(1967), इण्डियन सोसल प्रोब्लम, कृष्णा बुक स्टोर प्रकाशन, शिकोहाबाद उ.प्र. पृष्ठ-203
- ✓ विलियम, जे.गुड एण्ड पौल, के हाट (1952) मैथड इन सोसल रिसर्च मैकग्रोहिल बुक कम्पनी न्यूयार्क पृष्ठ-15
- ✓ वोर्ग, जी.वी. (1963): सामाजिक विज्ञानों के अनुसंधानों में साहित्य का सिंहावलोकन, जैन ब्रदर्स एण्ड संस पवलीसर्स एण्ड डिस्ट्री ब्यूटरस बाम्बे, पृष्ठ-48
- ✓ वायट, जे0पी0 (1971) : अमेरिकन जर्नल , पैथोलोजी, 64, 197.
- ✓ विट्रिस श्रम संघ अधिनियम, 1953
- ✓ सक्सेना, एम.सी. (1996:5): श्रम समस्याऐं एवं सामाजिक सुरक्षा रस्तोगी पवलीकेशन, शिवाजी रोड, मेरठ

- सैगरः उद्धृत द्वारा सक्सेना, एस.सी. (1996:50): श्रम समस्याएँ एवं सामाजिक सुरक्षा, रस्तोगी पब्लिकेशन, शिवाजी नगर मेरठ।
- सर्वश्री स्टॉउफर सेम्युल रिव्यू (1962:73): ए मैजर स्टैप आफ इन्वेस्टीगेशन इन सोसल साइन्सेज,अमेरिकन सोशियोलोजीकल रिव्यू अंक 23, पृष्ठ-73
- सी.वी. एण्ड राव, एम.एन.(1961)'स्वास्थ्य हिन्द' 5,81,सी.एच.ई.वी. न्यू दिल्ली।
- सेन, जे.आर. (1968) : भारतीय उद्योग चिकित्सा जर्नल,14, 186
- सुभाषचन्द्र, शुक्ल (2000:77) : 'महोबा में क्रेशर उद्योग के आर्थिक तात्पर्य' सुभाषप्रेस, महोबा।
- श्री सतेन्द्र (1992:49)
- समनर : द फोरगेटिंग मैन एण्ड ऐसेज, पृष्ठ -253
- सोसाइटी एज.ए नेट वर्क आफ स्टेटस. आर. बेरस्टेड, 'द सोसल आर्डर' पेज-211
- होरेश, सैक्रिष्ट सोसल सर्वे एण्ड रिसर्च, पृष्ठ-273
- त्रिपाठी, सतीश कुमार (2000:45) : महोबा जनपद में स्टोन क्रेशर उद्योग और पर्यावरण प्रदूषण, सिहाव लोकन, सुभाष प्रेस, महोबा।
- Bodington,Statiatics and its application to commerce, P-140
- C.A. Moser, Survey Methods in social Investigation, Hieneman, London, 1961. p-3
- Frank yaton
- Hansraj – Theory and Practice in social Research, p-69
- K. L. Ackoff, Design of Social Research, p-5
- Pauline V. Young, Scientific Social survey & research, Asia Publishing House, Bombay,1960,p-44
- Society for social Medicines (1966): Evidences submitted to the Royal common social medical Education, Beit, Pre. Soc. Medi, 20,158
- Seltiz, Jahoda, Dautach, cook-Research Methods in social Relations, p-33
- Singh, S.D., (1980), Vaigyanik Samajik Anusandhan Avan Aarvekahan Ke Mool Tatva, Kamal Prakashan, Indoure (M.P.) Page-59.
- William J.Goode &Poul K.Hatt (1952), Methods in social Research, Mac Graw-Hill Book co.Inc.NewYork, p 209

♣♣♣

क्रेशर उद्योग में कार्यरत श्रमिकों के सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का अध्ययन

(झाँसी एवं ललितपुर की खदानों पर आधारित)

अनुसूची संख्या..........................

1.1 उत्तरदाता का नाम..

1.2 पिता का नाम...

1.3 गांव का नाम...

1.4 आयु : 11–15 ☐ 16–20 ☐ 21–25 ☐ 26–30 ☐
31–35 ☐ 36–40 ☐ 41–45 ☐ 46–50 ☐ >50 ☐

1.5 लिंग : पुरूष ☐ स्त्री ☐

1.6 जाति : सवर्ण ☐ ओ0बी0सी ☐ अनु0जाति ☐

1.7 धर्म : हिन्दू ☐ मुसलिम ☐

1.8 परिवार का स्वरूप : एकांकी ☐ संयुक्त ☐

1.9 वैवाहिक स्थिति : विवाहित ☐ अविवाहित ☐ विधवा ☐ विधुर ☐
तलाक ☐

1.10 विवाह का स्वरूप : बाल विवाह ☐ विधवा ☐ प्रेम विवाह ☐ पुर्नविवाह ☐
बेमेल विवाह ☐

1.11 आवास : झोपड़ी ☐ कच्चा ☐ पक्का ☐

1.12 लड़कों की शादी की आयु : 15 वर्ष ☐ 18 वर्ष ☐ 21 वर्ष ☐ >21 वर्ष ☐

1.13 लड़कियों की शादी की आयु : 15 वर्ष ☐ 18 वर्ष ☐ 21 वर्ष ☐ >21 वर्ष ☐

2.0 क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की सामाजिक स्थिति सम्बन्धी प्रश्न :

2.14 आपके आवास में निम्न में से कौन सी सुविधाऐं उपलब्ध हैं?

1. विद्युत आपूर्ति हाँ ☐ नहीं ☐
2. कमरों की संख्या हाँ ☐ नहीं ☐
3. आंगन हाँ ☐ नहीं ☐
4. शौचालय हाँ ☐ नहीं ☐
5. भोजनालय हाँ ☐ नहीं ☐
6. स्नानग्रह हाँ ☐ नहीं ☐

2.15 आप कैसे कपड़े पहिनते है? हाँ नहीं

1. ठेले वाले ☐ ☐

2. नये ☐ ☐

3. प्रयोग किए हुऐ ☐ ☐

2.16 आप निम्न में से किसके सदस्य है? हाँ नहीं

1. संस्था के ☐ ☐

2. समिति के ☐ ☐

3. संघ के ☐ ☐

4. पंचायत के ☐ ☐

5. किसी के नहीं ☐ ☐

2.17 सामाजिक समस्याओं के हल/समारोह में क्या आपको पूँछा जाता है?

☐ ☐

2.18 क्या आपको निम्न कार्यों की स्वतंत्रता हैं?

1. कार्य करने की स्वतंत्रता ☐ ☐

2. अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता ☐ ☐

3. न्याय की स्वतंत्रता ☐ ☐

2.19 आपने निम्न में से कौन सामाजिक सुरक्षा के उपाय किए हैं?

1. बीमा ☐ ☐

2. मासिक बचत ☐ ☐

3. मासिक आय योजना ☐ ☐

2.20 आपके रहन–सहन के निम्न दशाऐं कैसी हैं? सन्तुष्ट असन्तुष्ट

1. पोषण स्थिति ☐ ☐

2. कार्य दशाऐं ☐ ☐

3. वैवाहिक जीवन ☐ ☐

2.21 निम्न में से आपको कौन सी जीवन गुणवत्ता अनुभव करते हो?

1. आराम की ☐ ☐

2. प्रसन्नता की ☐ ☐

3. स्वास्थ्य की ☐ ☐

2.22 आपके पास निम्न में से किस साधन से मनोरंजन करते हो?

1. रेडियों ☐ 2. टी0वी0 ☐ 3. सिनेमा ☐ 4. कोई नहीं ☐

2.23 आप किस सूचना स्रोत का प्रयोग करते हो?

1. रेडियों ☐ 2. नेता ☐ 3. टी.वी. ☐ 4. नाई ☐

5. समाचार पत्र ☐ 6. सरकारी तंत्र ☐ 7. पत्रिका ☐ 8. अन्य ☐

2.24 आपके पास निम्न में से आवागमन का कौन सा साधन है?

1. साईकिल ☐ 2. स्कूटर ☐ 3. लूना विक्की ☐ 4. टी.वी.एस. ☐
5. कुछ नहीं ☐

2.25 क्रेशर मालिकों का आपके साथ कैसा व्यवहार रहता है?

	हाँ	नहीं
1. घर के मुखिया जैसा	☐	☐
2. मजदूरों जैसा	☐	☐
3. सामान्य व्यवहार	☐	☐
4. शोषण का	☐	☐

3.0 क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति सम्बन्धी प्रश्न :

3.26 आपको दैनिक कितनी मजदूरी मिलती हैं?

रू. 35 ☐ रू. 40 ☐ रू. 50 ☐ रू. 55 ☐ रू. 60 ☐ रू. 65 ☐

3.27 अन्य आय के स्रोतों से आय – रू. ☐

3.28 क्रेशर उद्योग में आपको कितने दिन काम मिलता है?

8 दिन ☐ 10 दिन ☐ 15 दिन ☐ >15 दिन ☐

3.29 आप दिन में कितने घन्टे क्रेशर उद्योग में काम करते हैं?

6 घन्टे ☐ 8 घन्टे ☐ 10 घन्टे ☐ 12 घन्टे ☐ 14 घन्टे ☐

3.30 आपकी वेतन अदायगी का क्या स्वरूप है?

साप्ताहिक ☐ पाक्षिक ☐ मासिक ☐

3.31 आप कितनी भूमि के मालिक हो?

1–2 एकड़ ☐ 2–3 एकड़ ☐ 3–4 एकड़ ☐ 4–5 एकड़ ☐
> 5 एकड़ ☐ कुछ नहीं ☐

3.32 भूमि आपके पास किस स्वरूप की है?

स्वयं की ☐ वटाई की ☐ वटाई पर दी गई ☐

3.33 आप किस के वर्तमान में ऋृणी है?

बैंक के ☐ सरकार के ☐ क्रेशर मिल के ☐ दुकानदार के ☐ सम्बन्धी के ☐

3.34 आप कितने रूपयों के ऋृणी है?

रू. 1000 ☐ रू. 2000 ☐ रू. 3000 ☐ रू. 4000 ☐

3.35 ऋृण के लिए कितने प्रतिशत ब्याज देना पड़ता है?

5% ☐ 10% ☐ 15% ☐ >15% ☐

3.36 आपकी ऋणग्रस्ता के क्या कारण हैं?

1. पुत्र/पुत्री विवाह ☐ 2. मृत्युभोज ☐ 3. रोग उपचार ☐ 4. प्रसूति ☐
5. अन्य ☐

4.0 क्रेशर उद्योग के श्रमिकों की राजनैतिक स्थिति सम्बन्धी प्रश्न :–	हाँ	नहीं
4.37 क्या वोटर लिस्ट में आपका नाम है?	☐	☐
4.38 क्या वोट डालना आपका अधिकार है?	☐	☐
4.39 क्या आप स्वतंत्रता से वोट डालते हो?	☐	☐
4.40 क्या आप किसी पार्टी से जुड़े हो?	☐	☐
4.41 क्या आप राजनीति में भागीदार बनते हो?	☐	☐
4.42 क्या आप अपने अधिकारों के लिए सक्रिय है?	☐	☐
4.43 क्या आप महिला अधिकारों के लिए जागरूक हैं?	☐	☐
4.44 दवंगों के दवावों/लड़ाई–झगड़े की सूचना पुलिस को देते हो?	☐	☐
4.45 क्या महिलाओं को सम्पत्ति में अधिकार प्राप्त है?	☐	☐

5.0 (अ) क्रेशर उद्योग का श्रमिकों के स्वास्थ्य–पर्यावरण तथा कृषि पर प्रभाव सम्बन्धी प्रश्न :–

5.46 क्रेशर उद्योग में काम करते समय कैसा महसूस करते हो?

अच्छा ☐ बुरा ☐ सामान्य ☐

5.47 क्रेशर उद्योग में कार्य करने समय आपकी मनोवैज्ञानिक अनुभूति कैसी होती है?

अच्छा ☐ बुरा ☐ सामान्य ☐

5.48 जब आप यहाँ काम पर आये तो आपका स्वास्थ्य कैसा था?

अच्छा ☐ बुरा ☐ सामान्य ☐

5.49 क्रेशर की ध्वनि से आपके कानों पर किस तरह का कुभाव पड़ा है?

अच्छा ☐ बुरा ☐ सामान्य ☐

5.50 क्रेशर की ध्वनि प्रदूषण से आपके शरीर पर कौन सा कुप्रभाव हुआ है?

	हाँ	नहीं
1. शारीरिक परिवर्तन		
(अ) रक्त चाप में वृद्धि	☐	☐
(ब) हृदय गति में वृद्धि	☐	☐
(स) श्वसन गति बाधा	☐	☐
(द) पसीना अधिक आना	☐	☐
2. कार्य क्षमता में कमी	☐	☐
3. चिढ़चिढ़ाहट में वृद्धि	☐	☐

5.51 क्रेशर उद्योग से निम्न में से कौन सी जोखिमों में वृद्धि देखी जाती है?

1. दुर्घटना की ☐ ☐
2. सर्पदंश की ☐ ☐
3. फुफ्फुस कैंसर की ☐ ☐

5.52 वर्तमान में आपको निम्न में से कौन सी स्वास्थ्य समस्याऐं है?

1. दमा ☐ ☐
2. क्षय ☐ ☐
3. कफ ☐ ☐
4. खाँसी ☐ ☐
5. ज्वर त्वचाशोध डरमी टाइटिस ☐ ☐
6. बहरापन ☐ ☐
7. कोई नहीं ☐ ☐

5.53 क्या क्रेशर उद्योग श्रमिकों में निम्न में से कौन सी मनोवैज्ञानिक जोखिमों को जन्म देती है?

1. असुरक्षा की भावना में वृद्धि ☐ ☐
2. भावात्मक तनाव ☐ ☐
3. अस्थाई मानव सम्बन्ध ☐ ☐
4. रोजगार का अभाव ☐ ☐

5.54 क्या क्रेशर उद्योग श्रमिकों में निम्न में से किस की जोखिम उत्पन्न करती है?

1. असमय वृद्धावस्था ☐ ☐
2. कन्धों में दर्द ☐ ☐
3. पीठ में दर्द ☐ ☐
4. गर्दन में दर्द ☐ ☐
5. कुछ नहीं ☐ ☐

5.0 (ब) क्रेशर उद्योग का पर्यावरण पर प्रभाव सम्बन्धी प्रश्न :–

	अच्छा	बुरा	सामान्य
5.55 क्रेशर की धूल का वायु पर कैसा प्रभाव पड़ता है?	☐	☐	☐
5.56 क्रेशर की धूल का जल स्रोतों पर कैसा प्रभाव पड़ता है?	☐	☐	☐
5.57 क्रेशर ध्वनि का पक्षियों पर कैसा प्रभाव पड़ता है?	☐	☐	☐
5.58 क्रेशर धूल–ध्वनि का वनस्पति पर कैसा प्रभाव पड़ता है?	☐	☐	☐
5.59 क्रेशर उद्योग का समाज पर कैसा प्रभाव पड़ता है?	☐	☐	☐

5.60 क्रेशर से निकलने वाली धूल व ध्वनि से भूमि पर कैसा प्रभाव पड़ता है?	☐	☐	☐
5.61 फसल के उगने पर कैसा प्रभाव पड़ता है?	☐	☐	☐
5.62 फसल के पकने में कैसा प्रभाव पड़ता है?	☐	☐	☐
5.63 भूमि की उर्वरा शक्ति पर कैसा प्रभाव पड़ता है?	☐	☐	☐
5.64 फसल को सिंचाई की कितनी आवश्यकता पड़ती है?	☐	☐	☐
5.65 भूमि को उर्वरकों खाद्यों की कितनी आवश्यकता पड़ती है?	☐	☐	☐

अन्वेषक

दिनांक :.......................................

स्थान :..............................

(बुद्धप्रिय सिद्धार्थ)